श्रद्धा के दो शब्द

मानव जीवन के विकास सम्बन्धी इतिहास पर यदि दृष्टिपात किया जाय तो यह स्पष्ट होगा कि मानव निरन्तर व्यक्ति एव समूह के जीवन की विषमताओं से सघर्ष करता आया है, एव समता की साधना म निरत रहा है। इस सघर्ष की अब तक जितनी सफलता मिली है उसके प्रवाह मे कई व्यक्तित्व भी आदर्श एव समादरणीय बनते रहे है। विषमताओं से सघर्ष का उद्देश्य रहा है अधिकाधिक सम-वातावरण एव सम प्रगति माग का निर्माण। विषमता से सन्ताप जन्म लेता है और यही सन्ताप आर्तध्यान एव रौद्रध्यान की मलिन धाराओ में आत्मा को ढकेलता हुआ उसे अधोगामी बनाता है। इसलिए समता की ओर अग्रसर होने की चेष्टा जीवन को कु से सु की ओर गतिशील बनाने की चेष्टा कहलायेगी।

समता मानव जीवन की अमृतमयी भावना है क्योंकि यही भावना जब काय एव आचरण के रूप मे उभरती है तो व्यक्ति के जीवन मे उदात्तता सहनशीलता एव सत्प्रेरणा जागृत होती है। व्यक्ति की ऐसी जीवनधारा जब सम्यक्त्व की श्रेष्ठता की ओर उन्मुख होती है तो वह निश्चय ही सारे समाज की विचार एव आचार की धाराओ को भी प्रभावित किए बिना नही रहती। पूज्य आचार्य श्री नानालाल जी म सा के प्रस्तुत सकलन मे आबद्ध प्रवचन इसी प्रकाशमयी दिशा की ओर मानव जीवन को अनुप्रेरित करते है।

एक साधक और आचार्य श्री जसे प्रबुद्ध एव कमठ साधक जब अपने ज्ञानानुभव के आधार पर प्रवचन प्रवाह से जो माग दशन देते हैं वह अतर भाव की दृष्टि से एक उन्नायक वशिष्ट्य लिए हुए होता है। उसे हृदयगम करना और उसमे अपने आचरण को ढाल देना एक सच्चे भक्त का काम होता है। समता-दर्शन पर आधारित ये प्रवचन ससार एव उसमे साधारण रूप से चल रहे जीवन की कुटिल विषमताओं को गहरी दृष्टि से समझाकर उन्हें दूर करते हुए समतामय जीवन निर्माण की एक नई दिशा देते हैं। पाठक यदि इस सकलन को आत्म जागृति के साथ एव अनुभूतिपूर्वक पढ़ेंगे

अनुक्रमणिका

श्रद्धा के दो शब्द

मानव जीवन के विकास सम्बन्धी इतिहास पर यदि दृष्टिपात किया जाय तो यह स्पष्ट होगा कि मानव निरन्तर व्यक्ति एवं समूह के जीवन की विषमताओं से संघर्ष करता आया है, एवं समता की साधना में निरत रहा है। इस संघर्ष को अब तक जितनी सफलता मिली है इसके प्रकाश में कई व्यक्तित्व भी आदर्श एवं समादरणीय बनते रहे हैं। विषमताओं से संघर्ष का उद्देश्य रहा है अधिकाधिक सम-वातावरण एवं सम प्रगतिमार्ग का निर्माण। विषमता से सन्ताप जन्म लेता है और यही सन्ताप आर्तध्यान एवं रौद्रध्यान की मलिन धाराओं में आत्मा को धकेलता हुआ उसे अधोगामी बनाता है। इसलिए समता की ओर अग्रसर होने की चेष्टा जीवन को कुंसे सुं की ओर गतिशील बनाने की चेष्टा कहलायेगी।

समता मानव जीवन की अमृतमयी भावना है क्योंकि यही भावना जब कार्य एवं आचरण के रूप में उभरती है तो व्यक्ति के जीवन में उदात्तता, सहनशीलता एवं सत्प्रेरणा जागृत होती है। व्यक्ति की ऐसी जीवनधारा जब सम्यक्त्व की श्रेष्ठता की ओर उन्मुख होती है तो वह निश्चय ही सारे समाज की विचार एवं आचार की धाराओं को भी प्रभावित किए बिना नहीं रहती। पूज्य आचार्य श्री नानालाल जी म. सा. के प्रस्तुत संकलन में आबद्ध प्रवचन इसी प्रकाशमयी दिशा की ओर मानव जीवन को अनुप्रेरित करते हैं।

एक साधक और आचार्य श्री जैसे प्रबुद्ध एवं कर्मठ साधक जब अपने ज्ञानानुभव के आधार पर प्रवचन प्रवाह से जो मार्ग दर्शन देते हैं वह अन्तर भाव की दृष्टि से एक उन्नायक वैशिष्ट्य लिए हुए होता है। उसे हृदयगम करना और उसमें अपने आचरण को ढाल देना एक सच्चे भक्त का काम होता है। समता-दर्शन पर आधारित ये प्रवचन संसार एवं उसमें साधारण रूप से चल रहे जीवन की कुटिल विषमताओं को गहरी दृष्टि से समझाकर उन्हें दूर करते हुए समतामय जीवन निर्माण की एक नई दिशा देते हैं। पाठक यदि इस संकलन को आत्म जागृति के साथ एवं अनुभूतिपूर्वक पढ़ेंगे

तो अवश्य ही उन्हें अपने समग्र जीवन को उत्कृष्ट, भावना के प्रवाह में परिवर्तित करने की अनूठी प्रेरणा प्राप्त होगी।

वचन प्रवचन तभी बनते हैं जब वे प्रबुद्ध जनों की शास्त्र सम्मत विचारणा से उभर कर उनकी अपनी मौलिक निष्ठा को छूते हुए निकलते हैं। यही कारण है कि प्रवचन भावनाशील श्रोता अथवा पाठक के हृदय को सीधे तौर पर संवेदित करते हैं। इसके साथ ही यदि उसकी भावना ने प्रवचन के प्रवाह में समग्र रूप से अवगाहन किया तो वह श्रोता या पाठक कमठ बनकर स्वयं एवं समूह दोनों के जीवन में आदर्श उत्थान की प्रेरणा फूंकता है। प्रस्तुत संकलन के प्रवचन उत्थान की इसी दिशा को प्रकाशित करते हैं।

उपदेष्टा जब उपदेश देते हैं तो जिस भाव भाषा एवं शैली का प्रयोग करते हैं—उसका अभिप्राय यही होता है कि वे श्रोता के हृदय को स्पंदित करें। उपदेष्टा के प्रत्यक्ष दर्शन एवं श्रवण का जो सीधा सुप्रभाव होता है उसे उस प्रवचन की सम्पादित लिपिबद्धता में बनाए रखना सरल नहीं होता फिर भी प्रयास उसकी श्रेष्ठता मौलिकता के निर्वाह की तरफ ही होना चाहिए। इस संकलन को व्यवस्थित रूप देने में श्री शांतिमुनि जी ने कठिन श्रम किया है वह इस दृष्टि से साधक रहा है तथा यह संकलन पाठकों के लिए सुबोध पठनीय एवं प्रेरणादायक बन पड़ा है।

मुझे विश्वास है कि समतादर्शन की गहराइयों को समझने एवं उनमें अपनी अनुभूति को क्रियाशील दृष्टि से जागृत करने में इस संकलन से पाठक अवश्य उपकृत होंगे।

—शान्ति चन्द्र मेहता
एम ए एल एल बी एडवोकेट
प्रधान सम्पादक नवकार मासिक
एवं अध्यक्ष अभिभावक संघ चित्तौड़गढ़ राज०

जयपुर
दि० २६ ६ १९७२

प्रकाशकीय

श्रद्धेय जैनाचार्य श्री नानालाल जी म. सा. श्रमण परम्परा के एक उन्नत साधक तो हैं ही किन्तु जन समाज के एक जाज्वल्यमान नक्षत्र भी हैं। सांसारिक वासनाओं के पंक से जिनके चरण प्रारम्भ से ही तनिक भी मलिन नहीं हुए हैं तथा जिन्होंने अपने जीवन का श्री गणेश ही आत्मिक साधना से किया है ऐसे इन आचार्य श्री की प्रतिभा एवं इनका प्रभाव अनुपम है। आचार्य श्री बाल ब्रह्मचारी हैं एवं इन्होंने अपने दीर्घ दीक्षा काल में महान् धर्म-यश का अर्जन किया है। समूचे साधु समाज के लिये आप एक अतुलनीय आदर्श हैं। वीतराग वाणी के आप प्रखर प्रवक्ता हैं तथा इनका एक-एक वचन आत्म ज्ञान की दृष्टि से सर्वजन हिताय सर्वजन सुखाय के लक्ष्य से युक्त होता है। ऐसे महापुरुष का चातुर्मास जयपुर में सम्भव हो सका यह हम सबके लिये सौभाग्य की बात है।

आचार्य श्री के इन्हीं विचारपूर्ण प्रवचनों के व्यापक प्रसार की दृष्टि से इसी हेतु निर्मित प्रवचन प्रकाशन समिति ने इनके क्रमबद्ध प्रकाशन की योजना बनाई और उसी के कार्य रूप में यह प्रथम संकलन प्रस्तुत है। इस शृंखला में पावस प्रवचन के शीर्षक से ही सात संकलन और प्रकाशित किये जायेंगे जिनमें चातुर्मास के समस्त प्रवचनों का सम्पादित रूप समुपस्थित हो जायगा। इस रूप में जयपुर चातुर्मास की यह सुखद स्मृति भी रहेगी।

सूक्ष्म विवेक आचार्य श्री के जीवन की प्रमुख विशेषता है तथा उनका प्रत्येक प्रवचन साधु मर्यादा एवं शास्त्राज्ञा की सीमा में आबद्ध होता है। अपने नपे तुले शब्दों में वे उपदेश देते हैं जिसका एक मात्र उद्देश्य आत्म जागृति होता है। उनके इन उपदेशों के प्रकाशन या मुद्रण से उनका कोई सम्बन्ध नहीं है अतः इस पावस प्रवचन माला में कोई भी शब्द या वाक्य सदोष आ गया हो अथवा मूल भावों में कोई अन्तर दिखाई दे तो उसके लिये हम ही उत्तरदायी हैं, क्योंकि ऐसी भूल हमारे से ही प्रमाद वश संभव है। गुरुदेव का कार्य तो प्रवचन देना मात्र है। उनके प्रकाशन मुद्रण एवं प्रसार

। समस्त व्यवस्था हमारी अपनी है। जिनकी सूचों को स्वीकार करना भी
म अपना कर्तव्य समझते हैं।

उपयुक्त प्रवचन माला को व्यवस्थित रूप देने में आचार्य श्री के सुशिष्य श्री शान्ति मुनि जी महाराज के योगदान को भुलाया नहीं जा सकता आपने इन प्रवचनों का अवलोकन करके हमारे इस कार्य को सुगम बनाया है इसके लिये समिति उनकी कृतज्ञ है। इसके अतिरिक्त जो प्रमुख रूप से सर्व श्री ज्ञानचन्द जी व महेन्द्र जी मालावत चेरिटेबल की बरना प्रेमराजजी बोथरा व श्रीचन्द जी सुराणा ान तन श्री सुगनचन्द श्री नाहर सुगनीचन्द जी सावधानी आदि महानुभावों ने अपना जो भावनापूर्ण सहयोग दिया है तथा श्रीविष्णु प्रिंटिंग प्रेस के मालिक श्री रामनारायण जी मेडतवाल ने बड़ी तत्परता के साथ सुन्दर मुद्रण कर समय पर कार्य सम्पन्न किया। तदर्थ हम उनके प्रति भी अपना आभार प्रदर्शित करते हैं।

यदि समग्र समाज ने इन प्रकाशनों को पसन्द किया तथा विज्ञ पाठकों ने इनको पढ़कर अपना कर्तव्य बोध लिया तो हम अपने इस प्रयास को सार्थक समझेंगे।

प्रस्तुत संकलन की शृंखला में आगे भी इस चातुर्मास में आचार्य श्री द्वारा दिये गये समस्त प्रवचनों का पावस प्रवचन के नाम से विभिन्न भागों में प्रकाशित करने की प्रवचन प्रकाशन समिति की योजना है। इस रूप में जयपुर चातुर्मास की पवित्र स्मृति तो रहेगी ही किन्तु यह एक महत्वपूर्ण उपलब्धि भी होगी। आशा है कि सभी सहृदय सज्जनों का सहयोग मिलता रहेगा।

विनीत
पारसमल झाग
संयोजक एव प्रबन्ध सपाद
प्रवचन प्रकाशन समि

जयपुर
लाल भवन
४ १० ७२

[illegible]

श्री १००८ नानालालजी

महाराज साहब

के

सफल चातुर्मास

से

धर्म-ध्यान प्रभावना

हम सबकी आत्म जागृति में

सहायक हो

श्री अखिल भारतीय

साधुमार्गी जैन सघ

बीकानेर

वह विभिन्न प्रकार की खोजो म लगा हुआ है। वह चाहता यही है कि इस मानव जीवन से परम शान्ति का स्वरूप, परम पवित्र रूप, वास्तविक सुख का स्थान उपलब्ध हो। इस आकांक्षा से व्यक्ति अपना रास्ता स्वत बनाता जाता है। अपने मन की कल्पना के अनुसार वह खोज म लगता है। जब उसे ज्ञात होता है कि अमुक स्थल पर कुछ उस उपलब्धि होन वाली है तो वहाँ जाने म भी वह संकोच नही करता है चाह वह समुद्र की गहराई मे हो, चाह वह पहाडो की विकट ऊँचाई मे हो चाहे भयावना जगल हो, लेकिन मानव उस उपलब्धि क लिए अपनी सारी चिंताए छोडकर आगे बढता ही जाता है।

आज का युग वैज्ञानिक युग है। विज्ञान प्रगति कर रहा है किन्तु यह प्रगति अधूरी है क्योकि इस वैज्ञानिक स्थिति के साथ म मानव का मस्तिष्क विज्ञान हो का सब कुछ समझकर चल रहा है। विज्ञान के विषय म यदि विस्तृत व्याख्या की जाय तो किसी के मतभेद का प्रश्न ही नही आता। विज्ञान के अन्दर सब तत्वो का समावेश है, विज्ञान के अन्दर सब का समन्वय है। यदि विज्ञान के अर्थ को सकुचित किया जाय और सिर्फ भौतिक तत्वो के विकास को ही विज्ञान कहा जाय तो वह विवाद का विषय बन जाता है क्योंकि विज्ञान भौतिक तत्वो का भी होता है और आध्यात्मिक जीवन के साथ भी उसका गहरा सम्बन्ध है। एक दृष्टि से आध्यात्मिक जीवन से ही विज्ञान का प्रादुर्भाव होता है। लेकिन मानव का मस्तिष्क अन्तर की उस आध्यात्मिक शक्ति को लक्ष्य बनाने म अभी तक पूरा कामयाब नही बन रहा है। यही कारण है कि वह बाहरी पदार्थो मे सुख शान्ति को खोज रहा है। इस प्रकार विज्ञान की अनेको उपलब्धियाँ होने पर भी मानव को अभी तक सन्तुष्टि नही मिल रही है शान्ति और समता के दर्शन पूर्ण रूप से नहीं हो रहे हैं। मानव तथाकथित उपलब्धि से सन्तुष्ट है लेकिन वस्तुत यह स्थिति दिन प्रति दिन

उसके जीवन को विषमतर बनाती चली जा रही है। वह चाहे भू मण्डल से उठ कर गगनमण्डल में उड़ने के लिए, चाहे आकाश के अन्दर चमचमाते हुए सितारों को पकड़ने के लिए दौड़े चाहे तथा कथित चाँद आदि ग्रहों पर पहुँच जाय, लेकिन वहां पर भी वह वास्तविक शांति का स्वरूप, परमपवित्र रूप उपलब्ध होने वाला नहीं है। एक दृष्टि से देखा जाय तो यह खोज एकांगी बन रही है, उस एकांगी खोज को माइडेनर सर्वांगीण खोज के साथ अगर जोड़ा जाय तो मानव-जीवन की तमाम समस्याएँ एक समता के धरातल पर सुलझ सकती हैं।

अभी जिन सिद्ध परमात्मा की प्रार्थना की गई है उस प्रार्थना में अनुसंधान का संकेत है। आज भौतिक अनुसंधान तीव्र गति से बढ़ रहा है किन्तु आध्यात्मिक अनुसंधान के अभाव में वह निर्जीव है, उसमें वह रौनक नहीं है जो आज के मानव जीवन के लिये नितान्त आवश्यक है अतः हम आध्यात्मिक अनुसंधान की ओर जीवन को मोड़ देना है। इसीलिए कविता में संकेत दिया गया है—

> 'तुम में मुझ में भेद न पाऊं ऐसा हो संधान।
> अजर अमर अतिशय निरंजन अमति सिद्ध भगवान ॥'

बन्धुओ, कविता का संकेत निमित्त मात्र है लेकिन वह संकेत यदि हमारी अन्तर की दृष्टि को अन्तर की जिज्ञासा वृत्ति को अन्तर की समग्रता को अन्तर के उल्लास आदि को आध्यात्मिक दृष्टि की ओर मोड़ दें और हम आध्यात्मिक अनुसंधान में लग जाय तो कविता का संकेत हमारे लिये आदर्श बन सकता है। इस कड़ी में तो बड़ा लम्बा-चौड़ा संकेत दिया गया है। परमात्मा का अनुसंधान करने के लिए "तुम में मुझ में भेद न पाऊँ यह लक्ष्य के रूप में रखा गया है। आत्मा का विकास इतना हो कि परमात्मा के तुल्य मैं बन जाऊँ। यह वास्तविक समता का परम आदर्श है, और उस स्थिति में गरीब और अमीर का भेद नहीं है सुख और दुर्भाग्य की स्थिति

नहीं है यह वास्तव म स्थायी समता का चरम रूप है। उस चरम रूप का अनुसधान करने के लिए यदि व्यक्ति निश्चय कर लेता है कि मैं अनुसधान के साथ भगवान के तुल्य बनूँ इतना बड़ा लक्ष्य जब स्थिर होता है तो वह व्यक्ति उस लक्ष्य को केवल आदर्श के रूप म नही रखेगा, लेकिन यथार्थवाद की भूमिका पर वह जीवन को सुधारने का प्रयास करेगा। और सुधार की स्थिति के साथ जब जीवन म परिवर्तन होगा उसका आचरण उसी समता सिद्धान्त के साथ जोड कर उस रास्ते पर चलेगा तो उस जीवन का रूप कुछ और ही होगा।

आत्मा से परमात्मा

मैं इधर उधर परिभ्रमण करता हूँ। वह परिभ्रमण उसी लक्ष्य की सिद्धि के लिए है। आत्मिक शक्तियो का विकास हो और जन मन में समता सिद्धान्त की भावना प्रचारित हो। यद्यपि आज विश्व के अन्दर जिन जिन बातो का वायुमण्डल बन रहा है वह चाहे राजनैतिक धरातल पर हो चाहे सामाजिक क्षेत्र म हो उन क्षेत्रो म भी यह आवाज बुलन्द हो रही है कि समता प्रत्येक व्यक्ति के जीवन का अग बने। नास्तिक दृष्टि स भले ही उसे समता न कहकर, समाजवाद के रूप म कह लेकिन वह समाजवाद भी वास्तविक हो। वह समाजवाद भी प्राणवान कब बनेगा जब कि वह समता सिद्धान्त दर्शन को अपने स्वरूप म स्थान देगा। समता सिद्धान्त-दर्शन का तात्पर्य सबको एक ही रूप म देखने का नहीं है। बच्चा बच्चे के रूप म रहेगा, वृद्ध वृद्ध के रूप म समझा जाएगा तरुण तरुण के रूप मे देखा जाएगा। बच्चे की आवश्यकता क्या है अर्थात् बच्चे को किस प्रकार की सामग्री की आवश्यकता प्रेरित कर सकती है यह भी देखना होगा। इसप्रकार समता का व्यापक परिभाषा के अनुसार जो वर्गीकरण होगा वह समता सिद्धान्त के साथ होगा। समता सिद्धान्त वस्तु के वास्तविक रूप को उपस्थित करता है। जो वस्तु जैसी है उस

उसी रूप में देखा जाय। उसके वास्तविक रूप को विकृत न करके वस्तुतत्त्व का निर्णय किया जाय तो समता सिद्धान्त दर्शन का दार्शनिक रूप हमारे सामने झलकने लगेगा। किन्तु हम समता सिद्धान्त के दार्शनिक रूप में ही न उलझ जाएँ उसे जीवन के कर्तव्य क्षेत्र में चरितार्थ करें ताकि समता सिद्धान्त के अनुरूप समता जीवन दर्शन का निर्माण हो। और इस प्रकार जब समता जीवन दर्शन में छोटी-छोटी बातों को ठीक तरह से समाहित करके उनको समता सिद्धान्त के साथ असली रूप देंगे, तो समता जीवन दर्शन के धरातल पर उस आध्यात्मिक दर्शन की उपलब्धि होगी। जिसे हम आत्मदर्शन की संज्ञा देते हैं। आत्मदर्शन की प्राप्ति के साथ जब आध्यात्मिक उल्लास और आन्तरिक निर्विकारता जागृत होगी तो जीवन समता परमात्म दर्शन के रूप में परिवर्तित हो जाएगा। वही समता की पराकाष्ठा होगी वही समता का चरम स्वरूप होगा और वही आत्मा का चरम साध्य परमात्म पद होगा। अर्थात् आत्मा स्वयं परमात्मा के रूप में परिवर्तित होगा। इसीलिए कहा गया है कि आत्मा स्वयं परमात्मा बन सकता है। आचार्यों का कथन है अप्पा सो परमप्पा—जो आत्मा है वही परमात्मा है लेकिन कब? जब सारी विषमताएं दूर हो जायेंगी सर्वत्र परम पवित्र समता का साम्राज्य हो जायगा।

आत्मा जब परम सर्वांगीण समता रूप में ढल जाती है, तब वह निर्विकार रूपता को प्राप्त हो जाता है यानी परमात्मा के तुल्य बनता है। इसी का अनुसंधान हम करते हैं जिसको कि कविता में संकेत किया गया है।

यह जयपुर नगर राजस्थान की राजधानी के रूप में प्रसिद्ध है। इस नगर में जब हमारा चातुर्मास के आसपास उपस्थित हुआ था और इस बीच कुछ रहने का प्रसंग भी आया उसके बाद जयपुर संघ की आन्तरिक आग्रह रहने से चातुर्मास का प्रसंग भी यहां

बना। चातुर्मास की दृष्टि से मैं यहा आ भी गया हू लेकिन अब जयपुर सघ को क्या करना है ? राजधानी की जनता को अपने जीवन मे वास्तविक रूप मे कुछ परिवर्तन लाना है ? या उन्ही कुरीति रिवाजो के साथ अपने जीवन की इतिश्री करनी है। जो बात इतने दिनो से चलती आ रही है प्रत्येक व्यक्ति के साथ जो कुछ रूढिया लगी हुई हैं जिनमे वह अपने आपको आबद्ध पाता है, वह अपने आपको खोलने की कोशिश नही कर पा रहा अपने आपको व्यापक बनाने के लिए ध्यान नही दे रहा हैं। अब भी उसी भावना के साथ उन्ही रूढियो मे बधे रहना है या अपनी आत्मा की भावना को साथ लेकर एकत्व भावना के साथ आगे बढना है ? यह सारा चिंतन जयपुर की जनता को करना है। जयपुर की जनता को ही नही अपितु सपूर्ण मानव समाज को इस विषय मे गहरा चिन्तन करना है। मैं माध्यम बन रहा हू। अपनी शक्ति के अनुसार कुछ बातें बतला रहा हू। लेकिन मैं जो बतलाता हू वही आप ग्रहण कर लें उसी को आप मान लें यह मेरा आग्रह नहीं है। मैं जो कुछ बातें कहता हू उन बातो को आप समझने की कोशिश करें। यदि आपको सत्य तथ्यात्मक लगे, आपको सही चीज मालूम हो यदि आपके जीवन के लिए हितावह हो, तो ग्रहण करें। मैं किसी के ऊपर थोपने की स्थिति मे नहीं हू। हा यदि किन्ही को मेरे विचारो को समझने मे भ्राति हो जाय तो उस भ्राति को निकालने के लिए हर व्यक्ति के लिए दरवाजा खुला है। वे दिल खोल कर पूछ सकते हैं कि ये विचार आपने किस रूप मे कहे हैं ? इनका क्या तात्पर्य है ? इसके लिए मैं सदैव तत्पर हू। लेकिन आगे जिस स्थिति से आप लोगो को एक प्रकाश प्राप्त करना है और नितान्त समतापूर्ण स्थिति के साथ यदि कुछ कार्य प्रारम्भ करना है तो आज जो समाजवाद की पहल राजनैतिक क्षेत्र मे चल रही है उसमे जिन जिन बातो की कमी है, उन कमियो पर

विचार करते हुए उसके अन्दर आध्यात्मिक भावना का पुट देना है। वैज्ञानिक दृष्टि से उसका समन्वय करते हुए आप, समता सिद्धान्त दर्शन के आधार पर अपने जीवन की गुत्थियों को सुलझाने की कोशिश करें और जो रूढ़िगत परम्पराएँ हैं जिनके अन्दर मानव घुट रहा है। उनके कुछ परिष्कार का प्रयास करें। आज मध्यम वर्ग की कैसी दुर्दशा है? मानव कुछ समझ नहीं पा रहा है कि वह क्या करे? जिनके पास कुछ अधिक पैसा इकट्ठा हो गया है वे अपने आप में फूले नहीं समा रहे हैं और अपने आपको समझ रहे हैं कि वे तो सब कुछ बन गए लेकिन जिनके पास इसकी कमी है वे मन ममोस कर बैठे हैं। आज इस विषमता की खाई को पाटने के लिए समता सिद्धान्त दर्शन की नितान्त आवश्यकता है जिसके द्वारा प्रत्येक व्यक्ति अपने विषम जीवन को समन्वय में देख सके।

जीवन की भूमि को सम बनाओ

यह चातुर्मास का समय है और चातुर्मास की दृष्टि से संतों का आगमन हुआ है। इन संतों के आगमन और इस चातुर्मास के प्रसंग में आप आध्यात्मिक क्षेत्र में और जीवन के क्षेत्र में एक दृष्टि से कृषक बन जायें। यद्यपि भारत देश कृषि प्रधान देश है, जन संख्या की दृष्टि से यहाँ किसान अधिक हैं। ये किसान खेती करने के लिए हल हाँककर जमीन के अन्दर बीज डालकर खेती करते हैं और उनके आधार पर जनता का जीवन चलता है। मैं यह चाहूँगा कि आप भी एक तरह से कृषक बनें। आप सोचेंगे कि क्या इस शहर के अन्दर हमसे खेती करायेंगे हल चलायेंगे। मैं कहूँगा कि वह हल तो आपके अन्य बन्धु हाँकते ही हैं। आप उस हल को न हाँकें लेकिन जीवन के अन्दर हल हाँकिए, अपने जीवन को देखिए कि हमारे मन में, हमारे दिल और दिमाग में, कौन सी घास पैदा हो रही है? किसान खेती करने लगता है तो

पहले खेत को साफ करता है उसके अन्दर कंकर पत्थर रह जायेंगे तो खेती ठीक से नहीं हो पायगी। इसलिए बीज बोने से पहले किसान खेत को साफ करता है कंकर पत्थरों को बाहर निकालता है और खेत को समभाव से समतल करता है। आपने कभी किसानों को देखा होगा कि किस प्रकार खेतों को साफ करके बीज बोते हैं और बीज बोने के साथ ही वे निश्चित नहीं हो जाते हैं। लेकिन उसमें यदि कचरा उत्पन्न हो जाए तो उसको भी निकालने का प्रयास करते हैं और तभी जा करके वे समय के बाद फसल की प्राप्ति करते हैं। वैसे ही जीवन की खेती का प्रसंग है। अपने जीवन की खेती का पकाने के लिए इस चातुर्मास के प्रारम्भ में प्रत्येक मनुष्य अपने मन मस्तिष्क में जो विषमताओं के कंकर-पत्थर पड़े हुए हैं उनको बाहर निकालें उनको फेंक दें और कंकरों को फेंकने के बाद फिर आप समता सिद्धान्त दर्शन के आधार पर वीतराग वाणी का श्रवण करें और इसके साथ जो अपने लिए हितावह हो उसको ग्रहण करें और जो विषम भावना है उसको छोड़ दें। जीवन की अन्तर हृदय की भूमि जब सम होगी स्वच्छ होगी तभी उसमें धर्म की आत्मिक सुख की फसल पकेगी। इस दृष्टि से यदि मानव चले और समता सिद्धान्त दर्शन का जीवन में अपनाते हुए इस लक्ष्य को अपने सम्मुख रखें तो यह चातुर्मास सारे मानव समुदाय के लिए आदर्श उपस्थित कर सकता है।

आप यह न समझिये कि यहाँ सिर्फ महाराज अपने लिए कुछ करते होंगे मेरे लिए तो मैं साधना में लगा हुआ हूँ और मैं मौन रहकर भी साधना कर सकता हूँ गुफा में बैठकर भी साधना करने की स्थिति में रह सकता हूँ लेकिन जब इस समाज में रहना है तो उसके हित की दृष्टि से भी सोचना पड़ेगा समाज के हित की बातों को भी सामने रखना पड़ेगा और जो सामाजिक दृष्टि से हितावह है वह मेरे लिए भी हितावह हो सकती है और वह

प्रत्येक मानव के लिए भी हितकर है, इसी दृष्टिकोण से मैं यहाँ कह रहा हूँ इसमें किसी व्यक्ति विशेष या किसी पार्टी विशेष का प्रसंग नहीं है। मैं तो यह चाहता हूँ कि व्यक्ति-व्यक्ति में जो विषमताएँ हैं वे दूर हों, व्यक्ति पार्टी जाति सब एकरूप होकर मानव के कल्याणार्थ काम करें और इस प्रकार आगे बढ़ते हुए स्व पर के जीवन को पवित्र बनावें।

सामाजिक कुरीतियों के कारण अगर कोई विषम परिस्थिति आ गई है, भेदभाव की कोई दिवाल खड़ी हो गई है, कोई पोइंट पैदा हो गया है तो उसको निकालने की कोशिश करें। उस विषमता को निकालने से आपका जीवन कितना आनंद और उल्लासमय हो सकेगा यह तो अनुभव की बात होगी।

जीवन में भी एक धरातल बनाइए

चातुर्मास में इस जीवन के ममता धरातल के विषय में चिन्तन करना है कि आपने यह स्थान भवन बनाया। यह पहले कैसा था और अब किस रूप में हो गया। एक सरीखा हो गया। अब आप सबके सब एक धरातल पर बैठ हुए हैं। नीचे एक भी कंकर चुभ नहीं रहा है। कंकर चुभ रहा है क्या? कोई आपको कष्ट नहीं हो रहा है। उसी तरह से आप समाज के अन्दर भी एक धरातल बनाइए। आप अपनी स्थिति में रहते हुए एक ऐसा रंगमंच तैयार करें जीवन का धनी ऐसी तैयार करें जिसके अन्दर समता सिद्धान्त का एक ऐसा प्लेटफार्म बने। आप स्वयं ही उसमें न बैठें उसमें अग्रवाल ओसवाल और माहेश्वरी ही न बैठें ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य ही न बैठें बल्कि उसके ऊपर पूरी मानव समाज का अधिकार हो और सभी मानव उसके ऊपर शान्ति का लाभ ले सकें पूरे मानव वर्ग को शान्ति का अनुभव हो सके पूरी मानवता [illegible] सकें कि वर्तमान जीवन कैसे जीवें और भावी जीवन का [illegible] सब बातों का दृष्टिकोण सामने रखकर इस जीवन के क्षेत्र का समता सिद्धान्त का धरातल

तैयार कर समरूप बना देने का प्रयास किया गया तो जयपुर चातुर्मास का यह प्रकाश दूर-दूर तक प्रकाश फैलेगा। हवाई जहाज आकाश में उड़ता है लेकिन कहाँ पर बड़ा स्टेशन है इसका यात्री को पता कम लगता है। यह तो आप जानते हैं। कुछ प्रकाश की लाइट पड़ता है तो आप देख लेते हैं कि बड़ा स्टेशन आ गया। यह राजधानी का बड़ा स्टेशन है। इस स्टेशन की तरफ राजस्थान का ही ध्यान नहीं है मैं सोचता हूँ कि दूर-दूर के क्षेत्रों का ध्यान लगा हुआ है और इसकी चमचमाती हुई रोशनी देखने के लिए कई तैयार हो रहे हैं। अगर राजधानी के अन्दर कोई ऐसा आदर्श और पवित्र काय जन समाज को आह्लादित करने वाला हो और पवित्र समता सिद्धान्त का धरातल मानव मात्र के विकास का कारण बनता हो तो उस प्रकाश को लेने के लिए सब तैयार बैठे हुए हैं। यहाँ की सुगन्ध दूर दूर तक फैले यह उत्तरदायित्व जयपुर की जनता पर है। अतः जयपुर की जनता में जो पूर्वग्रहीत आग्रह की कोई भावना हो जिसमें जाति व्यक्ति पार्टी के घेरे में पड़े हुए हों, जिससे भाई भाई के साथ में विकट परिस्थिति पैदा हो गई हो तो उन विषमताओं को दूर कर सारी स्थितियों को समाहित करके एक धरातल की स्थिति के साथ आदर्श उपस्थित करना है। इस चातुर्मास में जयपुर की जनता को कृषक के रूप में अपने दिल और दिमाग को साफ करते हुए एक ऐसी खेती पैदा करनी है जिससे अनेकों को तृप्ति मिल सके उस तृप्ति के लिए आप सबको तैयार होना है, और उसकी तैयारी करने के लिए अभी से प्रवृत्ति प्रारम्भ कर देना है।

आप अपने जीवन की खेती तैयार करने के लिए, कंकर पत्थर एक तरफ करने के लिए कचरा साफ करने के लिए एकत्व भावना से आगे बढ़ेंगे। एकत्व भावना जब मन और जीवन में जग जायेगी तब 'तुझ में मुझ में भेद न पाऊँ, इस स्थिति पर पहुँच जाएँगे।

असखय जीविय मा पमायए

—उत्तराध्ययन ४।१

जीवन बडा असस्कृत है टूटने के बाद पुन सध नहीं सकता अत प्रमाद मत करो।

---

२ | सस्कारित जीवन

सुमति जिनेसर साहिबा जी
मेघरथ नृपनो नन्द।
सुमगला माता तणो जी।
तनय सदा सुखकन्द।
प्रभु त्रिभुवन तिलोजी।
सुमति सुमति दातार
महा महिमा निलोजी।
प्रणमू बार हजार
प्रभु त्रिभुवन तिलोजी।

प्रभु सुमतिनाथ भगवान् के चरणों मे प्रार्थना की कडियो का उच्चारण किया है। प्रभु के अनेक नाम हैं। अनेक नामो से प्रभु

...से एक सुमतिनाथ भी है। सुमति
...ारा जा सकता है। उनम
...नय है- सदबुद्धि।
जिनकी सनमति होती है, जिनका ज्ञान सम्यग् होता है, पवित्र
व्यवसाय जिनकी आत्मा के अन्दर चलता है—वे सुमति कहे जा
...कते हैं। लेकिन ऐसी सुमति रखने वाले जो समस्त प्राणियों के
...स्वामी के रूप में प्रसिद्ध है वे सुमतिनाथ कहलाते हैं। यहां सुमति
...नाथ भगवान् के चरणों में कवि ने प्रार्थना के रूप में व्यक्त किया है
और यह बताया है कि सुमतिनाथ सुमति के दाता हैं।

सुमति के दाता दयालु कहलाते हैं। वे सुमति का दान भी करते
है। आज सुमति के लेने वाले व्यक्तियों की कमी नहीं है? आज देखा
जाय तो ससार के अन्दर जितने प्राणी हैं उन सब प्राणियों को सुमति
की आवश्यकता है। प्राणी जब सुमति को छोड कर कुमति के अधीन
होता है तब वह अपने आपको खतरे में डालता है। उसका परिवार
में सम्मान नहीं रहता है। वह समाज में भी विषमता पैदा करता
है और राष्ट्र के अन्दर भी वह बहुत भयावह दृश्य उपस्थित कर
देता है। यह कुमति का कार्य है। इस कुमति के कारण से ही ससार
तबाह हो रहा है। इसलिए ऐसे प्रसंग में सुमतिनाथ भगवान की वह
दानार वृत्ति वह उदार वृत्ति आवश्यक है। लेकिन सुमतिनाथ
भगवान सुमति देंगे किसको? सुमति लेने वाले व्यक्तियों को, जिज्ञासु
व्यक्तियों को, किन्तु कब? जब वे उस रूप में उपस्थित हों। दातार
अपनी उदारता से कुछ देना चाहता है लेकिन लेने वाला भी तो
चाहिये। लेने वाला इन्सान यदि तैयार हो जाता है, तो दाता
अपनी उदारता के साथ दे भी सकता है। प्रश्न होगा महाराज
लेने वालों की कमी नहीं है। प्रार्थना हम कर ही रहे हैं। आपने जि...
शब्दों का उच्चारण किया जिन प्रार्थना की कड़ियों के साथ आप...
सम्बन्ध जुड़ा है उनके साथ हमारा भी सम्बन्ध रहा हुआ है।
इसी के लिए यहां आये हैं कि हम यहां भगवान की वाणी का...

करके आने अपने जीवन म सुमति का साम्राज्य स्थापित करें। इस सामूहिक प्राथना में आपका सामूहिक स्वर निकला हो या नहीं, मैंने इसका उच्चारण किया है यह आपकी सामूहिक भावना को दृष्टि म रख किया है। आप कहेंगे, जब हम सुमति की अभिलाषा है, अपना है तब ही यहां आकर खड़ हुए ह बठ हैं। तो यह सुमति सुमतिनाथ म प्राप्त क्या नहीं हो जाती है ? किन्तु इस पर जरा चिन्तन करना है कि प्राथना का उच्चारण कर लेन मात्र स या प्रभु से याचना करने भर से सुमति मिलने वाली नहीं है।

सुमति-अन्तर मे जागृत की जाती है

एक दृष्टि म देखा जाय तो सुमति लेने दने जसी चीज नहा है। यह ता पदा की जाती है। पदा स तात्पय प्रादुर्भाव से है प्रकट करने स है जागृत करन म है न कि नवीन उत्पत्ति करने से। जिसकी उत्पत्ति हाता है उसका नाश भी होना है। लेकिन सुमति आत्मिक शक्ति का परिणाम है। आत्मा है वह स्थायी है ता उसके मौलिक गुण भी स्थायी होंगे। इसलिए आत्मा के गुणा की उत्पत्ति नवीन प्रकार से नहीं हाती है। उनका आवरण मात्र हटता है शक्ति पदा हाती है, आविर्भाव और तिरोभाव भी हुआ करता है, तो उस शक्ति का प्रकट करने के लिए प्रयास करना है। प्रार्थना म जो एक दूसरे को सुमति देने का प्रसग आया है वह औपचारिक है। जिन्हें सुमति प्राप्त है व लुटाते चले जायें न कि न लेन वाले की स्थिति नहीं बनेगा तो ? जसे आप कोई वस्तु उठा कर किसी के हाथ म देते हैं उस तरह दने का प्रश्न ता नहीं है। हम भगवान के आदर्श को देखकर अपने अन्दर की स्थायी शक्ति का पहिचानें हमारे जीवन म सुमति का भण्डार भरा हुआ है उसका प्रादुर्भाव करने के लिए प्रकट करने के लिए हम प्रयास म लग जाते हैं ता हम सुमति का भण्डार भरा पाते हैं इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए यहा वीतराग

करते हैं। कभी-कभी मुखवस्त्रिका तक उठा ले जाते हैं कभी कभी वस्त्र उठाकर ले जाते हैं। उन वस्त्रों को वे समझते नहीं हैं कि ये क्या वस्त्र हैं और उन वस्त्रों की चिंदी चिंदी करके, उनको बता बताकर फाड़ डालते हैं। सिर्फ किसलिए? रोटी के टुकड़े के लिए और आप उनको रोटी डाल देते हैं तो आपकी चीज वे छोड़ देंगे। और नहीं देंगे तो वे उन वस्त्रों को बता बताकर फाड़ेंगे। आप मानव की आप जैसे कपड़ों की कद्र कर रहे हैं, आप जिन वस्तुओं में बहुत मुग्ध हो रहे हैं उन्हीं वस्तुओं को ले जाकर वे उनका दुरुपयोग करते हैं। आप कहेंगे महाराज बन्दर जाति है। उसकी शक्ल तो करीब करीब मनुष्यों जैसी है लेकिन फिर भी मनुष्यों जैसे संस्कार नहीं हैं। उनका असंस्कारित जीवन है। आप बन्दरों के जीवन को असंस्कारित जीवन कहेंगे और संस्कारित जीवन को आप मनुष्य जीवन कहेंगे। बंधुओ! सोचने की बात है। आज संस्कारित और असंस्कारित जीवन का बड़ा प्रश्न है। जो मनुष्य जीवन जी रहा है वह किस जीवन जीता जा रहा है? कि जीवन में जीवन क्या है? और क्या है आज यह प्रश्न [illegible] संसार के सामने मुँह बाये खड़ा है। जीवन का जब यह प्रश्न खड़ा होता है और सुलझता नहीं तब तक मनुष्य का जीवन जीवन नहीं कहला सकता। जीवन एक दृष्टि से देखा जाय तो मशीनों की तरह चलता जा रहा है। मशीन को तो फिर भी कुछ समय के लिए छुट्टी मिल जाती है, मशीन हफ्ते में एक रोज तो विश्राम लेती होगी लेकिन मानव जीवन की मशीनरी को हफ्ते में एक दिन भी विश्राम मिलती है या नहीं? रविवार के दिन में कोई व्यापार का लेनदेन बंद कर दिया जाता होगा लेकिन उस दिन बंद करने के बावजूद भी अनुमानतः दूसरे दिन अधिक भार आता होगा। मैं अनुमानतः इसलिए कह रहा हूँ कि कुछ भाइयों के मुख से सुनने में आते हैं। मैं कहता हूँ कि रविवार को तो छुट्टी रहती है तो वे कहते हैं महाराज, रविवार

को तो डबल काम रहता है। उस मशीनरी की तरह जीवन को बिताने वाले व्यक्तियों के जीवन को मैं जीवन कहू ? आप उसको जीवन कहें ? नही। किसको जीवन कहना ? यह प्रश्न आपके सामने खडा है। आपके सामने ही नही बल्कि मानवमात्र के सामने यह प्रश्नवाचक चिह्न है। चिन्तन और मनन कीजिए। दो हाथ, दो पर, मुँह और आख यह आ जाने मात्र से क्या जीवन बन गया ? क्या अच्छा खाना खाने से जीवन बन गया ? या अच्छे वस्त्र पहनने से जीवन बन गया ? अच्छे और बढ़िया मकाना म गद्दी तकिये लगाकर और पखे की ठडी हवा खाने मे जीवन बन गया ? क्या है जीवन ? कभी एकान्त के क्षणो म आप इस प्रश्न पर चिन्तन कीजिए।

क्या मानव मिट्टी के ढेले के रूप म हैं ? क्या आज का मानव केवल एक तरह का पिण्ड या पुतला बन गया है ? उसको जीवन की कला याद नही जीवन का स्वरूप ख्याल म नहा जिसस वह अपने जीवन को लेकर चले और कह कि मैं जीवन जी रहा हू। अरे भाई कौन-सा जीवन जी रहे हो ? सस्कारित जीवन जी रहे हो या असस्कारित जीवन जी रहे हो। सस्कारिक जीवन जीने वाला व्यक्ति कुछ और ही होता है और असस्कारित जीवन जीने वाला व्यक्ति कुछ और ही होता है। रात और दिन का अन्तर है, प्रकाश और अधकार का फक है। असस्कारित जीवन मे पग पग पर ठोकरें लगती हैं। असस्कारित जीवन न स्वय को समझता है और न पर को समझता है न स्वय के हित को दखता है और न पर के हित को देखता है। उसके जीवन की नौका बिना पतवार के इधर उधर भटकती रहती है। उसका जीवन कहीं ठिकाने नहीं रहता। एसा प्रमादी जीवन और इस प्रकार का असस्कारित जीवन विश्व के अन्दर जहा उपलब्ध होता है ता वहा अशान्ति की ज्वाला नही भडकेगी तो और क्या होगा ? जहां जीवन का विवेक और जीवन का पता नही जहा जीवन के सस्कारा का परिमाजन करने का

स्थिति नहीं, वहाँ जीवन की यही स्थिति है। आज आप प्रत्येक जीवन तत्व का चिन्तन कीजिए जीवन के विषय म मैं कह रहा हूं। इसके साथ ही साथ आप ससार म जिन पदार्थों का अवलोकन करते ह उनम भी सस्कारित और असस्कारित दोनो तरह के पदाथ पाये जाते हैं। जो सस्कारित पदाथ हैं उनका जरूर महत्व है पर जो असस्कारित पदाथ है उनका कोई महत्व नहीं।

आप कभी कभी अपनी दृष्टि म विवाह शादियो के प्रसग पर इन बहिनो के सिर पर मिट्टी के कलशो को देखते होग। सम्भव है बडे शहरो क अन्दर नही हो लेकिन विवाह शादियो स प्रसगो पर घड पर घडा रख कर उसके गले मे जेवर पहनाया जाता है। यहाँ शायद यह प्रथा नही होगी। यह प्रथा कम हो रही है लेकिन गाँवो क अन्दर देखन को मिलता है कि बहिनें विवाहो के प्रसग पर सुन्दर वस्त्र पहन कर, जेवर पहन कर गीत गाती हुई कुम्भकार के यहाँ पहुँचती है और कलशो को लाती हैं, बड और छोटे एक के ऊपर एक कलश चढ़ाकर अपन जेवर उन घडो के गल म डालती हैं। मेवाड़ के गाँवों म आपको यह देखने को मिलगा। वह फिर वह मस्त ग चलती है शायद उपवास करके उतने जतन से नही चलती होगी। जितना वहाँ जतन स चलती हैं। उनको ख्याल रहता है कि यह घडा कहीं गिर नहीं जाये। सावधानी के साथ मन को एकाग्र करके चलती हैं और जब विवाह के मकान के दरवाजे पर जाती है तो वहाँ दूसरी बहनें फिर उनका सत्कार करके आरती करके दरवाज ग स जाकर अन्दर रखती है। बन्धुओ, इस प्रक्रिया को आप देख चुके होग। नहीं देखा हो तो आप मस्तिष्क म कल्पना कीजिए आप सोचिय यह किसकी कद्र हो रही है। बहिनो क सिरो पर मिट्टी क्या चढ़ ? इन बहिनो को यदि कहा जाये इन विवाह शादियो के प्रसग पर कि आप जगल क अन्दर म एक मिट्टी का ढेला उठाकर अपने सिर पर रखकर चलिये। चलेंगी क ?

नही। मिटटी का ढेला उठान के लिए कहेगे तो वडी नाराज हो जायेंगी कि क्या हमको मजदूरनी समझा है जो हमस मिटटी का का ढला उठवा रहे हैं। लेकिन आप सोचिये उस मिटटी के ढले को सिर पर उठाने से अपना अपमान समझती ह और उसी मिटटी का वे घड के रूप म सिर पर उठाकर लेकर आ रहा हैं। क्या अन्तर पडा ? मिटटी वही लेकिन उस मिटटी म और उस मिटटी म रात और दिन का अन्तर पड गया। वह मिटटी असस्कारित मिटटी थी जा ढेले के रूप म पडी थी जिसके ऊपर कोई भी व्यक्ति टटटी पेशाब कर सकता है, उसको कोई भी ठाकर मार सकता है, कुदाली स खाद सकता है लेकिन उसी मिटटी को कुम्भकार न उठाकर जब घडा बनाया उस मिटटी का उसन सस्कार करना चालू किया, यह सस्कार बडी मुश्किल स हुआ उसन उसे खूब मथा, गल मिलाई लेकिन मिटटी ने साचा कि मरा ता मस्कार करना है कुम्भकार ने उस मिटटी के ढले को सस्कार करने के लिए उस चाक पर चढाया उसको चक्कर भी खिलाया लेकिन मिटटी न तो सोचा कि मुझे ता सस्कारित होना है। तो क्या वह मिटटी नाराज हुई ? नही। इतने स ही कुम्भकार नही रुका। उम आकार देकर ऊपर से उसे ठाका भी। आपन कुम्हार को देखा हागा। जार जोर से करता है मडमड लेकिन फिर भी उसके अ दर म वह हाथ रखता है और उस घडे को पीटकर ठीक कर दता है—फिर भी मिटटी सोचती है कि तुम खूब पीटो मुझ तो सस्कारित हाना है पीटने के बाद भी कुम्हार ने चन नहीं लिया और उसको कहाँ रखा ? आग के अन्दर। उसके अणु अणु म गर्मी पहुचा दी लकिन उस मिटटी ने सोचा कि खूब गर्मी पहुचाओ लेकिन मैं घड के रूप का नहा छोडूगा क्याकि मुझे तो मस्कारित बनना है। वह मिटटी का घडा अपनी परेशानियो से जब उत्तीण हो गया ता वह मिटटी की दृष्टि स सस्कारित बन गया और बहिनो के सिर पर चढ गया।

सत्संस्कारित बनने के लिए सहिष्णु बनो !

आज इन्सान अपने मन में क्या अभिलाषा रखता है ? यह कि मैं दुनियाँ का मान-सम्मान ग्रहण करूँ, दुनियाँ के सिर पर चढ़ कर दुनियाँ का वन्दनीय और पूजनीय बनूँ। अरे तू आदर और सत्कार के पीछे दीवाना बन रहा है, मान सम्मान लेने के पीछे भाग रहा है। तू अपने जीवन को देख, तुम्हारा जीवन क्या है ? तू मिट्टी के ढेले की तरह है या मिट्टी के घड़े की तरह है ? मिट्टी के ढेले ने तो मान सम्मान की परवाह नहीं की। मिट्टी के मन में तो यह ध्यान रहा कि मुझे सत्संस्कारित बनना है। सत्संस्कारित बनने में वह अनेक आपत्तियों को सहकर चली तो मिट्टी का सत्कार हो गया। यदि इन्सान को अपना जीवन जीना है जीवन के प्रश्न को हल करना है कि मेरा जीवन क्या है ? तो सबसे पहले उसे मिट्टी से शिक्षा लेनी चाहिए कि मिट्टी के समान मैं निश्चल, दृढ़ धैर्यवान बन जाऊँ। मिट्टी पर कुम्हार ने थपेड़े लगाये, मुझ पर भी थपेड़े लगाने वाला कोई आ जाय तो उस समय मैं शान्त एवं स्थिर रहता हूँ या नहीं ? आत्मस्वरूप में लीन होता हूँ या आत्मा के रूप को विस्मृत कर जाता हूँ। मैं शांति को छोड़ता हूँ या रखता हूँ ? यह प्रत्येक व्यक्ति को चिन्तन करना है। यह चिन्तन नहीं होगा तब तक जीवन सत्संस्कारित नहीं हो पायगा। अरे थपेड़े खाना तो दूर रहा, यदि कोई व्यक्ति दूर खड़े खड़े अँगुली उठाकर कह दे, मेरे सामने क्या बोल रहा है, तुम्हारी मूँछ का बाल उखाड़ कर फेंक दूँगा। इतने शब्द ही उस व्यक्ति को उत्तेजित किये बिना नहीं रहते। और वह व्यक्ति इतना उत्तेजित हो जाता है कि थोड़े मात्र से ही अपने आप को छोड़ देता है और मानवता को तिलांजलि देकर मुकद्दमेबाजी के लिए तैयार हो जाता है। हालांकि न उसने मूँछ के बाल पर हाथ लगाया न उखाड़ा, फिर भी उसे जोश आ गया।

यह जोश किस बात का द्योतन कर रहा है ? उसी बात का द्योतन कर रहा है। इसान मिटटी का ढला नही हो सकता है मिटटी स बना है मिटटी का अग इन्सान है लेकिन मिटटी की शिक्षा इसान म नही है। मिटटी कितने गुण रखती है। असस्कारित अवस्था म भी मिटटी समभाव स्थिति म रहती है। इसान कहता है मैं बहुत बडा विद्वान हू मैं बहुत बडा अधिकारी हू मैं बहुत बडा प्रोफेसर हू मैं बहुत बडा व्यापारी हू, मैं बहुत बडा वकील हू मैं बहुत बडा बेरिस्टर हू म सब कुछ हू। अरे! सब कुछ है लेकिन इसके पीछे अपन जीवन का भी कुछ विचार है ? जीवन की स्थिति को भी कुछ समझता है या नही ? इस प्रकार के नशा स अपने आप स बाहर हो जाना अपन स्वभाव को छोड दना अपनी शक्ति का छोडकर, सुमति का छोडकर कुमति की ओर चले जाना असस्कारित स्थिति के कारण स होता है।

सस्कारिता का महत्व

मैं मिटटी की बात ही क्या कहू पृथ्वी की प्रत्येक सामग्री पृथ्वी का प्रत्येक पदार्थ सस्कारिता का प्रदर्शन कर सकता है। लाल भवन म बठे हुए हैं—यह लाल भवन किन तत्वो से बना है ? मिटटी से बना है। पत्थरो से बना है। मिटटी और पत्थर कहा स आता है ? मिटटी खदान मे थी। पत्थर खदान म था। उस वक्त तक कोइ उनकी कदर नही थी। लेकिन वहा स बाहर निकलने पर बजरी बन गई पत्थर पर टाकी लगाई गई। कारीगर ने पत्थर का खूब छीला और छील छील कर दीवार म फिट कर दिया। इसस पत्थर का सस्कार हो गया। दीवार का सस्कार हो गया। और लालभवन की स्थिति म आपके सामने आ गया। लाल भवन ममत्व का पुतला बन गया। आप कहते हैं— हमारा लाल भवन।' चाहे व्यक्तिगत रूप से न हो पर सामूहिक रूप से है। इतना महत्व इसका क्या बन गया।

जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी जननी और जन्मभूमि स्वर्ग से बढ कर है। मैं तुम्हारी उसी तरह कद्र करता हूँ। लेकिन तुम्हारा जीवन असंस्कारित जीवन चल रहा है। अस्सी वर्ष की हो गई हो लेकिन जीवन में परिवर्तन नहीं है। वही पहुँपन है, अनाड़ीपन है। यह कौन सा तुम्हारा जीवन है। माताश्री! अपने जीवन को सस्कारित करो। अगला वर्ष में जो काम किया, उससे निवृत्ति लो और जीवन का मार्जन के लिए सन्मार्ग की ओर जाने के लिए जीवन को सुव्यवस्थित रूप में ढालो। पुत्र का निवेदन सुनने के पश्चात् माता कहने लगी, छोकरा! तू नहीं समझता। मैंने गरीबी के दिन भी देखे हैं। आज तू करोड़पति बन गया तो क्या हो गया? यह पुत्र वधू इस प्रकार की फिजूलखर्ची करता है यह छोकरे इस प्रकार पैसे बर्बाद करते है - यह मुझे बर्दाश्त नहीं। इसलिए मैं लड़े बिना नहीं रह सकती। पुत्र ने कहा, जैसा करोगी वैसा भरोगी। पुत्र की बात मातश्री ने स्वीकार नहीं की। तब सेठ ने सोचा, इनके जीवन में अब यह संस्कार आने वाले नहीं हैं लेकिन जिनके कोमल जीवन हैं जो अभी बच्चे हैं जो तरुण हैं जो अधेड़ हैं उनमें फिर भी अच्छे संस्कार उत्पन्न किये जा सकते हैं। इसलिए परिवार के सब सदस्यों को एकत्रित करके सेठ ने नम्र भाव के साथ निवेदन किया—आप मेरे परिवार के सदस्य हैं। मेरी आत्मा के तुल्य हैं। मैं आपसे कहना चाहता हूँ आप अपने जीवन को समझो। यह जीवन असंस्कारित जीवन रहता है तो मुझे दर्द होता है। आप अपने जीवन को संस्कारित बनाने के लिए कुछ प्रयत्न करें। विनीत परिवार के सदस्यों ने सेठ की बात को ध्यानपूर्वक श्रवण करने के पश्चात कहा, आप क्या आदेश देना चाहते हैं? आपके आदेश का पालन करना पहला कर्तव्य होगा। सेठ ने कहा, यह मेरी माता अस्सी वर्ष की बुढ़िया है। अपने सब परिवार की मुखिया है। लेकिन इसके जीवन

म जीवन के अच्छे सस्कार नही हैं, यह हर किसी के साथ लडती झगडती है। आप लाग इसके ऊपर रोष न करें, इसकी बात पर ध्यान नही द। बूढे और बच्चे को एक समझ कर माफ करें जिससे घर म कलह का वातावरण पदा नही हो। सब परिवार के सदस्या ने अनुशासन के नाते यह स्वीकार किया और घर म शान्ति का वातावरण बन गया। लकिन बुढिया का असस्कारित जीवन समाप्त नही हुआ। उसने सोचा परिवार के सदस्य मेरे से लडाई नही करते। मुझे लडाई किये बिना चन नही मिलता। वह घर से बाहर निकली, पडौसी के घर पहुची। वहा अपने असस्कारित जीवन का प्रदशन किया। उसकी बाता को सुनकर पडौसी के परिवार के सदस्य लडने लग। एक घर म आग लगाई, फिर दूसरे घर म पहुची। दिन म कई घरो म पहुँच कर सब के यहा लडाई झगडे करा दिये। और शाम का अपने घर म वापिस पहुँच गई। यह उसका प्रति दिन का कायक्रम बन गया। असस्कारित जीवन का कितना खराब प्रदशन है। नागरिक परेशान हो गये। यह क्या तमाशा है। यह माता करोडपति की कहलाती है। उनके घर की माता है। हमारे घर म आग लगाने वाली कौन होती है? आग लगाने वाला व्यक्ति बहुत बडा पापी होता है। बाहर म आग नही जीवन म आग जलाने वाला जीवन म कलश पदा करने वाला समाज क अन्दर शान्ति की स्थिति को तोडने वाला अशाति पदा करने वाला राष्ट्र में अन्दर अशान्ति की ज्वाला सुलगाने वाला—ये सबके सब महापापियो की श्रेणी म आ सकते है।

नागरिको का शिष्टमडल सेठ के पास पहुचा। सेठ ने बडा सत्कार किया। शिष्टमण्डल सोच रहा था कि यह करोडपति सेठ है, हम अनादर की दृष्टि स देखेगा। लकिन सेठ के बर्ताव को बिल्कुल विपरीत पा रहे हैं। सेठ सम्मान कर रहा है हमारे जसे

का। यह सेठ पूंजी का महत्व नहीं दे रहा है जीवन का महत्व दे रहा है। हमारे आगे निपात व्यक्तियों के प्रति भी सम्मान प्रदर्शित कर रहा है आगे कि अपने मन में मुकाबले में व्यक्ति का सम्मान कम हो। इस दृष्टि से सेठ का जीवन सत्वारित जीवन है। शिष्टमण्डल ने अपनी बात रखी और कहा आपकी मातेश्वरी को आप कुछ कहें में रखिए। यह हमारे घरों में आग लगाकर हमारे सबके जीवन का विघात कर रही है। सेठ ने कहा जितने सम्भव प्रयत्न थे वे सब मैंने कर लिये, लेकिन मेरे प्रयत्न सफल नहीं हुए। आपसे मेरा निवेदन है आप ही कोई उपाय सुझायें और मेरी मातेश्वरी को समझा दें। उनके जीवन को सत्वारित बना देंगे तो मैं आपका अहसान नहीं भूलूंगा। शिष्टमण्डल उस अस्सी वर्ष की बुढ़िया के पास पहुँचा। अनेक तरह की शास्त्रीय बातों को रखते हुए समझाने की कोशिश की। बुढ़िया को सब बात तो जंची लेकिन उसने उत्तर दिया आपकी सब बातें अच्छी हैं, भली हैं, मैं समझती हूं लेकिन झगड़ा किये बगैर मुझे खाना हजम नहीं होता है।

शिष्ट मण्डल ने सोचा कि अब वृद्धावस्था के अन्दर संस्कार डालना बड़ा कठिन है। उस बुढ़िया को कहा मातेश्वरी! यदि लड़ाई झगड़ा किये बिना आपका अन्न हजम नहीं होता है तो हम आपके उस रास्ते को खुला रखकर बाकी दरवाजे बन्द कर देते हैं। आप लड़ाई करने के लिए घर घर के अन्दर पहुंचती हैं आपको श्रम होता है, हम सब मिलकर आपके लिए एक कमरे का इन्तजाम कर देते हैं, उसी में आप गद्दी तकिये पर विराजकर बैठ जाय और बारी-बारी से एक व्यक्ति आपके पास पहुंच जाया करेगा और जितनी आपको लड़ाई करनी है दिनभर आप उस व्यक्ति से लड़ती रहें। तो उसने कहा कि हाँ यह बात मुझे मंजूर है क्योंकि कोई लड़ने वाला नहीं हो तो बिना लड़ाई किये मुझे शांति मिलने वाली नहीं है। शिष्ट मण्डल ने सेठ से निवेदन किया कि अब समस्या

का कुछ हल आ चुका है। आगे घर के अन्दर काफी [सदस्य
एक एक सदस्य की बारी बाध दी जावे, एक कमरे के अन्दर
तकिये डालकर बुढ़िया का बिठा दीजिए यह आपके घर
अर्थात एक ही कमरे म रहगी और सारे नगर म अशांति भी न
रहगी ' सेठ ने कहा कि आपकी आज्ञा शिरोधार्य है लेकिन
परिवार क सदस्यो स यह समस्या हल होने वाली नहीं है। शिष्ट
मण्डल ने कहा कि क्या। तो कहा—परिवार क सदस्यो को
मन सस्कार द दिये हैं कि बुढ़िया चाहे कितना ही कुछ कहे तुमको
चुप्पी साध लनी है और कुछ भी उत्तर नहीं देना है। जसे बच्चे
की बात को सुनकर हसना है उसी तरह स बुढ़िया का बात का
सुनकर हस लना है। अत मेरे परिवार के सदस्य उससे लड़ाई
नहीं करेंगे उसकी बात का सुनकर हसते रहगे। तो इससे बुढ़िया
की आग शान्त नहीं होगी और फिर कमरे स बाहर निकलकर
आपके घरो म पहुचगी तो आपकी समस्या का हल कसे होगा।
शिष्ट मडल न सोचा यह भी ठीक है। सेठ के इस प्रकार सस्कारित
जीवन का कुछ नमूना देखकर शिष्ट मण्डल ने सोच लिया कि
यह सारे नगर की माता हो जानी चाहिए क्योकि इसके पुत्र क
इतने सस्कार है कि हमारे साथ सुमति क साथ व्यवहार कर रहा
है तो यह उत्तरदायित्व हम सबका है। इस दृष्टिकोण स उस
शिष्टमण्डल न यह निर्णय किया कि सेठ के घर क सदस्यो को
छोड़कर गाव क जितने सदस्य हैं उनके प्रत्येक घर से एक व्यक्ति की
बारी बांध दी जाय। उन्होंने गाव क अन्दर उसी ढंग का ऐलान
करवाया। वह गाँव विषमताओ की स्थिति का प्रदर्शन करने वाला
नहीं था। वह परिवार क रूप म गाव था सब की समता की स्थिति
का प्रदर्शन करने वाला गाव था। आजकल ग्राम पचायतो की
व्यवस्था करने क लिए जरूर कुछ किया जा रहा है लेकिन आज की
स्थिति म वस्तुत ग्राम का परिवार समझने की दृष्टि अभी मानव

मे नही आ रही है । लेकिन उसका कुछ दश्य इस तरह से अपने परिवार के सदस्यों की बारी बाधकर उस गाव वाले हमारे सामने रख रहे हैं। सयोग से एक सस्कारित कन्या जो कि बचपन म अपने जीवन के स्वरूप को समझकर जीवन का सस्कारित करके चलने वाली थी सुसराल म पहुची। सासु और स्वसुर को नमस्कार भी किया और उसके परिणाम हेतु शुभ आशीर्वाद चाहा था। उसने अपने प्रफुल्लित ननो स सासु की आकृति को दखा और साचने लगी कि मेरी सासुजी के मुह स आज मेरे लिए सुन्दर आशीर्वाद आयेगा क्योकि मैं इस घर मे अन्दर नवीन पुत्रवधू के रूप म परिवार के नवीन सदस्य के रूप म उपस्थित हुई हू। लेकिन उस कन्या ने देखा सासुजी के मुँह से आशीर्वाद के कोई वचन नही निकल रहे थ बल्कि आकृति म थाडी सी म्लानता थी। उस चतुर मनोविज्ञान की ज्ञाता, जीवन का सस्कारित करने वाली कन्या ने सासुजी स प्रश्न किया कि सासुजी आज मेरा इस परिवार के सदस्य के रूप म आना आपका अच्छा नही लग रहा है ? मैं यह जानना चाहती हू कि किसी भी परिवार के प्रत्येक सदस्य के मन म प्रफुल्लता आये बिना नही रहती। लेकिन आज मैं इसके विपरीत देख रही हू, क्या कारण है ? आपकी उदासी का क्या हेतु है। आप स्पष्ट बतायें ? उसने जो आजकल की प्रचलित प्रथा थी उनको भी हटा दिया। सासुजी ने पुत्रवधू के वचनो का महत्व दिया और कहा कि बीदनी जी,तुम्हारे आने स उतनी ही प्रफुल्लित हू जितना कि होना चाहिए और जो चिन्ता का रूप आप देख रही हो वह तुम्हारे कारण नही है उसका अन्य कारण है। बहू ने पूछा कि वह कौन सा कारण है जबकि मैं परिवार की सदस्या बनी हू तो परिवार के ऊपर आने वाली हर विपत्ति के अन्दर मेरा भी हाथ बटाना कर्त्तव्य है। कौनसी ऐसी कुमति का साम्राज्य छा गया जिसस

परिवार मे प्रवश करती ह और अमगलकारी शब्द को मगल म परिणत करने के लिए कसी भावना व्यक्त कर रही ह आप थाडा अपन जावन को टटालें और थाडा सा प्रश्न का हल करन क लिए अपने आपका तयार कीजिए।

[कथा के आगे का अश अगले प्रवचन म चालू ह। कृपया प्रवचन सख्या ३ दखें। —सम्पादक]

लाल भवन
२१ जुलाई १६७२

●●

☐

सस्कारी जीवन विश्व उपवन का मधुर सुवास से भरा वह पुष्प है जो प्रतिपल चारों ओर सुगन्ध ही सुगन्ध फलाता है।

विन्नाणेण समागम्म धम्म साहणमिच्छिउं

—उत्तराध्ययन

विवेकज्ञान से ही धर्म के साधना का निर्णय हो सकता है।

---

३ | जीवन का स्वरूप

पद्म प्रभु पावन नाम तिहारो
पतित उद्धारन हारो।
पदम प्रभु पावन नाम तिहारो।
जदपि धीवर भील कसाई
अति पापिष्ट जमारो।
तदपि जीव हिंसा तज प्रभु भज
पावै भवनिधि पारो।

यह पद्म प्रभु की प्रार्थना है। प्रार्थना की कड़िया में प्रभु के नाम को पावन की संज्ञा दी है। ऐसे तो पद्म नाम कईयों का हो सकता है किन्तु कवि ने जिस संज्ञा वाचक शब्द को कविता में समन्वित किया है। उसका आशय है कि उनका नाम पावन और पवित्र है पतितों का उद्धार करने वाला है। पतित कौन हैं? कवि

साथ साथ प्रभु का स्मरण हो आता है। विशिष्ट शब्दों के उच्चारण से भगवान का अत्यन्त उज्ज्वल जीवन सामने आता है और उसका जब मन के ऊपर स्पष्ट प्रतिबिम्ब पड़ने का प्रसंग आता है तब मन में भी पवित्रता का संचार होता है।

हृदय से भगवान का पावन नाम लेते हैं तो जिह्वा और अन्तःकरण भी पवित्र हो जाते हैं उस पवित्र नामोच्चारण से मन में या अन्तःकरण पर रहने वाली हम घुंघुरती हुई परिलक्षित होगी। यह मन रूपी कपड़ा सांसारिक कार्यों से दुर्गन्ध युक्त बना हुआ है। उसमें झूठ छल प्रपंच और न मालूम कितनी ही बुरी वस्तुएँ क्रीड़ा कर रही है और सारे मन रूपी कपड़े को गंदा बना रही हैं। इस गन्दे कपड़े के ऊपर यदि आप पदम प्रभु भगवान के नाम का पवित्र अर्थ दो क्षण के लिये भी टिका लेंगे तो आपके मन में सुगन्ध रूपी आध्यात्मिक शान्ति का प्रभाव बना रहेगा। जितने क्षण आपका ध्यान प्रभु के सीधे स्वरूप की ओर होगा। तब तक वहाँ बाहरी वस्तुओं का प्रभाव मन्द होगा, कुसंस्कार नष्ट हो जायेंगे। यह स्थिति निरन्तर मन की बनी रही तो सारी दुर्गन्ध साफ होकर जीवन पावन और पवित्र बन जावेगा।

जो लोग समझते हैं कि दिन भर पाप करें और शाम को भगवान का नाम ले लें तो पाप से छुट्टी मिल जावेगी। उन लोगों के मन में ये विचार बैठे हुए हैं कि शाम को भगवान का नाम लेने से दिन भर के पाप नष्ट हो जावेंगे किन्तु ये विचार तथ्यपूर्ण नहीं हैं इस प्रकार के विश्वास से जीवन में पुनीत संस्कारों का आरोपण नहीं होगा।

हमारा सारा जीवन वीतराग देव की वाणी के अनुसार सुसंस्कारित हो यह तभी सम्भव है। उस जीवन को सुसंस्कारित करने के लिए हम अपने जीवन के पापों को छिपावें नहीं। दुर्गन्ध को छिपाने की कोशिश न करें वरन् उसे बाहर फेंकें। दुर्गन्ध को

सूर्य की किरणों के सामने बिखेर दें, दुर्गन्ध उड़ जायेगी और वस्तु का वास्तविक स्वरूप सामने झलकने लगेगा।

गंदगी को दबाओ मत

आप जानते हैं व्यापारी जब अपनी दुकान पर बैठता है और कचरा निकालने का प्रसंग आता है तो वह रुपया पैसा नोट और कोई बढ़िया चीज है तो गद्दी से उनको उठाकर तिजोरी में रखेगा और कचरे को झाड़कर दुकान से बाहर फेंकेगा। यह तो प्रचलित पद्धति है। लेकिन कदाचित् किसी व्यापारी के दिल में यह आ जाय कि सोने चाँदी, रुपये नोट हैं, उनको तो उठाकर बाजार में फेंक दें और जितना कूड़ा करकट है उसको इकट्ठा करके, या तो गद्दी के नीचे दबा दें या तिजोरी में रख दें। यदि ऐसा वह करने लग जाय तो उस व्यापारी को क्या कहेंगे? बेवकूफ और मूर्ख ही तो कहेंगे?

हम इस जीवन की दुकान पर भी बैठे हैं। क्या हमने अपने जीवन के स्वरूप को भी समझा है। प्रश्न यही है "किं जीवनम्" जीवन क्या है? क्या इस प्रश्न पर आपने कुछ चिन्तन किया है? इस जीवन की दुकान पर बैठकर आप कूड़े करकट कचरे को बाहर फेंक रहे हैं या उसको जाजम के कोने नीचे दबा रहे हैं? इसका तात्पर्य यह है कि इस जीवन के अन्दर कूड़ा करकट गंदगी भरी हुई है। इस गंदगी को इन्सान बाहर फेंकना नहीं चाहता है। नयी नयी गंदगी पैदा हो जाती है तो भी उसको छिपाने की कोशिश करता है और सद्गुण रूपी बहुमूल्य रत्नों को बाहर फेंकने की कोशिश करता है। जीवन के अन्दर पाप की वृत्ति आयी, मनुष्य ने पाप किया और पाप करना स्वाभाविक भी है। परन्तु पाप करने के बाद में पाप को पाप कहने की ताकत भी उसकी जबान में नहीं आती है। प्रकारान्तर से वह पाप प्रकट भी हो जाय तो भी मनुष्य चाहेगा कि पाप प्रकट

न हो और इस पाप को छिपा कर तथा दबाकर रखता रहूँ। ऊपर से केवल ऐसा बता देता है कि दुनिया मुझे भला आदमी समझती रहे। कदाचित् किसी संयोग से अपने जीवन से शुभ काम बन जाता है, मार्ग में जाते हुए किसी गिरते हुए प्राणी का सहारा देकर बचा लेता है, तो वह मन में फूला नहीं समाता है और सारी जगह बात कहता फिरता है कि मैंने ऐसा किया और जिस व्यक्ति का सहारा दिया यदि वह व्यक्ति कभी कोई बात कहे तो वह उलट कर कहेगा कि मैंने तुमको मरते हुए को बचाया था। वह दुनिया भर में उसका ढिंढोरा पीटेगा और इस छोटे से शुभ कृत्य से अपनी गंदगी को नीचे दबायेगा। इस के विपरीत जो व्यक्ति सद्गुण रूपी शक्तियों को तिजोरी में बन्द रखता है कूडे कचरे को बाहर फेंक देता है तथा प्रभु के नाम का श्रवण करता है तो वह नाम उसके जीवन को पावन करने वाला बन जायगा। यदि ऐसा नहीं किया तो प्रभु का नाम हजार हजार बार ले लाखों-करोडों बार लें, वह प्रभु का नाम पवित्र पावन करने वाला नहीं बनेगा। इन पवित्र कडियों को जीवन के साथ जोडें और जीवन को सामने रखकर इसके स्वरूप को समझने की कोशिश करें तो यह सब सम्भव है।

प्रभु महावीर ने ढाई हजार वर्ष पहले जो उद्घोषणा किया वह यही था

असंखयं जीविय मा पमायए।
जरोवणीयस्स हु नत्थि ताणं॥

हे मानव! तुम्हारा जीवन असंस्कारित चल रहा है। प्रमाद में क्यों पडे हो, जीवन को इधर उधर क्यों भटका रहे हो। आप विचार करिये असंस्कारित जीवन क्या है हमारा प्रश्न क्या है? जीवन के साथ संस्कारित और असंस्कारित शब्द जुडे हुए हैं। असंस्कारित जीवन की और संस्कारित जीवन की अनेक विद्वान् परिभाषा करते हैं जीवन को ढालने की कोशिश

करते हैं लेकिन वास्तव म जीवन की परिभाषा परिपूर्ण रूप से क्या है ? "किं जीवनम" जीवन क्या है। कुछ विद्वान उत्तर देते हैं कि "दोष विवर्जितम यद तज जीवनम ।"

दोष से विवर्जित है वही जीवन है। जो दोष से रहित है वह जीवन है इस सामान्य परिभाषा म कुछ दार्शनिक दृष्टि से अति व्याप्ति दोष की सभावना है । यद्यपि अतिव्याप्ति दोष, अव्याप्ति दोष और असभव दोष ये तीनो न्यायिक क्षत्र के दर्शन क्षत्र के लक्षण हैं। यह दार्शनिक सभा नहा है। यह ता धम जिज्ञासु सभा है। यद्यपि धम सभाओ के बीच म ये दशन सम्बन्धी बातें थोडी कठिन पडती हैं परन्तु फिर भी आज का जा समाज है आज का जा मानव है वह इस कठिन तत्व को भी ग्रहण करने का प्रयास करता है। आज मनुष्य क मस्तिष्क का विकास इतना हुआ है कि वह बारीक से बारीक चीज को समझन का प्रयास करता है। इसलिये जब तक आप जीवन की बारीकी को न समझेंगे तब तक उसके निखालिस रूप को नही समझ पायेंगे।

जीवन का लक्षण

आपका प्रश्न नही ता मेरा प्रश्न है 'कि जीवनम जीवन क्या है ? जब इसका लक्षण बताया जावेगा कि अमुक तरह का जीवन अमुक तरह के जीवन का लक्षण है। तो वह लक्षण यदि दोषयुक्त बन गया तो सही लक्षण नही समझा जा सकता। और यदि दोष रहित लक्षण है तो वह सही लक्षण है। उदाहरण स्वरूप जीव का लक्षण लें। यदि कोई पूछे कि जीव का लक्षण क्या है ? तो उसका उत्तर है कि जीव का लक्षण उपयोग है "जीवो उवओग लक्खणो' यह शुद्ध लक्षण है क्योंकि इससे रहित कोई जीव नहीं होता तथा सभी जीवा म उपयोग लक्षण है। ... लक्षण यह माना जाय कि पञ्चेन्द्रिय हा ... जीवा...

म नही जा सकता पञ्चेन्द्रिय से आप क्या समझते हैं ? पाच इन्द्रिया ये हैं- कान आख नाक, मुंह और शरीर। यदि हम कहें कि पांच इन्द्रिया वाला ही जीव है तो जिसके चार इन्द्रिया हैं तीन इन्द्रिया हैं क्या वह जीव नही है ? दो इन्द्रिया हैं तो क्या वह जीव नही ? एक इन्द्रिय है ता क्या वह जीव नही ? अत जीव मात्र का पचेन्द्रीयत्व लक्षण बताना यह जिस प्रकार दोषपूर्ण है उसी प्रकार जीवन के विषय मे एक विद्वान ने कहा है—"दोष विवर्जित यद तद जीवनम' दोष से रहित है वह जीवन है। यह भी दोषपूर्ण लक्षण है।

मैं यहाँ आपको बतला रहा हू कि जीवन का सही लक्षण क्या है। इस प्रश्न के उत्तर म जब यह कहा जाय—'दोष विवर्जित यद तज जीवनम्" इस पर यदि उपयुक्त तरीके से विचार करें तो यह लक्षण कहा तक शुद्ध है ? इसकी परिभाषा के साथ आपको थोडा सा बारीकी स चिन्तन करा रहा हू। यह लक्षण शुद्ध नही है। 'दोषविवर्जित यत तद जीवनम्'—दोष रहित जीवन यह लक्षण जा सकता ह। पर साथ ही जीवन रहित तत्व म भी यह चला जाता ह। इस परिभाषा के अनुसार यदि दोष रहित परमाणु हो तो यह जीवन कहला सकता ह।

शास्त्रीय दृष्टि स धर्मास्तिकाय दोष रहित ह ता उसको भी जीवन कहना पडेगा पर धर्मास्तिकाय म जीवन कहा ? तो यहा पर घोटाला हो जायगा। इसलिये जीवन की उपरोक्त परिभाषा शुद्ध नहीं कही जा सकती। इसी प्रकार अधर्मास्तिकाय व आकाशास्तिकाय भी अपने आपमे दोष रहित ह। जीवन की उपयुक्त परिभाषा के अनुसार इन्हें भी जीवन समझ लिया जायगा—पर वे तो जड हैं। अत यह लक्षण अतिव्याप्ति दोषयुक्त बन जाता है। इसमे जीवन के पूरे लक्षण नहीं आ रहे हैं। जीवन के शुद्ध लक्षण को पहिचानने के लिए मैं आपके सामने कई बात रख रहा हू—शुद्ध लक्षण को जानने के लिए आपको अपना जीवन सम्हालित करना है

संस्कारित जीवन के साथ सदाप्त को समझने का प्रयास करेंगे तो समझ में आयेगा और बुद्धि का नियन्त्रित रूप सामने आयेगा। इस बारीक बात को समझने का प्रयास कर रहे हैं। संस्कार किस रूप में कर रहे हैं। आप कह दें—महाराज आधुनिक की तरह हम आए ही हैं। हमारा जीवन तो संस्कृतिमय है। हमारे जीवन की गति तेज है। हम अपनी बुद्धि, स बहां से कहां पहुंच गए हैं कहां कहां पर दौड़ रहे हैं। कितनी पैनी बुद्धि, सूक्ष्म दृष्टि हमारे पास आ गई है—क्या यह हमारे जीवन का संस्कार नहीं है? क्या आप इसको संस्कार नहीं मानोगे? यह आप तर्क दे सकते हैं। मैं इस तर्क के पाठ आपका चिन्तन देना चाहता हूं। आप स्वयं सोचिये। आज का इन्सान अपनी बुद्धि का परिमार्जन करता चल रहा है, यह अवश्य है कि आदि युग का जो मनुष्य था, उसकी जो प्रतिभा थी, उसका जो चिन्तन था, उसके रहन-सहन की जो पद्धति थी जिस प्रकार से वह रहता था उसमें और आज में रात दिन का अन्तर आ गया है। कहां आदि युग का मनुष्य और कहां आज का मनुष्य।

इसलिये आप गम्भीरता से चिन्तन कीजिये। मैं सिर्फ आप लोगों को ही नहीं बुद्धिजीवी वर्ग को विद्वान लोगों को सम्बोधन कर रहा हूं कि वे अपने दिल दिमाग से सोचें चिन्तन करें कि आज का यह जीवन वस्तुतः संस्कारित है। आप चिन्तन करेंगे तो अनुभव होगा कि वास्तव में यह जीवन संस्कारित नहीं है। विज्ञान से भौतिक तत्त्वों की ओर बौद्धिक शक्ति की भी वृद्धि हुई है। मानव विद्युत गति से दौड़ रहा है परन्तु जीवन के इस प्रश्न को ढूंढने के लिये इस प्रश्न को हल करने का क्या प्रयास किया जा रहा है? इस स्थिति के साथ मैं आज यह बता रहा हूं कि आज जितनी विकास की स्थिति है उस पर आप सोचें कि क्या यह आपके जीवन का संस्कार है? क्या आपके जीवन के अन्दर उससे शांति मिलती है। जितना बुद्धि का विकास हुआ है उसके साथ ही साथ आपके जीवन को शांति

मिली है, शान्ति बढी है ? नही, अशान्ति बढी है। बुद्धिजीवी वर्ग का जिस तरह से विकास हुआ है उसमे आप बिलकुल सही तौर पर, अपने अन्तर पर हाथ रख कर पूछिये कि शान्ति मिली है कि अशान्ति ? अशान्ति। बडे से बडे जौहरी से पूछिये ? आपने जवाहरात के अन्दर तरक्की की है लेकिन क्या उससे जीवन के अन्दर शान्ति मिली है ? यदि उससे जीवन के अन्दर शान्ति का सस्कार नहा है तो समझना चाहिये कि वह जीवन वस्तुत सस्कारित नहा हो पाया है। आज जो सस्कार हैं वे कुछ और ही हैं। वास्तविक जीवन के सस्कार कुछ और ही हैं।

सस्कारों का चमत्कार

जिस जीवन मे छोटी चिनगारी-सा सस्कार आ जाता है वह जीवन कैसा चमत्कार दिखा सकता है, इसके लिए थोड़ा रूपक कल अधूरा छोड गया था। एक तरफ ८० वर्ष की बुढ़िया जिसने बाल बच्चो का पोषण किया पोते पड पोते देखे और उनसे उसका सारा घर भर गया। कितना विकास कर लिया। क्या उसने जीवन का सस्कार किया है ? जीवन म यह सब कुछ किया पर की परिवार) कितना भरा पर उस बुढ़िया को शान्ति कितनी मिली ? एक तरफ क तरुणी जो अभी नव विवाहिता है विवाह करके ससुराल आई। जब उसके सामने यह जटिल प्रश्न आया, उस प्रश्न को लेकर इ प्रथम आती है और देखती है सासुजी अशान्ति के झूले म झूल रही वे सोचती रही वह बुढ़िया उसके साथ अशान्ति का प्रयोग करेगी मगलकारी शब्दो का प्रयोग करेगी आदि। तो वह नवविवाहिता तो है कि सासुजी, आज आप यह क्या सोच रही हैं कि क्या आपके वार के लिए अमगलकारी शब्दों का प्रयोग करने से यह परिवार में परिवर्तित हो जायगा। यह सोचना आपका भ्रम है। अ गल शब्दो से सीधा किसी के ऊपर आक्रमण होता हो तो अनन्त

शब्द आज दुनिया के अन्दर गूँज रहे हैं गाली गलौज देने वाले दुनियाँ मे कितने हैं और कितने गाली गलौज द रह हैं। आज विज्ञान ने शब्दो को दुनियाँ के एक कोने से दूसरे कोने पर पहुचा दिया है और एक कमरे के अन्दर बठकर दी जाने वाली गाली सारे वायुमण्डल म फल रही है वह किस मनुष्य से छिपती है। तो क्या हर मनुष्य ऐस अमगलकारी शब्द स अमगल रूप बन जायगा। वह छोटी अवस्था वाला तरुणी सासूजी से कहती है सासूजा आप इस विषय की चिन्ता मत करिये। ऐसे अमगलकारी शब्द मेरे जीवन को चिपकने वाले नही हैं। ये आपके जीवन और आपके परिवार के लिये अशुभ नही बन सकते। किन्तु यदि आप इनको पकडने की चेष्टा करग आप इनको अपने मन म स्थान देंग तो अमगलकारी काय हो सकते हैं। यदि इनको जीवन म स्थान नही देंगे जीवन के अन्दर इस पर पश्चाताप नही करेंग तो कुछ विगडने वाला नही है। आप इसके लिये अनुमति दीजिये मैं स्वय आज उस मातेश्वरी क पास पहुँचती हू। इस तरह उसने अपनी भावना को व्यक्त किया। सासूजी उसस कहने लगी बहू रानी अभी-अभी तुम इस घर मे प्रवेश कर आई हो तुम्हारा जीवन कोमल है तुमने दुनिया की ऊँची नीची स्थिति अभी नही देखी है अभी यह जीवन की कोमल अवस्था है। मेर सामने इस प्रकार क शब्द कहना सहज है क्योकि अपन पिता स तुमने यह सस्कार पाया है और उसी दृष्टि से तुम यह यह बोल रही हो परन्तु जिस वक्त उस बुढिया के सामने जाओगी जो एक विकराल रूप लेकर प्रस्तुत होती है तो तुम घवरा जाओगी और तुम कही घवरा कर दूसरी स्थिति पदा न कर दो।

सासूजी के इन शब्दो को सुनकर पुत्र वधू मुस्कराई। कहने लगी सासूजी परीक्षण क तौर पर मुझे भेज दीजिये। मैं यह चाहती हू कि अति स्नेह के साथ मुझे आशीष दें। सासुजी ने आज्ञा दी, और वह घर स बुढिया के पास जाने लगी। उसने सोचा मैं जाकर

मिली है, शांति बढ़ी है ? नहीं अशान्ति बढ़ी हैं। बुद्धिजीवी वर्ग का जिस तरह से विकास हुआ है उसमें आप बिलकुल सही तौर पर, अपने अन्तर पर हाथ रख कर पूछिये कि शान्ति मिली है कि अशांति ? अशान्ति। बड़े से बड़े जौहरी से पूछिये ? आपने जवाहरात के अन्दर तरक्की की है लेकिन क्या उससे जीवन के अन्दर शांति मिली है ? यदि उससे जीवन के अन्दर शान्ति का संस्कार नहीं है तो समझना चाहिये कि वह जीवन वस्तुतः संस्कारित नहीं हो पाया है। आज जो संस्कार हैं वे कुछ और ही हैं। वास्तविक जीवन के संस्कार कुछ और ही हैं।

संस्कारों का चमत्कार

जिस जीवन में छोटी चिनगारी-सा संस्कार आ जाता है वह जीवन कैसा चमत्कार दिखा सकता है, इसके लिये थोड़ा रूपक कल अधूरा छोड़ गया था। एक तरफ ८० वर्ष की बुढ़िया जिसने बाल बच्चों का पोषण किया पोते पड़पोते देखे और उनसे उसका सारा घर भर गया। कितना विकास कर लिया। क्या उसने जीवन का संस्कार किया है ? जीवन में यह सब कुछ किया घर को परिवार से कितना भरा पर उस बुढ़िया को शान्ति कितनी मिली ? एक तरफ एक तरुणी जो अभी नव विवाहिता है विवाह करके ससुराल आई है। जब उसके सामने यह जटिल प्रश्न आया, उस प्रश्न को लेकर वह प्रथम आती है और देखती है सासुजी अशान्ति के झूले में झूल रही हैं व सोचती रही वह बुढ़िया उसके साथ अपशब्दों का प्रयोग करेगी, अमंगलकारी शब्दों का प्रयोग करेगी आदि। तो वह नवविवाहिता कहती है कि सासुजी आज आप यह क्या सोच रही हैं, कि क्या आपके परिवार के लिए अमंगलकारी शब्दों का प्रयोग कर देने से यह परिवार उनमें परिणित हो जायगा। यह भावना आपकी गलत है। यदि अमंगल शब्दों से सीधा किसी के ऊपर आक्रमण होता हो तो अमंगल

शब्द आज दुनिया के अन्दर गूंज रहे हैं गाली गलौज देने वाले दुनियाँ में कितने हैं और कितने गाली गलौज दे रहे हैं। आज विज्ञान ने शब्दों को दुनियाँ के एक कोने से दूसरे कोने पर पहुंचा दिया है और एक कमरे के अन्दर बैठकर दी जाने वाली गाली सारे वायुमण्डल में फैल रही है वह किस मनुष्य से छिपती है। तो क्या हर मनुष्य ऐसे अमंगलकारी शब्द से अमंगल रूप बन जायगा। वह छोटी अवस्था वाली तरुणी सासूजी से कहती है सासूजी आप इस विषय की चिन्ता मत करिये। ऐसे अमंगलकारी शब्द मेरे जीवन को चिपकने वाले नहीं हैं। ये आपके जीवन और आपके परिवार के लिए अशुभ नहीं बन सकते। किन्तु यदि आप इनको पकड़ने की चेष्टा करेंगे, आप इनको अपने मन में स्थान देंगे तो अमंगलकारी काम हो सकते हैं। यदि इनको जीवन में स्थान नहीं देंगे जीवन के अन्दर इन पर पश्चाताप नहीं करेंगे तो कुछ बिगड़ने वाला नहीं है। आप इसके लिये अनुमति दीजिये मैं स्वयं आज उस मालकिनी के पास पहुंचती हूं। इस तरह उसने अपनी भावना को व्यक्त किया। सासूजी उससे कहने लगी बहू रानी अभी-अभी तुम इस घर में प्रवेश कर आई हो तुम्हारा जीवन कोमल है तुमने दुनिया की ऊँची नीची स्थिति अभी नहीं देखी है अभी यह जीवन की कोमल अवस्था है। मेरे सामने इस प्रकार के शब्द कहना सहज है क्योंकि अपने पिता से तुमने यह संस्कार पाया है और उसी दृष्टि से तुम यह यह कह रही हो परन्तु जिस वक्त उस बुढ़िया के सामने जाओगी जो एक विकराल रूप लेकर प्रस्तुत होती है तो तुम घबरा जाओगी और तुम कहीं घबरा कर दूसरी स्थिति पैदा न कर दो।

सासुजी के इन शब्दों को सुनकर पुन: वधू मुस्कराई। कहने लगी सासूजी परीक्षण के तौर पर मुझे भेज दीजिये। मैं यह चाहती हूं कि अति स्नेह के साथ मुझे आशीष दें। सासूजी ने आज्ञा दी और वह घर से बुढ़िया के पास जाने लगी। उसने रास्ते में जाकर

निष्क्रिय बैठ जाऊंगी तो मेरे मन में व्यर्थ का पाप का कचरा इकट्ठा होगा इसलिये कुछ न कुछ कार्य हाथ में लेकर जाना चाहिये। इस दृष्टि से हाथ का चर्खा, कातने की पूनी, सब साधन लेकर पहुंची। जब बुढ़िया के द्वार पर जाकर यह कन्या खड़ी हुई, तो कुछ विलम्ब हो गया था। इस विलम्ब की स्थिति से बुढ़िया तमतमा उठी और बच्ची को देखकर पहले ही स्वर में उस बुढ़िया ने कहा अरी रांड इतनी देर से आयी। आप सोचिये नवीन पुत्र वधू को कोई रांड शब्द से पुकार ले। मैं समझता हूं कि यह बंदूक की गोली का असर जितना नहीं होता है उतना उसका असर होता है। परन्तु जिसके मन में सुसंस्कार हैं उसके मन पर इस प्रकार के शब्द असर नहीं करते हैं किन्तु सुसंस्कार उसके सुरक्षक बन जाते हैं। एक माडल पत्थर होता है जिसके पट के पट उससे चल जाते हैं। उस पर बन्दूक की गोली का असर नहीं होता है। क्योंकि वह स्वच्छ भी होता है और उसके पर भी कुछ कठोर होते हैं। जिसके जीवन में सुसंस्कार के पत्थर माडल के समान हो गये हैं उसके सामने 'रांड' जैसे शब्द भी आ जायें जो बन्दूक की गोली के तुल्य हैं तो भी उसके जीवन पर उसका कोई असर नहीं होता है। बुढ़िया की वह नव युवती मुस्करा कर उत्तर देती है सासु जी राम राम! आपका परिचय प्राप्त करने में थोड़ा विलम्ब हो गया। मुझे क्षमा करिये अब मैं आपके सामने उपस्थित हो गयी हूं। इस प्रकार नम्रता से उसने उसका सम्बोधन किया और चर्खा लेकर बैठ गयी। उधर उस बुढ़िया के मुख से गालियों की वर्षा होने लग गयी। लेकिन वह बहुत समता से अपना कार्य कर रही है, और अपने मन में एक भी शब्द को स्थान नहीं दे रही है। सोच रही है कि किसी को क्या आनन्द हुआ। वह अन्दर कार्य करती रही। बुढ़िया बहुत [illegible] रही। बीच में बोलने वाला निम्न शब्द है सो उसका [illegible] समय

तक बोलने की और लडने की ताकत मिल जाती है। जसे कहा है

देते गाली एक हैं, पलट गाल अनेक,
जो गाली पलट नहीं तो रहे एक की एक॥

कोई गाली गलोज द रहे हैं ता देने दीजिये उसका उत्तर मत दीजिये वह गाला एक की एक रह जावेगी किन्तु यदि उत्तर मे पुन गाली दी गई तो अनेक हो जावगी। उस बहिन ने बुढिया की गालिया का कोई उत्तर नही दिया। बुन्यिा बोल-चाल कर थक गयी। उस नवीन पुत्र वधू ने सोचा कि आज का कायक्रम पूरा हो गया। उसने सरलता क साथ प्र न किया– सासुजी ! आपका काय पूरा हो गया ? इतना कहते ही तो बुढ़िया फिर बकने लगी और लडती रही। दो तीन तरह के प्रसग आय अ ज वह बुढिया न पानी पी सकी और न शान्ति से अन्न ग्रहण कर सकी। वह बालती रही। उसके मस्तिष्क म गर्मी चढ गयी। मस्तिक की कोशिकाओ पर बडा बुरा असर पडा। खून का नाडियो पर विपरीत असर पडा। *और वह बेहोश होकर गिर पडी। लकिन सस्कारित जीवन वाली* उस तरुणी पर कोई असर नही हुआ। वह सोचती है यदि मैं इन शब्दो को ग्रहण करूँगी तो मेरे पर इनका असर होगा। अन्यथा नही। उसका सोचना भी तथ्य युक्त है बडे बडे बाजारो मे दुकानें लगती हैं, हाट लगती है। यहाँ शायद जयपुर म ला न लगती हो ? गाँवो में तो लगती है। मैंने सुना है यहा भी लगती है। तरह तरह के न्यौवारी माल असवाब लेकर जाते हैं। उनम जूत के व्यापारी भी आते हैं और जोड के जोडे उठा कर जान वालो को बताते हैं 'एक दूँ या दो दूँ'। कदाचित आप भी उस बाजार मे निकल जाओ तो आपका भी बता देगा। क्या आप उस समय उसस लडोगे ? क्या सोचेंगे ? आप यह सोचोगे कि यह इसका व्यापार है। क्या करे बेचारा जो चीज है वह बता रहा हैं। मुझे वह चीज नही चाहिये।

बुढिया ने जैसे ही नेत्र खोले। उसकी दृष्टि उस बालिका की ओर गिरी जिसके नेत्रो से अमृत का झरना बह रहा था, जिसके नेत्रो से [आन्तरिक सदभावना और सद्गुणा की अमृत वर्षा हो रही थी, उस प्रम मयी वृत्ति को देखकर बुढ़िया चकित हो गयी। सोचने लगी, कहा मेरी ८० वर्ष की जिन्दगी और कहा १६ वर्ष की तरुणी का जीवन। कहा इसका जीवन और कहाँ मेरा जीवन ? किस प्रकार मैंने अपना जीवन खत्म कर दिया। आज मैं किस प्रकार इसके साथ पेश आयी किस प्रकार मैंने इसको गालिया दी और किस प्रकार मैंने इसका अपमानित किया लेकिन इसने अपने मन पर उसका कोई असर नही होने दिया। यह देवी है यह भगवती है। इसको किस प्रकार सम्बोधित करूँ। उस बुढिया के मन म परिवतन आता है। बड बड लोगो के प्रयासो से भी परिवर्तन नही आया किन्तु इस बहिन क मूक भावो स आज इसम परिवतन आ गया। अन्दर के कलुषित भावो को सदवृत्ति के द्वारा बाहर फकने लगा और अपनी वत्तिया को प्रकट करने लगी।

कहने लगी हा हा अरे देवी! कसा मेरा जीवन है। मैंने अपने जीवन म पाप ही पाप कमाया है। मैं कसे इस जीवन मे उत्तीर्ण हो सकती हू। बुढिया उसके चरणो म लोट पोट हो रही है। उसके चरण पकडकर सिसकिया भर कर रोती है और पाप की आलोचना करके अपने आपको शुद्ध कर रही है। कौन कर रही है? वही बुढ़िया। अभी-अभी मैंने एक व्यापारी का उदाहरण दिया था जो कचरे को बाहर फेंकता है और रत्नो की रक्षा करता है। आज वही असस्कारित बुढिया पदम प्रभु के पावन शब्दो के माध्यम से—

किवा उस बहिन के माध्यम स अपने कटक रूप अशुद्ध जीवन का परिमार्जन कर रही है। बुढ़िया ने सदा के लिये गाली गलौज को छोड दिया। नगर निवासियो को जब यह ज्ञात हुआ तो चारो ओर एक ही स्वर गूजने लगा कि यह कसे सभव हो गया है। हो न हो

की आशाएँ जड मूल से नष्ट हो गई तो उस मनुष्य का जीवन तो समाप्त प्राय है। कवियो ने कहा है आशा सर्वोत्तमा ज्योति आशा सर्वोत्तम प्रकाश है। हिन्दी मे भी कहावत है—

जब तक श्वासा तब तक आशा—इस कथन को भी आप अपेक्षा दृष्टि से हल करिये। चिन्तको के बताये मार्ग का अनुसरण करते हुए इस प्रश्न का हल खोजिये।

आशा के सहारे बच्चे बडे होते हैं आशा ही के सहारे तरुण अपनी तरुणाई म जो कुछ सोचता है वह कर गुजरता है। आशा के सहारे वृद्ध अपने जीवन के शेष काल का स्वप्न देखता है।

यह तो स्पष्ट है कि आशा आशा म अन्तर है। एक आशा को हम आध्यात्मिक प्रगति का सूचक कह सकते हैं तो दूसरी आशा को सांसारिक पौद्गलिक जीवन की लम्बी परम्परा का कारण कह सकते हैं। तो कवि की आशा क्या है ? वह पुकार उठता है —

> थो जिनराज सुवास पुरो आस हमारी।
> धन काम धन मो र इत्यादिक मन वांछित सुख पूरी।

कभी कभी मानव चाहे मुह से भले ही कह दे कि आशा का सर्वथा त्याग करता है। लेकिन अनुभूति के साथ और प्रत्यक्ष आन्तरिक शक्ति के साथ वह नहीं कह सकता। मस्तिष्क के सस्कारो से यदि उसका जीवन सस्कारित है तो उन सस्कारो के सहारे तो वह कह सकता है लेकिन जीवन म सस्कारो से सस्कारित होकर और जिन जीवन इस प्रश्न का समाधान जिसने पा लिया है वह मानव वस्तु स्थिति का आश्रय नहीं करेगा। वह फिर हवाई महल नहीं बनायेगा वह काल्पनिक आकाश म उड़ान नहीं करेगा वरन् सस्कारित जीवन के साथ धरातल पर भी चलता जायगा।

जीवन के वर्तमान का जो शाश्वत प्रश्न है जीवन का वर्तमान स्थिति का जो ज्वलन्त समस्या है उन सबका यथार्थवादी के

धरातल पर रखकर, मानव को उनका सही समाधान जब तक नही मिलेगा, तब तक मानव अपने जीवन की सही परिभाषा नही समझ पावेगा और न वह अपने वर्तमान जीवन म उस पर आचरण हो कर पावेगा। इस विषय म गहराई म चिन्तन करना होगा। इस दृष्टि से व्यक्ति के हृदय गत भावो को यदि आप आंकना चाहेंगे तो वह अपने दिल को खोल कर अपनी आंतरिक अभिलाषा को व्यक्त कर देगा और व्यक्त करते हुए कहेगा कि अमुक अमुक आशाएँ मुझे लगी हुई हैं। कोई कहेगा कि मुझ धन चाहिए, कोई वैभव की इच्छा प्रकट करेगा और कोई नाना प्रकार के सांसारिक पौद्गलिक सुखों की अपनी चाह प्रकट करेगा। इस प्रकार संसार म आशाएँ इच्छाएँ अनेक प्रकार की हैं—इच्छा बहु विध लोए इन्द्रिय पोषण की लालसाएँ और इच्छाएँ ही अधिकतर वह प्रकट करेगा। ऐसा तो कोई विरल ही आत्मा होगी जो इन भौतिक पौद्गलिक इन्द्रिय जन्य पदार्थों के प्रति अपनी नितान्त अनिच्छा प्रकट करेगी, इनके प्रति उदासीन और अनासक्त होगा और वस्तुत आंतरिक जीवन के लक्ष्य प्राप्ति की अभिलाषा स ओतप्रोत होगी।

तो इस तरह से यह स्पष्ट है कि अधिकांश मानवों का मुख्य तौर पर अर्थ और काम की आशा लगी रहती है। इसके बिना मानव अपने को अपने वर्तमान जीवन का एक दयनीय और असहाय अवस्था में अनुभव करता है।

क्या अर्थ और काम का पिंड ही जीवन है ?

इस भौतिक युग में ऐसा कोई विरला व्यक्ति ही मिलेगा जो काम और अर्थ से ऊपर उठ सका हो। इसी धरातल पर रहता हुआ इन्सान अपने एक महत्वपूर्ण भाग की अवहेलना कर रहा है। वह अवहेलना धर्म और मोक्ष की हो रही है। क्या वर्तमान का जीवन है? क्या अर्थ और काम का पिण्ड ही जीवन है? इस स्थिति

का समझना आवश्यक है। अथ और काम का पिण्ड जीवन नहीं है। फिर इससे ऊपर के दूसरे शब्दो म यह तो जीवन का अथ प्राण है लेकिन उस प्राण को हम कब समझ पायेंगे ? तब, जबकि हम वस्तु स्थिति का ज्ञान करेंगे, उसका चिन्तन करेंगे-न आकाश मे उडेंगे, न आदशवाद की कोरी बातें करेंगे। हम आध्यात्मिक जीवन की पृष्ठभूमि मे चिन्तन करेंगे तब जाकर हमारे जीवन की वह सस्कारित अवस्था आयेगी तो आप आशाओ की स्थिति के साथ चिन्तन कर रहे है। आज काम और अथ की आशाय लगी हुई हैं और इसके एकान्तिक स्वरूप म मानव बह रहा है। वास्तविक सस्कारित कहलाने वाला प्राणी भी इस अथ और काम को सवथा तिरष्कृत नही कर सकता। यथास्थान किसी न किसी रूप म उसकी यथाथता भी समझता है। वह चाहे हय हो ज्ञेय हो, अथवा उपादेय हो उसे ठीक रूप मे समझता है।

आज का विचारशील मानस कुछ एसा बन चुका है कि कोई कोई तो अथ और काम को सवथा तिरस्कृत करता है और उस आध्यात्मिक दृष्टि से चरम छोर को ही वतमान मे प्राण की सज्ञा देता है लेकिन वतमान जीवन किस धरातल पर है। इसे वह भूल जाते हैं। यदि उसकी दृष्टि एकान्तिक बन जाती है तो वह भी दूसरे शब्दो म असस्कारित जीवन कहा जा सकता है। वह वीतराग दृष्टि से सस्कारित जीवन नही है। सस्कारित जीवन का मापदण्ड देखें तो वस्तु'स्थिति का यथाथ रूप आ सकता है और वही जीवन की वास्तविक आशाओ की ओर उन्मुख होगा। इस बात का सकेत प्राथना की कडियो के अन्दर थोडा दिया गया है। उसमे अथ और काम का भी लिया है लेकिन स्वतन्त्र और स्वच्छन्दता के रूप मे नही। उसको नियन्त्रित अवस्था म लिया है इसलिए कविता म सकेत है भगवान् आप मेरी आशा की पूर्ति करो, लेकिन मेरी आशा क्या है ? जो दुनियाँ को काम और अथ

की आशा है वह नहीं, मेरी आशा कुछ और ही है। उसमे धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष इत्यादि हैं। उन्होंने सबसे पहले धर्म लिया उसके बाद अर्थ और काम को लिया है और मोक्ष को अन्त में लिया है। आप देखेंगे धर्म और मोक्ष आगे पीछे जुड़ा हुआ है। अनुसन्धान का स्वरूप जुड़ा है—प्रारम्भ में धर्म है, बीच में अर्थ और काम है और अन्त में मोक्ष है। अर्थ और काम को छोड़ा नहीं है। इसको संशोधित किया है। इसको बीच में रखकर स्वतन्त्र छूट नहीं दी है। स्वतन्त्र छूट देने से यह जीवन को आवारा बना देगा। आप देखेंगे जब एक अपराधी सरकार की ओर से पकड़ा जाता है तब वह बीच में चलता है। पीछे सिपाही आगे सिपाही और बीच में किसको रखा जाता है? अपराधी को। जो अत्यन्त उद्दण्ड और स्वच्छन्द होता है तो वह उसमें नियन्त्रित पाया जाता है। वैसे ही धर्म और मोक्ष इन दो छोर से रहित जो काम और अर्थ हैं वे अत्यन्त उद्दण्ड इन्सान के समान हैं। मानव इन दोनों की अनियन्त्रित स्थिति से हैवान और राक्षसी धर्म पर पहुंच जाता है चाहे वह कितना ही बड़ा अधिकारी या अर्थ सम्पन्न व्यक्ति क्यों न हो। हम पौराणिक रामायण का चिन्तन करें तो यह विषय और भी स्पष्ट हो जायेगा रावण जैसा राजा जिसके पास तीन खण्ड का आधिपत्य था, जिसका जीवन अर्थ में सम्पन्न था लेकिन उसके जीवन के आगे पीछे का छोर नहीं था। धर्म और मोक्ष की मुख्य स्थिति नहीं थी। अर्थ और काम की दिशा थी इसी स्थिति में वह चलता था। आज इन्सान राम के स्वरूप को कुछ और दृष्टि से देखता है, और रावण के स्वरूप को कुछ और दृष्टि से देखता है। इस प्रकार की पूर्व घटित घटनाएं अनेक आ सकती हैं लेकिन वर्तमान जीवन का परिमार्जन करना है तो उन दोनों तत्त्वों पर नियन्त्रण लगाना होगा।

अर्थ, काम पर धर्म और मोक्ष का नियन्त्रण हो।

धर्म और मोक्ष इन दोनों को आगे पीछे रखता है। ये कविताएं

कवि की बनाई हुई है और कवि ने सांसारिक मनुष्यों की भावनाओं को ध्यान म रखकर धम और मोक्ष के साथ काम और अर्थ को भी जोड दिया। वीतराग देव ने कहा है—

> तहारुवस्स समणस्स माहणस्स वा अन्तिए एगमवि
> आयरिए धम्मिय सुवयण सोच्चा निसम्म तओ
> जायसवेगे जायसड्ढे तिव्वधम्माणुरागरत्ते से ण
> जीवे धम्मकामए पुण्ण कामए सग्ग कामए मोक्ख कामए
>
> —भगवती सूत्र

—तथारूप श्रमण अर्थात निग्रन्थ और महान अर्थात् वीतराग वाणी का अनुसरण करने वाला श्रावक उनके पास से वीतराग देव का धम युक्त एक भी सुवचन सुनकर वह सवेग युक्त होता है, श्रद्धा सम्पन्न होता है तो वीतराग देव के कहे हुए धम के प्रति तीव्र धर्मानुराग उत्पन्न होता है। और जब तीव्र अनुराग पदा हुआ तो सम्यग् दृष्टि-हेय, ज्ञेय-उपादेय का ज्ञान भी प्राप्त हो गया उसने आत्मा परमात्मा का रहस्य समझ लिया, यह भी समझ लिया कि पुण्य जानने योग्य है ? ग्रहण करने योग्य है ? अथवा छोडने योग्य है ? और उसके साथ ही काम क्या है, अर्थ क्या है ? मोक्ष क्या है ?

बन्धुओ, अब जरा इन वाक्यो के अर्थ की तरफ ध्यान दीजिए और उस दृष्टि से चिन्तन करिए। जिसमे धम के प्रति प्रगाढ श्रद्धा होगी, वही धम की कामना करता है। कामना अर्थात् एक दृष्टि से धम की आशा आकाक्षा करना, आशा करना, अभिलाषा करना यह सब अर्थ इसमे समाहित हैं। यह मेरा कथन नहीं है। कवि का भी वचन नहीं है स्वय भगवान श्री वीतराग देव की स्पष्ट वाणी है। तब यह कसे कहा जा सकता है कि सवथा सभी कामनाओ से मुक्त रहना चाहिए। मुक्त भी होते हैं पर व्यवहार म, वह कौन सी कामना से मुक्त होने की बात है ? यह समझने की आवश्यकता है। उस कामना से हम मुक्त रहना चाहिए जो मोहजनित हो जिसमे

एकान्त, रूप से केवल अथ और काम की प्राप्ति ही ध्येय रूप म हो। केवल अथ और काम को चरम लक्ष्य मानकर जो चलना चाहे तो वह इस तरह की कामना त्याज्य है। पर जा जीवन के ध्येय रूप म परमात्म स्वरूप की प्राप्ति का मानकर चलता है वास्तविक सस्कारित जीवन को प्राप्त करना चाहत हैं वे इसकी कामना को इसकी आशा को या आकाक्षा को त्याग कर नही चल सकते।

जीवन क्या है ? इस प्रश्न को हल करन के लिये वह धम्मकामये धम की कामना करके चलता है। धम्मकामये शब्द क साथ-साथ आगे जो शास्त्र पाठ आया है पुण्णकामय। वह पुण्य की भी कामना करता है।

कुछ तत्त्वज्ञ यह भी कहते हैं कि पुण्य की कामना क्यो करता ह ? ता वीतराग वाणी के उद्घापक स्पष्ट कहते हैं कि चू कि मानव आज निखालिस आत्म स्वरूप मे नही है, इसलिए शुद्ध आत्म स्वरूप को प्राप्त करने के लिए सहायक रूप म पुण्य की भी कामना करनी होगी। आत्मा आज के मानव के रूप म शुद्ध बुद्ध और मुक्त नही है। शरीर का और कर्मों का पिण्ड आज उसके साथ लगा हुआ है। उस शरीर पिण्ड से या कमपिण्ड स आधारित आत्मा के शुद्ध स्वरूप को प्रकट करना है ता आपका पुण्य की आशा करनी होगी। अगर आप और चिन्तन करेंगे तो ज्ञात होगा कि जिस अपने शरीर पिण्ड के साथ आत्मा है यह शरीर पिण्ड क्या है ? पुण्य का फल हो ता है। तीथकर नाम कम की प्रकृति भी पुण्य का उत्कृष्ट फल है। इस प्रकार पुण्य क फल को देखें तो मनुष्य का जन्म मिलना आय क्षेत्र का मिलना पाच इन्द्रियो की निरोगता प्राप्त होना और वीतराग दव के धम को श्रवण करने का अवसर मिलना आदि सब पुण्य प्रकृति रूप कम का फल कह सकते हैं। कामना रहित हो सकत है, पर क्या

आप बिना शरीर के द्वारा उद्यम किए कामना रहित हो सकते हैं ? नहीं। बिना शरीर के किसी सांसारिक प्राणी ने अपना पूर्ण विकास प्राप्त नहीं किया। चाहे व तीर्थंकर ही क्यों न रहे हों। वज्रऋषभनाराच संहनन और समचतुरस्रसंस्थान तीर्थंकरों के और अन्य पुण्यशाली जीवों के होते हैं और ये सभी पुण्य के फल कहे गये हैं। उस पुण्य प्राप्ति की स्थिति का तीर्थंकर जैसे प्रबल महापुरुष भी साधक अवस्था में नहीं छोड़ सके हैं। शास्त्रकारों ने इस पुण्य के लिए कहा है कि यह जानने योग्य तो है ही, पर साथ ही ग्रहण करने योग्य भी है और त्यागने योग्य भी है।

आप प्रश्न करेंगे कि जब पुण्य ग्रहण करने योग्य है तो मोक्ष क्या है ? क्योंकि पुण्य की जब तक कामना होगी परिपूर्ण मोक्ष नहीं हो सकता है ?

इस प्रश्न का समाधान शास्त्रकार अपनी दृष्टि से देते हैं जीवन की तीन अवस्थाएँ मानी गई हैं। प्रारम्भिक, मध्यम और अन्तिम। इन तीन अवस्थाओं में से गुजरते हुए प्राणी का पुण्य का तथा सभी तरह की आशाओं का, आशाओं को छोड़े इसका स्पष्ट उल्लेख वीतराग वाणी में है। वीतराग वाणी यथार्थ के धरातल पर चलती है वह हवाई महल नहीं है।

प्राणी वर्तमान में साधना के धरातल पर चल रहा है। उसे अपने जीवन का निर्वाह भी करना है अपने परिवार, समाज और देश के प्रति भी उसके कुछ कर्त्तव्य हैं उनका निर्वहन भी करना है। आज की परिस्थितियों में भी प्राणी को निपटना है। राष्ट्र में एक पवित्र वातावरण के निर्माण में भी उसे अपना योगदान देना है। अपने परिवार और समाज के प्रति भी उसके जो कर्त्तव्य हैं उनको पूरा करते रहना है और यह सब करते हुए अपने जीवन को भी चलाना है। किन्तु यह सब कैसे ? यही प्रश्न हमारे सामने बार बार आता है कि जीवन जीवन क्या है इसे कैसे जाना जाय ? कैसे इस

समता के धरातल पर लाया जाय। समता की पराकाष्ठा तक इसे कैसे पहुंचाया जाय ?

यदि इन प्रश्नों को हल करने के लिए अपने सभी प्रकार के कर्त्तव्यों का पालन करने के लिए और जीवन की चरम परिणति, चरम ध्येय को प्राप्त करने के लिए प्रयत्नशील रहना है तो उसके लिए भी वर्तमान जीवन आवश्यक है। वर्तमान जीवन से चलते हुए चरम लक्ष्य तक पहुँचने के लिए पुण्य उपार्जन करना आवश्यक है, उसका एकान्त त्याग करने की बात करना युक्ति संगत नहीं है। वह वीतराग देव के रूप में पहुचने के लिए संस्कारित भूमिका नहीं है। हां साधना के चरमबिन्दु पर जब प्राणी पहुंच जावे तब यह पुण्य भी त्यागने योग्य हो जावेगा। इससे पहले पुण्य छोड़ने योग्य नहीं है पुण्य सर्वथा हेय रूप में नहीं समझा जावे, पर त्यागने योग्य भी समझा जावे। यह हमारा सूत्र है। साधना की पराकाष्ठा पर चरम परिणति पर जब प्राणी पहुँच जावे तब सभी प्रकार के पुण्य भी त्यागने योग्य है। इसका ध्यान रखिए। इसको एक दृष्टान्त देकर मैं स्पष्ट कर दूँ ताकि आपकी समझ में ठीक तरह से यह तत्व आ जाय।

नाव भी आखिर छोडनी है

किसी ने हमें यह जानकारी दी कि समुद्र के दूसरे किनारे पर एक कोई बहुत सुन्दर नगर है बड़े भव्य भवन वहां बने हुए हैं जहां कि बहुत उच्च कोटि के मणि माणिक्य हमें मिल सकते हैं। अब किसी जानकार से हम पूछते हैं कि समुद्र के उस किनारे पर कैसे पहुँचा जाय। जानकार व्यक्ति आपको जानकारी देता है कि देखो भाई इस किनारे पर जहां हम हैं वहां घाट बने हुए हैं। उन घाटों पर दो प्रकार की नौकाएँ हैं। एक पत्थर की बनी हुई है और दूसरी लकड़ी की। आप यह जानकारी कर लेना कि कौन-सी नाव पत्थर

की है और कौन सी लकडी की। यह जानकारी करने के बाद पत्थर की नाव को तो आप छोड देना, और लकडी की नाव ले लेना उसमे बठकर समुद्र के परले किनारे पहुँच जाना वहा जाकर इस लकडी की नाव का भी छोड देना है, और किनारे पर उतर कर अपने गन्त व्यस्थल पर पहुँच जाना है। लेकिन एक बात है, बीच समुद्र म तरग नही लाना है और कही उस तरग म आप यह मत सोच बठना कि इस लकडी की नाव को जब छोडना ही है तो अभी क्या न छोड दिया जाए। किनारे तक पहुचने तक इस नाव के बाझे को क्या ढोया जाय। ऐसा मत करना। केवल किनारे पर पहुँचने के बाद ही इसको त्यागना है, यह ध्यान मे रखने की बात है। साथ ही यह भी ध्यान मे रखना है कि जिसने हमे इस किनारे पहुँचाया उस बिचारी नाव को किनारे पहुच कर कैसे छोडें ? यह विचार करके उससे चिपके भी नही रहना है। किनारे पर पहुँचते ही उस तुरन्त छोड देना है और अपने लक्ष्य की तरफ बढ जाना है। अगर उस किनारे पहुचकर भी उस नाव म ही बठे रहे तो आपका जो लक्ष्य है—चरम मोक्ष की प्राप्ति उसे आप प्राप्त नही कर सकेंगे जसे जिस ध्येय से आप वहा जा रहे हैं मणि माणिक्य आदि के लिये उन्हे प्राप्त नही कर सकेंगे। क्योकि मणि माणिक्य या मोक्ष जीवन का परम लक्ष्य प्राप्त करना है इसलिए किनारे पर पहुँचते ही हमे नाव को छोड देना है। किनारे पहुच कर लकडी की नाव को छोड देंगे तो भव्य भवन रूप मोक्ष म पहुच जावेंगे।

तो जिस तरह स पत्थर की नाव का तो शाश्वत रूप से त्याग कर देना है और लकडी की नाव को ग्रहण कर लेना है। लकडी की नाव को ग्रहण करते हुए भी अन्त म उसे भी छोड देना है उसी तरह स हमारे जीवन के ध्येय का हम प्राप्त करने म सहायक रूप पुण्य को तो ग्रहण करना है और डुबाने रूप पाप का पहले ही सवथा छोड देना है। ध्येय की प्राप्ति पर पहुचने पर पुण्य को भी छोड कर

अपने गतव्य की ओर चल देना है। इससे स्पष्ट है कि पुण्य मोक्ष प्राप्ति की साधना में सहायक रूप है जैसा कहा है वह समर्थ सहकारी कारण सामग्री के अन्तर घटे मे है उपादान नहीं केवल निमित्त मानकर उसे ग्रहण करना है। उपादान की प्राप्ति पर निमित्त को छोड देना है। पर अगर कोई पुण्य और पाप दोनो को त्याज्य मानकर पुण्य को मार्ग के बीच में ही त्याग दे तरग आने पर तो क्या होगा? क्या यह उस प्राणी के लिए उचित होगा? जिस प्रकार समुद्र के बीच में नाव को नही त्यागा जा सकता उसी प्रकार सहायक रूप पुण्य को भी मोक्ष प्राप्ति की साधना की चरम परिणति तक नहीं त्यागा जा सकता।

अगर किसी ने पुण्य को बीच मे ही छोड दिया जैसे कि नाव को उस आदमी ने तरग मे आकर समुद्र के बीच मे त्याग दिया तो आप सोचिए कि उसकी क्या दशा होगी? स्पष्ट है वह समुद्र के बीच मे ही डूब जायेगा। तो विवेकी पुरुष ऐसा कदापि नही करेगा। विवेकी पुरुष तो किनारे पर पहुचने पर ही उसे त्यागेगा। अब किनारे पर भी पहुच गया पर वहा नौका को पकड कर बैठ जाए तो लक्ष्य पर नही पहुच सकेगा, नाव मे ही बैठा रहेगा। इस प्रकार जैसी उस नौका की स्थिति है, ठीक वैसी ही पुण्य की स्थिति समझिए। यह स्थिति जानने योग्य है साधना की अवस्था तक ग्रहण करने योग्य है। यह इसका शास्त्रीय अर्थ है। पुण्य का कूल यानि किनारे पर पहुचने अर्थात् १४वे गुणस्थान की अवस्था मे पहुचने पर ही त्याग करना है।

तो ये तीन अवस्थाएँ बताई हैं। पत्थर की नही लकडी की नाव मे बैठना है। बीच समुद्र मे उसे नहीं छोडना है किनारे पर पहुचने के बाद उसमे बैठे नहा रहना है।

स्वर्ग की कामना का अर्थ

एक बात ज्ञानियो ने और बताई है। आप कहेंगे हमारी आत्मा

यह सोचकर जितनी देर हवाई जहाज ने वहां विश्राम लिया उतनी देर तक ही विश्राम करके हवाई जहाज मे बठकर कलकत्ता के लिये प्रस्थान कर गया तो कलकत्ता पहुच जावेगा। जितनी देर वह वहा रहता है उतनी देर तक उस भव्य भवन मे विश्राम करता है और उसी दृष्टि से उसकी कामना भी करता है तो वह उसे भवना की कामना करता हुआ भी कलकत्ता ही पहुचता है। इसी प्रकार केवल इस विश्राम की दृष्टि से शास्त्रकारों ने कहा है—"सग्ग कामए

इसका इतना ही अर्थ समझिये कि विश्राम स्थल पर थोडा विश्राम ले ले, अपनी यात्रा की थकान उतार ले और फिर अपनी यात्रा अन्तिम लक्ष्य प्राप्ति हेतु शुरू कर द।

इसी हेतु आगे कहा है—मोक्ष कामय।

मोक्ष की कामना लेकर चलता है और बीच म विश्राम कर लेता है अत यह आकाक्षा इसम सम्बन्धित है इसलिय त्याज्य नहीं है।

अब कोई यह प्रश्न करे कि मोक्ष की आकाक्षा करने म और अर्थ और काम की आकाक्षा करने मे क्या अन्तर है?

जहा मोक्ष की आकाक्षा करना प्रकाश है वहाँ अर्थ और काम की आकाक्षा करना अन्धकार है अभिलाषा करने का तात्पय अराजकता की इच्छा करना नही है। मोक्ष की अभिलाषा रखते हुए अर्थ और काम मे उलझ जाता है तो वह अपने गन्तव्य स्थल तक कसे पहुचेगा? अपने चरम लक्ष्य को कसे प्राप्त करेगा?

अब कोई आगे चलकर कहे कि यह क्या आकाक्षा आकाक्षा लगा रखी है। हम कोई किसी तरह की आकाक्षा नहीं रखते है। तो यह भी कसे हो सकता है? एक व्यक्ति जयपुर जसे शहर म इधर उधर परिभ्रमण कर रहा है। इधर उधर पथभ्रष्ट-सा लक्ष्य हीन होकर भटकता फिर रहा है उसे कोई पूछता है कि भाई इधर उधर क्यो भटक रहे हो, यह सारा श्रम क्या कर रहे हो?

जाना चाहते हो ? अगर इसके उत्तर म वह यह कहे कि यह मुझे मालूम नही। तो उसे आप क्या कहगे कि यह ता पागल मालूम होता है।

वसे ही इस जीवन म रहते हुए आपसे अगर पूछा जावे कि आपका लक्ष्य क्या है आप कहा जाना चाहते हैं क्या करना चाहते हैं ता आप तत्काल उत्तर देंगे कि हम अपने जीवन को इस तरह से सस्कारित करना चाहते हैं कि जिसमे 'कि जीवनम् जीवन क्या है इसके हल को ढूँढ सकें और ढूँढ कर उस पर आचरण करते हुए उसके अतिम लक्ष्य को प्राप्त कर सकें। यह भी आशा है इसको दूसरे शब्दा म कामना कह सकते हैं। जसा कि तीर्थकर भगवान के लिए नमोत्थुण म पाठ आया है सम्पविउओ कामाण यानि मोक्ष को प्राप्ति की कामना रखने वाले ऐसे तीर्थकर भगवान के लिए भी कामना का विशेषण लगा है ता नीचे के साधका के लिए कोई आपत्ति नही है।

पर इसके विपरीत आप यह कह बठें कि हमारा ता कोई ध्येय नहीं है, ता क्या बिना ध्येय क आप भी पागल की तरह यह सब क्रियाएँ कर रहे हैं ? इस तरह स बिना ध्येय की क्रियाएँ करने से क्या लाभ होगा ?

प्राणी अगर निश्चित ध्येय के साथ चलता है और अपना एक व्यवस्थित कार्यक्रम बनाता है ता मार्ग की भी वह अभिलाषा रख सकता है। आसक्ति के साथ वह अर्थ और काम स हो क्या नहीं रहता, मात्र अनित लगाव उनका उसम नहीं रहता। वह बीच समय म कर्माविम् वह काम और अर्थ का भी आचरण करता ता परिवार के प्रति अपने कर्तव्य निर्वहन आदि के लिए करता है मार्ग और धर्म के अन्तरपुट म उनको रखकर चलता है। गृ अवस्था में रहते हुए भी मर्यादित जीवन सुसस्कारित जीवन

रहा है। धर्म अर्थ, काम और मोक्ष की सही रूप मे उपासना आकांक्षा करते हुए अन्तर मन में धर्म और मोक्ष का पुट देता हुआ सुसंस्कारित जीवन बिता रहा है, तो उसकी यह प्रार्थना सार्थक है। जैसा मैं पूर्व में उच्चारण कर आया हूँ कि— धर्म काम धन मोक्ष इत्यादि मन वांछित सुख पूरो।"

आज की स्थिति पर जब हम विचार करते हैं तो लगता है— आज दुनियां में व्यक्ति की स्थिति एक मरीज की स्थिति जैसी बन रही है। इसको एक उदाहरण से स्पष्ट कर लें एक रोगी अत्यन्त पीड़ित था। अन्दर में दाह ज्वर लग रहा था और ऊपर से भी चमड़ी जल रही थी। ऐसा मरीज एक विचक्षण वैद्य के पास पहुँचा। उसने अपनी सारी शारीरिक स्थिति रखते हुये कहा—वैद्यराज जी, ऐसी दवा दीजिये जिससे मेरा अन्दर का दाह भी समाप्त हो जाय और बाहर की जलन भी समाप्त हो जाय। वैद्यराज जी बड़े अनुभवी थे। उन्होंने चार पुड़ियायें बनाई और उन चार पुड़ियाओं में दो सुबह शाम लेने के लिये कहा—भाई ये दो पुड़िया तो शहद में मिलाकर सुबह शाम में ले लेना और ये दो पुड़ियायें जिसको पानी में घोलकर सुबह भी लेप लगायें और शाम को भी लेप कर लेना। इन चारों पुड़ियाओं को लेने से तुम्हारी बाह्य और आभ्यन्तर पीड़ा समाप्त हो जायेगी। मरीज को विश्वास था। उसने चार पुड़िया ग्रहण की और घर पर पहुंचा। घर पहुंचकर शहद लेने की दृष्टि से वह अन्दर गया और शहद लाया, किन्तु जो पुड़िया शहद में लेने की थी उसको उसने पानी मे घोलकर लेप कर लिया और जो पुड़िया पानी में घोलकर लेप करने की थी उसको उसने शहद में मिलाकर पेट में ले लिया। चमड़ी पर लेप करने की और शहद मे अन्दर में लेने की पुड़िया को वह भूल गया और विपरीत दशाओं में पुड़िया को ग्रहण किया। इससे जो अन्दर की जलन थी वह और भी बढ़ गई और जो

बाहर की ताप की स्थिति थी वह भी अत्यधिक उग्र हो गई। उसने सोचा शायद एक पुड़िया से ऐसा हो गया है दूसरी पुड़िया और ले लूँ तो इसी तरह शाम को भी विपरीत दशा में पुड़ियायें ले लीं—जो खाने की थी उसका लेप कर लिया और जो लेप करने की थी उसको शहद में मिलाकर चाट लिया। इससे इतनी बीमारी बढ़ गई कि रात्रि शान्ति से नहीं बीती। उसने सोचा रात्रि में मैं मनुष्य लोक में हूं या नहीं हूं इतनी वेदना उसको सताने लगी। प्रातःकाल वह फिर वैद्यराज जी के पास पहुंचा और अपना हाल कहने लगा। वैद्यराज जी बड़े अनुभवी थे। बीमारी का हाल सुनकर और सारी स्थिति का अध्ययन कर पूछा—कौन कौनसी पुड़िया किस किस प्रकार ली है? तो उसने बतलाया कि अमुक अमुक प्रकार ली है। वैद्यराज जी समझ गये कि मरीज ने उल्टी पुड़ियायें ले ली हैं। जो पुड़िया खाने की थी उसका चमड़ी पर लेप कर लिया और जो लेप करने की थी उसको शहद में डालकर खा लिया इसलिये तुम्हारा रोग बढ़ गया है। वैद्यराज जी ने दुबारा उसे चार पुड़ियायें दी और ठीक प्रकार समझा दिया जब वह दुबारा दवा को उचित विधि से यथास्थान लेता है तो उसका रोग मिट जाता है। यह एक रूपक है। आज भी इसी प्रकार प्राणी यतियों और साधुओं के पास अपने जीवन में प्रश्न को हल करने के लिए—धार्मिक जीवन बिताने के लिए, पहुँचता है। सन्त महात्मा भी यही कहते हैं कि दो पुड़िया को अन्दर में लो और दो पुड़ियाओं का बाहर में लेप करो। लेकिन लोग बातें क्या कर रहे हैं? उनको उल्टी सीधी ले लेते हैं। ये चार पुड़ियायें हमारे पास कौन सी हैं? धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की पुड़ियायें हैं। अब इन चार पुड़ियाओं में से दो पुड़िया जो धर्म और मोक्ष की हैं वह अन्दर में लो शहद के साथ जिससे तुम्हारा जीवन पवित्र बने और सत्कारित जीवन बने और
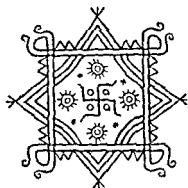
परम श्रद्धेय आचार्य श्री नानालालजी म० सा०

की

पीयूष-वर्षिणी प्रवचन गंगा

जन मन के पावन धाम !

छोटेलाल पालावत

(कपड़े व धागे व्यापारी)

पुरोहितजी का कटला

जयपुर फोन ७०६५४

जीवन को सदसंस्कार और सदविचार

से

पावन करने वाली संत वाणी

सबके लिए सुखद हो !

□

पूनमचन्द बोथरा (कपड़े के व्यापारी)

पथारवाड़ी

(जि कछार आसाम)

सत्कारित जीवन बनकर जीवन क्या है इस प्रश्न का हल हो सके। बावों की जो दो पुड़ियाएँ हैं—अर्थ और काम की, इनको ऊपर लेप के रूप में लें। परन्तु आज की दुनिया उल्टी चल रही है। काम और अर्थ की पुड़ियाओं का अन्दर लिया जा रहा है उसके अन्दर ग्रस्त होते जा रहे है और धर्म और मोक्ष की पुड़ियाओं का लेप लगाया जा रहा है। धार्मिक कहलाने वाले पुरुष भी विचारक बन के लिए आलोचना का विषय बन रहे हैं। इसीलिए आज धर्म भी आलोचना का विषय बन जाता है। आज बड़े आदमी चोर बाजारी करते हैं धारी में अपना व्यापार करते हैं। ऊपर से धार्मिक बनते हैं अन्दर में अधार्मिक भावनाएँ होती है। इसलिये हम यथार्थता की भूमि में जीवन का चिन्तन करता है और जीवन के प्रश्न का हल करना है। कि वास्तव में जीवन क्या, है ? यह प्रश्न भी तभी हल होगा जब आप धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की वास्तविक विधि को समझेंगे।

लालभवन
२१ जुलाई १९५२

सुयाण धम्माण ओगिण्हणयाए उवधारणयाए
अब्भुट्ठयव्व भवइ ।
— स्थानांग सूत्र

सुने हुए धम को ग्रहण करने, उस पर आचरण करने को तत्पर रहना चाहिए।

---

५ | वधुत्व भावना

जय जय जगत शिरोमणि हूँ सेवक म तू धणी ।
अब सौंगु गाढी बणी प्रभू आशा पूरो हम तणी ।
मुझ मेहर करो चन्द्र प्रभु, जगजीवन अन्तर्यामी ।
भव दुख हरो सुनिए अज हमारी ओ त्रिभवन स्वामी ॥

व धुओ, यह च द्र प्रभु भगवान की प्रार्थना है। आपके सामने प्राथना का जो शाब्दिक परिवतन आ रहा है वह कविता का भी परि- वतन है। लेकिन प्रभु क गुणा का,भगवान की शक्ति का भगवान के पवित्र स्वरूप का परिवतन नही है। परमात्मा के चरणो म हम क भी शब्दा से प्राथना करें प्राथना की पक्तिया हिन्दी कविता के रूप हा सस्कृत भाषा म हा, प्राकृत इंग्लिश या अय उदू फारसी अ किसी भी भाषा म क्यो न हो इस भाषा के आवरण के पीछे का विस्मरण नही करना चाहिए। भाषा के पर्दे को हटा परमात्मा के निखालिस स्वरूप को देखने की आवश्यकता है।

जय भगवान की या भक्त की ?

प्रभु के लिए विशेषण दिया गया है कि जय जय जगत शिरोमणि हे जगत के शिरोमणि यहाँ जगत को एक शरीर माना गया है उसके सिर की कल्पना की गई और उसके ऊपर मणि के रूप म प्रभु को याद किया गया है। जो जगत् के सिरमौर हैं जगत के स्वामी हैं उस स्वामी की जय चाही गई है। लेकिन सोचने का विषय है कि क्या कवि प्रभु की जय बोले तब उनकी जय होगी और प्रभु की जय न बोले तो भगवान की जय नही होगा। इस कल्पना से यदि कोई सोचता है तो यह सोचना ठीक नही है ? भगवान की तो सदा जय है। आपके जय बोलने से उनकी जय होगी और आपके जय नही बोलने से उनकी जय नही होगी यह बात नहीं है। कवि या भक्त भगवान की जय बोलता है तो वह भगवान की नही, बल्कि अपनी जय चाहता है। कभी-कभी हिन्दुस्तान की जनता भारत का जय बोलती है। भारत क्या है ? भारत देश है या भूमण्डल है या भारत के अन्दर रहने वाली जनता है। आप सोचेंगे कि भारत का जय के पीछे भारत सरकार की जय नही है लेकिन भारत के अन्दर रहने वाले प्रत्येक व्यक्ति की जय है। जसे भारत की जय में भारतवासियों की जय आती है, और पाकिस्तान का जय बोलने से पाकिस्तानवासियों की जय मानी जाती है ऐसे ही अमेरिका, इग्लैड आदि विभिन्न देशो की जय विभिन्न सरकारों की जय वहा की जनता की जय समझी जाती है। आप सोचिए यह तो एक एक देश की सरकार की जय है, लेकिन भगवान के राज्य मे कौन सा देश है। हिन्दुस्तान है या पाकिस्तान, अमेरिका इग्लैड रूस, जापान क्या है, भगवान के राज्य मे समग्र देश है। एक दृष्टि से भगवान तो समग्र के अन्दर बैठे हुए हैं। समग्र ससार प्रभु की छत्रछाया के नीचे है। एक एक देश की, सरकार की जय बोलने से एक एक की जय

होती है और अन्य देश की पराजय इसमें चाही जाती है लेकिन भगवान की जय बोलने से समग्र विश्व की जय चाहे और सारे संसार के अन्दर रहने वाले प्राणियों की जय समझें, तभी वह भगवान की जय बोल सकता है। जो व्यक्ति भगवान की जय बोल करके यदि यह चाहे कि प्रभु मैं आपकी जय बोल रहा हूँ, मैं आपका भक्त हूँ, आप मेहरबानी करना, मैं पड़ोसी के साथ लड़ रहा हूँ इसलिए आप मददगार हो करके पड़ोसी की पराजय करना और मेरी जय करना। इस भावना से अगर जय बोल रहे हैं तो आपने प्रभु के स्वरूप को नहीं समझा है और आपने खासा रूप तौर पर भगवान को अपने साथ घसीट लिया है।

आज के अधिकांश मनुष्य प्रभु को एक तरह का खिलौना समझ रहे हैं। थोड़ी सी कठिन परिस्थितियाँ सामने आईं और झट से भगवान को याद कर लिया। जरा कभी किसी व्यक्ति से टकराहट हो गई, लड़ने लगे कि झट से भगवान को पुकारने लगे—भगवान आइए, आइए यह मेरे से दुश्मनी कर रहा है इसका खात्मा करिए और कदाचित् दूसरा भी भक्त हो और भगवान को वह भी पुकारे कि भगवान आइए मुझसे लड़ने वाले का खात्मा करिए तो कहिए क्या होगा? दोनों भगवान के भक्त और भगवान रह गया एक अगर भगवान आए तो किसकी मदद करे। इस तरह से भगवान को घसीट करके मनुष्य राग द्वेष की परिणति में डाल देता है और भगवान का दुरुपयोग करने को तैयार होता है जैसा कि उनका खिस मानस बन गया है। वह अपने घर के अन्दर वस्तुओं के टुकड़े करता है मकान का विभाग करता है और अन्य चीजों को बाँटता है जमीन के साथ साथ बाँटने और गाँव के टुकड़े करता है और इससे भी वह सन्तोष नहीं पाता तो वह भगवान को भी टुकड़ों में बाँटना चाहता है। भगवान को भगवान के सही स्वरूप में न समझ करके उनको टुकड़े टुकड़े के अन्दर बाँट कर भगवान को एक पक्ष में लाकर खड़ा

कर देता है वह भक्त नहीं है वह वस्तुत भगवान की जय बोलने का अधिकारी नहीं है। भगवान की जय बोलने का अधिकारी वही है कि जिसने समग्र ससार को भगवान के राज्य म माना है और समग्र ससार म रहने वाले प्राणियो के प्रति वह अपना आत्मीय भाव रखता है और उनके साथ भी यथाशक्ति यथासम्भव समभाव रखने की चेष्टा करता है और एक परिवार के रूप म सारे ससार को देखने का प्रयास करता है वही व्यक्ति भगवान की जय बोलने का सच्चा अधिकारी है।

ब धुओ यह जो प्राथना का प्रसग चल रहा है वह हमारे मस्तिष्क के विकारो को सुलझाने के लिए है। प्राथना के अन्दर कभी कभी कवि भावावेश म आकरके कविता के प्रसग स वह अपनी लघुता व्यक्त कर देता है। जसे कि इसमें कहा है—

जय जय जगत शिरोमणि हू सेवक न तू धणी।
अब तोसू गाढ़ी बणी प्रभु आशा पूरो हम तणी।
मुझ म्हैर करो चन्द्र प्रभ जग जीवन अतरजामी।
भव दुख हरो सुणिए अज हमारी त्रिभवन स्वामी।

कवि ने प्रभु के ऊपर उत्तरदायित्व डाल दिया है कि भगवन! आप सिरमौर हैं मैं आपकी जय बोल रहा हू। आप स्वामी हैं और मैं सेवक हू। इसलिए सेवक का उत्तरदायित्व आप पर है। बहुत मजबूरी के साथ आ गया हू। सेवक की आशा की पूर्ति करना यह आपका काम है और भवसागर से पार करना भी आप के अधीन हैं। इस कविता के माध्यम से भक्त न सब कुछ अपना उत्तरदायित्व परमात्मा के चरणो म रख दिया है। लेकिन आज का युग जसा सोचने का अभ्यासी है वस ही उसकी कल्पना भी दौड़ती है। तो उस दृष्टि से यह सोचना होगा कि क्या कोई भी भगवान की सेवा म बैठकर, भगवान के नाम की कुछ कड़िया का उच्चारण करके, भगवान के नाम की माला पर करके निश्चित होकर बठ जावे, कि

होती है और अन्य देश की पराजय इसमें मानी जाती है लेकिन भगवान की जय बोलने में समग्र जिन की जय मानें और सारे संसार के अन्दर रहने वाले प्राणियों की जय समझें, तभी यह भगवान की जय बोल सकता है। जो व्यक्ति भगवान की जय बोल कर यदि यह चाहे कि प्रभु मैं आपकी जय बोल रहा हूं, मैं आपका भक्त हूं, आप महरबानी करना, मैं पड़ोसी के साथ लड़ रहा हूं इसलिए आप मददगार हो करके पड़ोसी की पराजय करना और मेरी जय करना। इस भावना से अगर जय बोल रहे हैं तो आपने प्रभु के स्वरूप को नहीं समझा है और आपने सांसारिक तौर पर भगवान को अपने साथ घसीट लिया है।

आज के अधिकांश मनुष्य प्रभु को एक तरह का खिलौना समझ रहे हैं। थोड़ी सी कठिन परिस्थितियां सामने आईं और झट से भगवान को याद कर लिया। जरा कभी किसी व्यक्ति से टकराहट हो गई, लड़ने लगे कि झट से भगवान को पुकारने लगे—भगवान आइए, आइए यह मेरे से दुश्मनी कर रहा है इसको खत्म करिए और कदाचित दूसरा भी भक्त हो और भगवान को वह भी पुकारे कि भगवान आइए मुझसे लड़ने वाले को खत्म करिए तो कहिए क्या होगा? दोनों भगवान के भक्त और भगवान रह गया एक अगर भगवान आए तो किसकी मदद करें। इस तरह से भगवान को घसीट करके मनुष्य राग द्वेष की परिणति में डाल देता है और भगवान का दुरुपयोग करने को तैयार होता है जैसा कि उनका चित्त, मानस बन गया है। वह अपने घर के अन्दर वस्तुओं के टुकड़े करता है मकान का विभाग करता है और अन्य चीजों को बांटता है, जमीन के साथ साथ मोहल्ले और गांव के टुकड़े करता है और इसमें भी वह संतोष नहीं पाता तो वह भगवान को भी टुकड़ों में बांटना चाहता है। भगवान को भगवान के सही स्वरूप में न समझ करके उनको टुकड़े टुकड़े के अन्दर बांट कर भगवान को एक पक्ष में लाकर खड़ा

कर देता है वह भक्त नहीं है वह वस्तुत भगवान की जय बोलने का अधिकारी नहीं है। भगवान की जय बोलने का अधिकारी वही है कि जिसने समग्र ससार को भगवान के राज्य म माना है और समग्र ससार म रहने वाले प्राणियो के प्रति वह अपना आत्मीय भाव रखता है और उनके साथ भी यथाशक्ति यथासम्भव समभाव रखने की चेष्टा करता है और एक परिवार के रूप म सारे ससार का देखने का प्रयास करता है, वही व्यक्ति भगवान की जय बोलने का सच्चा अधिकारी है।

ब धुओ यह जो प्रार्थना का प्रसग चल रहा है वह हमारे मस्तिष्क के विकारो को सुलझान के लिए है। प्राथना के अन्दर कभी कभी कवि भावावेश म आकरके कविता के प्रसग से वह अपनी लघुता व्यक्त कर देता है। जस कि इसम कहा है—

जय जय जगत शिरोमणि हू सेवक न तू धणी।
अब तोसू गाढ़ी बणी प्रभु आशा पूरो हम तणी।
मुझ म्हेर करो चन्द्र प्रभु जग जीवन अतरजामी।
भव दुख हरो सुणिए अज हमारी त्रिभवन स्वामी।

कवि ने प्रभु के ऊपर उत्तरदायित्व डाल दिया है कि भगवन ! आप सिरमौर हैं मैं आपकी जय बोल रहा हू। आप स्वामी हैं और मैं सेवक हू। इसलिए सेवक का उत्तरदायित्व आप पर है। बहुत मजबूरी के साथ आ गया हू। सेवक की आशा की पूर्ति करना यह आपका काम है और भवसागर से पार करना भी आप के अधीन है। इस कविता के माध्यम से भक्त ने सब कुछ अपना उत्तरदायित्व परमात्मा के चरणो म रख दिया है। लेकिन आज का युग जसा सोचने का अभ्यासी है वैसे ही उसकी कल्पना भी दौडती है। तो उस दृष्टि से यह सोचना होगा कि क्या कोई भी भगवान की सेवा म बैठकर भगवान के नाम की कुछ कडियो का उच्चारण करके, भगवान के नाम की माला फेर करके निश्चित होकर बठ जावे, कि

होती है और अन्य देश की पराजय इसमें चाही जाती है लेकिन भगवान की जय बोलने से समग्र विश्व की जय चाहे और सारे संसार के अन्दर रहने वाले प्राणियों की जय समझें, तभी वह भगवान की जय बोल सकता है। जो व्यक्ति भगवान की जय बोल करके यदि यह चाहे कि प्रभु मैं आपकी जय बोल रहा हूं मैं आपका भक्त हूं, आप मेहरबानी करना, मैं पड़ोसी के साथ लड़ रहा हूं इसलिए आप मददगार हो करके पड़ोसी की पराजय करना और मेरी जय करना। इस भावना से अगर जय बोल रहे हैं तो आपने प्रभु के स्वरूप को नहीं समझा है और आपने खासा एक तौर पर भगवान को अपने साथ घसीट लिया है।

आज के अधिकांश मनुष्य प्रभु को एक तरह का खिलौना समझ रहे हैं। थोड़ी सी कठिन परिस्थितियां सामने आई और झट से भगवान को याद कर लिया। जरा कभी किसी व्यक्ति से टकराहट हो गई लड़ने लगे कि झट से भगवान को पुकारने लगे—भगवान आइए, आइए यह मेरे से दुश्मनी कर रहा है इसको खतम करिए और कदाचित दूसरा भी भक्त हो और भगवान को वह भी पुकारे कि भगवान आइए,मुझसे लड़ने वाले को खतम करिए तो कहिए क्या होगा? दोनों भगवान के भक्त और भगवान रह गया एक, अगर भगवान आए तो किसकी मदद करे। इस तरह से भगवान को घसीट करके मनुष्य राग द्वेष की परिणति में डाल देता है और भगवान का दुरुपयोग करने को तैयार होता है जैसा कि उनका चित्त मानस बन गया है। वह अपने घर के अन्दर वस्तुओं के टुकड़े करता है मकान का विभाग करता है और अन्य चीजों को बांटता है जमीन के साथ साथ मोहल्ले और गांव के टुकड़े करता है और इसमें भी यह संतोष नहीं पाता तो वह भगवान को भी टुकड़ों में बांटना चाहता है। भगवान को भगवान के सही स्वरूप में न समझ करके उनको टुकड़े टुकड़े के अन्दर बांट कर भगवान को एक पन्थ में लाकर खड़ा

कर देता है वह भक्त नहीं है वह वस्तुत भगवान की जय बोलने का अधिकारी नहीं है। भगवान की जय बोलने का अधिकारी वही है कि जिसने समग्र ससार को भगवान के राज्य म माना है और समग्र ससार म रहने वाले प्राणिया के प्रति वह अपना आत्मीय भाव रखता है और उनके साथ भी यथाशक्ति यथासम्भव समभाव रखने की चेष्टा करता है और एक परिवार के रूप म सारे ससार को देखने का प्रयास करता है वही व्यक्ति भगवान की जय बोलने का सच्चा अधिकारी है।

बन्धुओ यह जो प्रार्थना का प्रसग चल रहा है, यह हमारे मस्तिष्क के विकारो को सुलझाने के लिए है। प्रार्थना के अन्दर कभी कभी कवि भावावेश म आकर कविता के प्रसग म वह अपनी लघुता व्यक्त कर देता है। जसे कि इसम कहा है—

> जय जय जगत शिरोमणि हू सेवक न तूं धणी।
> अब तोसूं गाढ़ी बणी प्रभ आशा पूरो हम तणी।
> मुझ म्हेर करो चन्द्र प्रभ जग जीवन अतरजामी।
> भव दुख हरो सुणिए अर्ज हमारी त्रिभवन स्वामी।

कवि ने प्रभु के ऊपर उत्तरदायित्व डाल दिया है कि भगवन! आप सिरमौर हैं मैं आपकी जय बोल रहा हू। आप स्वामी हैं और मैं सेवक हू। इसलिए सेवक का उत्तरदायित्व आप पर है। बहुत मजबूरी के साथ आ गया हू। सेवक की आशा की पूर्ति करना यह आपका काम है और भवसागर से पार करना भी आप के अधीन है। इस कविता के माध्यम से भक्त ने सब कुछ अपना उत्तरदायित्व परमात्मा के चरणों म रख दिया है। लेकिन आज का युग जसा सोचने का अभ्यासी है वसे ही उसकी कल्पना भी दौड़ती है। तो उस दृष्टि से यह सोचना होगा कि क्या कोई भी भगवान की सेवा म बैठकर भगवान के नाम की कुछ कड़ियों का उच्चारण करके, भगवान के नाम की माला फर करके निश्चित होकर बठ जाव, कि

भगवान मेरी सब कामनाए पूरी कर देंगे, तो मैं समझता हू कि यह बहुत ही सस्ता रास्ता मान लिया गया है। हाथ हिलाने की आवश्यकता नही है, पुरुषार्थ करने की जरूरत नहीं, इधर उधर कुछ भी प्रयास करने की आवश्यकता नही है इस भावना से यदि इन्सान चलेगा तो वह न प्रभु के स्वरूप को ठीक से समझ पाएगा और न अपने जीवन की समस्याओ को ही हल कर पाएगा। इस प्रकार सोचने से मनुष्य का जीवन परतन्त्र बन जाता है और परतन्त्रता के अन्दर वह अपने जीवन के स्वतन्त्र्य को भूल जाता है। यहा इस प्रार्थना की कडिया मे भी आपको चिन्तन करना है। भगवान को हम स्वामी मान रहे हैं और सेवक की स्थिति मे चिन्तन कर रहे है इसका इतना ही तात्पर्य लेना है कि, प्रभु मैं इस वक्त कर्मों से युक्त हू, कर्मों से आबद्ध हू, कर्मों की जजीरो से जकडा हुआ हू मैं ससार के जेलखाने का कैदी हू इस वक्त मैं आपकी तरह स्वतन्त्र नही हू आप सदा के लिए स्वतन्त्र बन चुके हैं, इसलिए मैं इस परतन्त्रता के बन्धनो से मुक्त होकर इस ससार के जेलखाने से निकल कर आपकी बराबरी के यानी आपके तुल्य शक्ति को सम्पादित करू और अपने जीवन के चरम विकास को प्राप्त करू। इस भावना से मैं आपके चरणो मे इच्छा व्यक्त करता हू कि मैं आपका सेवक हू और इस भव सतति से पार होना चाहता हू। मैं यह नही चाहता हू कि मैं सेवक हू तो सदा के लिए सेवक ही रहू। मैं कभी स्वामी नही बन सकू गा इस भावना का साधना मनुष्य के लिए हितावह नही है। यह भावना मनुष्य के मन मे बन जाय कि स्वामी सदा स्वामी ही रहेगा और सेवक सदा सेवक ही रहेगा तो सेवक के लिए कभी भी उन्नति होने का प्रसग नही होगा जब कि उनके मस्तिष्क मे यह भाव आवें कि मैं भी स्वामी बन सकता हूँ क्योंकि अपने प्रयत्नो से, अपने जीवन को ठीक तरह से समझ करके उसी ढग का पुरुषार्थ करू जिससे कि

स्वामी बना जाय। इस प्रकार मस्तिष्क ऐसी उच्चभावना का बने और इस भावना का सस्कार यदि मनुष्य के मस्तिष्क म हो तो मनुष्य उन्नति पथ पर आगे बढ सकता है किन्तु जब ऐसे सस्कार नही रहते हैं तो वह हतात्साहित होकर मानसिक घुटन का अनुभव करता हुआ सदा के लिए मन मसोस कर बठा रहेगा और कभी भी उन्नति के शिखर पर नही पहुच पाएगा।

अथवादी दृष्टि

शास्त्रकारो ने यह बतलाया है कि तू भले ही अपनी लघुता व्यक्त कर ले। भले ही सेवक बन जाय लेकिन विश्वास इस प्रकार का दृढ रख कि मैं भगवान के तुल्य बन सकता हू। मेरे अन्दर भी वह भावना है मेरे अन्दर भी वह शक्ति है और मैं भी एक दिन उस पद के योग्य बन सकता हूँ। हाँ इस प्रकार का उत्साह जब मनुष्य के मस्तिष्क में आता है तो पुरुषार्थ के क्षेत्र म अपनी गति तीव्र कर देता है और जब सच्चे पुरुषार्थ की एसी स्थिति बने तभी जीवन का सही निर्माण हो सकता है लेकिन वह जीवन के सही रूप को समझे और सही दिशा का अनुसरण कर तभी वह आग बढ सकता है। लेकिन जब जीवन क्या है इसका भी उसका पता नही। किं जीवनम ? इस प्रश्न का हल उसके पास मे नही है ता कसे वह विकास करेगा किस स्थिति मे वह आग बढेगा ? आज मैं आपके सामने जो प्रश्न उपस्थित कर रहा हू कि जीवन क्या है इस विषय मे आपको हमको और सबको सोचना है। यह विषय क्या है इसके सोचने के विषय मे जब चलते हैं तो आज कुछ मनुष्य जिनका दृष्टिकोण ससार के पदार्थों की ओर लगा हुआ है वह प्रश्न कर बठता है वह कहता है—

किं आवश्यकता जीवनस्य ?
अर्थाधिकार स्तम्यानां स्वस्तयव'

"आप जीवन के प्रश्न को हल करना चाहते हैं लेकिन जीवन की आवश्यकता ही क्या है? जीवन की कुछ आवश्यकता हो तो हम समझें। आज तो आवश्यकता अर्थ, अधिकार और कर्तव्य की है। अर्थ के बिना संसार नहीं चल सकता है। आप अर्थ की बात करिये कि अर्थ को कैसे बढ़ायें धन की बात करिये पैसे की बात करिये, व्यापारिक बात करिये। इसके विषय में हमको समझाइये कि कैसे अधिक से अधिक धनवान बनें। इसकी आवश्यकता को तो हम महसूस करते हैं लेकिन इसको छोड़कर जीवन का प्रश्न सामने ला रहे हैं वह हमारी समझ में नहीं आता है। जीवन का यह व्यर्थ का प्रश्न क्या सामने आ रहा है?' ये विचार प्रश्न उन व्यक्तियों के हो सकते हैं जिनकी बुद्धि का विकास आगे नहीं हो रहा है जिन्होंने धन को ही जीवन समझ लिया है जिन्होंने पैसे को ही सब कुछ समझ लिया है और पैसे को जिन्होंने भगवान मानकर अपने आपको पैसे का सेवक समझ लिया है, ऐसे व्यक्तियों के जीवन का वर्णन स्वर्गीय आचार्य श्री कविता में इस प्रकार किया करते थे कि—

पैसा मेरा परमेसर लुगाई मेरी गुरु
छोराछोरी सालिगराम सेवा थारी करूँ।

वे व्यक्ति समझते हैं कि इस संसार में यदि कोई सार तत्व है तो वह पैसा ही है पैसा ही मेरा परमेश्वर है। पैसे से बढ़कर और कोई परमेश्वर नाम का तत्व नहीं है, पैसे से बढ़कर कोई जीवन नहीं है, पैसा ही सब कुछ है। साथ ही अन्य किसी गुरु की भी आवश्यकता नहीं होती है क्योंकि वह हमारे घर में ही है जिसको जग की साक्षी से पत्नी बनाया है वही गुरु है वह जो कुछ कहे उसके अनुसार चलना है और छोरा छोरी याने बच्चे सालिगराम हैं इनकी सेवा करना है। इस प्रकार का दृष्टिकोण रखने वाले व्यक्ति क्या यह प्रश्न उठायेंगे? कि हमारा जीवन क्या है? और

जीवन की आवश्यकता क्या है ? अर्थ अधिकार और कर्तव्य की आवश्यकता तो हम महसूस करते हैं लेकिन जीवन की आवश्यकता महसूस नहीं करते हैं क्योंकि पैसा मिल जाता है और पैसे के लिए यदि जीवन की भी कुर्बानी करनी पड़े तो हम तैयार हैं अर्थ के लिए जीवन का होम देने के लिए हम तैयार हैं। जीवन को समझने की आवश्यकता हमें नहीं है। हम को तो पैसे को समझने की आवश्यकता है। आज उनका दृष्टिकोण अर्थ प्रधान बना हुआ है सत्ता व सम्पत्ति का ही वे सब कुछ समझ कर चल रहे हैं। यह कथन अतिशयोक्ति पूर्ण नहीं होगा कि सत्ता और सम्पत्ति के पीछे अगर जीवन होम दिया जाय, जीवन में खून की नदियाँ बहानी पड़ें तो वे बहाने को तैयार हैं। जीवन की उन्हें परवाह नहीं है। वे सत्ता और सम्पत्ति की परवाह करते हैं। सत्ता और सम्पत्ति का जो यह लक्ष्य बना हुआ है क्या यह उस लोकोक्ति के तुल्य नहीं है।

इसी दृष्टिकोण के कारण आज संसार के अन्दर त्राहि त्राहि हो रही है। आज मनुष्य के जीवन का जीवन नहीं समझा जा रहा है। उसे खिलौना समझा जा रहा है चलते हुए मनुष्य का खून कर दिया जाता है मनुष्य का कत्लेआम होता है। केवल इस सत्ता और सम्पत्ति की सुरक्षा के लिए अधिकांश देश बड़ी से बड़ी सेना तैयार करके, बड़े से बड़े शस्त्रों का आविष्कार करके अणु बम फेंक कर एक दूसरे को नष्ट करने के प्रयास में लगे हुए हैं इस प्रकार की वीभत्स भावना संसार में न मालूम कौन सा ताडव नृत्य उपस्थित करेगी इसका कुछ कहा नहीं जा सकता। आज कुछ ऐसे ही परिणाम दृष्टिगोचर हो रहे हैं। बड़े बड़े शस्त्रों का परीक्षण हो रहा है। इसके पीछे सत्ता और सम्पत्ति का भूत सवार है जीवन को उन्होंने गौण कर दिया है चाहे आप अमेरिका को देखिये चाहे चीन को देखिये और चाहे दूसरे देशों को देखिए, वे चाहते हैं कि हमारे पास जनसंख्या बहुत है कहीं पर लड़ाई छिड़ जाय

तो जमीन रहने को मिल जाय उनकी जनसख्या भी युद्ध आदि के प्रसग से कम होजाय तो उन्हे परवाह नही, लेकिन सत्ता और सम्पत्ति चाहिए। इस दृष्टिकोण को लेकर जो मनुष्य चलते हैं वे क्या जीवन के प्रश्न को समझने की कोशिश करेंगे ? जीवन के महत्व का अकन करेंगे ? जो जीवन का जीवन नही समझते हैं। जीवन को मिट्टी का ढला मात्र समझते है व जीवन की परिभाषा नही समझ सकते हैं। इधर जो ऊपर से आध्यात्मिक जीवन की बातें करते हैं पर अन्दर में उनके भी ऐसे ही विचार रहे तो कह सकते है कि वे भी जीवन की वास्तविक परिभाषा को नही समझ सकेंगे पर यादरखिए यदि वे जीवन के स्वरूप को ही नही समझ पायेंगे तो सत्ता और सम्पत्ति का भी स्थायी रूप से नहीं पा सकेंगे। क्योकि कहा गया है—जीवन के बिना अर्थ व्यर्थ है सत्ता व्यर्थ है और जीवन के बिना कर्तव्य भी क्या हो सकता है। अत जीवन का स्वरूप समझना नितान्त आवश्यक बन जाता है।

धन, यहीं धरा रहेगा

सिकन्दर ने अपने जीवन में सत्ता और सम्पत्ति को बटोरने के लिए मनमाने कर्तव्य बनाये और लूट पाट की। जनता को बहुत पीड़ा पहुंचाई। फिर भी सत्ता और सम्पत्ति से अपने आप को मृत्यु के मुँह से बचा नहीं पाया। मृत्यु के समय वह हाय हाय करके चिल्लाने लगा। कि कोई मुझे मृत्यु से बचाने वाला मिल जाय तो जितनी सम्पत्ति मैंने एकत्रित की है वह मैं देने के लिए तैयार हूं लेकिन कोई भी व्यक्ति उसको मृत्यु से नहीं बचा सका। उसको बचाने वाला कोई नहीं मिला। तो आप सोचिये कि जीवन के स्वरूप को उसने नहीं समझा इसलिए दुनिया को तबाह करके जब गया तो खाली हाथ ही गया। तब उसने यह वहावत चरितार्थ कर दी और उसने अपने साथियों से कहा कि जब जनाजा निकाला तो आप मेरे दोनों हाथ

बाहर रखना, ताकि दुनिया देखे कि सिकन्दर सब कुछ लेकर आया था लेकिन जब जा रहा है तो खाली हाथ वह जा रहा है हाथ फलाकर जा रहा है। यह उसके जीवन से शिक्षा की स्थिति आज प्रत्येक मनुष्य के लिए लागू होती है। मनुष्य जब माता की कुक्षी से बाहर आता है तो किस हालत में आता है? उसकी मुट्ठी बन्द होती है। मुट्ठी बन्द क्या है, यह कुदरत की रचना है, लेकिन शिक्षा के दृष्टिकोण से यह समझना है कि मुट्ठी मे कुछ लेकर आया है पूर्व जन्म में पुण्यवानी अर्जित करके मुट्ठी बाँध कर आया, और इस जन्म मे धीरे धीरे इस पुण्यवानी को खर्च करके मानो मुट्ठी खोल कर हाथ फलाकर जा रहा है अर्थात् जब मृत्यु का प्रसंग आता है, मरने की घड़ी आती है तो खाली हाथ जाता है। यानी पूर्व जन्म की पुण्यवानी लाया था वह खर्च करके यहां जीवन से हाथ धोकर जा रहा है। आज किसके ऊपर मनुष्य अभिमान करता है। आजकल जो बड़े बड़े किले दिख रहे हैं—उनको आज किस दृष्टि से देखा जा रहा है। उस समय जब कि आचार्य श्री आगरा पधारे थे जंगल निपटने की दृष्टि से लाल किले के पास से जा रहे थे उनके साथ में जो आदमी मार्ग दर्शक था कहने लगे आचार्य श्री, यह लाल किला कहलाता है। इसके तीन परकोटे हैं और दो खाइयाँ हैं। तो आचार्य श्री का चिन्तन मुखरित हो उठा। वे कहने लगे जिन्होंने तीन परकोटे और दो खाइयां बनाई उस समय उन्होंने यही सोचा होगा कि इन किलों के अन्दर मेरी आल औलाद मेरे पीछे की सन्तति बहुत सुरक्षित रहेगी उनके लिए उस समय उन्होंने मन माने अन्याय और अत्याचार किये। अब आप देखिये कि किले में कौन सुरक्षित रहा? कहां उनकी आल औलाद है? सत्ता और सम्पत्ति सब कुछ मानने वाले वे स्वयं दुनिया में न रहे, उनकी सन्तान नहीं रही। यह किला आज किसके हाथ में चला गया। आज उस किले का कोई महत्व नहीं है और आज न तो शस्त्र भी कुछ और

हल भी यथास्थान लेना होगा जहाँ परिवार है वहाँ परिवार की दृष्टि से सोचना होगा और जहाँ समाज राष्ट्र आदि की दृष्टि है वहाँ उस दृष्टि से सोचने की आवश्यकता है तथा जहाँ जीवन की समस्या है वहाँ जीवन के धरातल पर ही सोचा जा सकता है। इसी तरह सामाजिक क्षेत्र में भी हमारे कुछ कर्तव्य है। समाज में रहने वाले व्यक्तियों के साथ हमारे कैसे व्यवहार हो उनके प्रत्येक सामाजिक कार्यों में हम किस रूप में उपस्थित हैं क्योंकि व्यक्ति व्यक्ति से भिन्न समाज नाम का कोई तत्त्व नहीं है अतः प्रति व्यक्ति से भ्रातृत्व भावना का व्यवहार करने का प्रयास किया जाए तो स्व पर जीवन का सही रूप हमारे सामने झलकने लगेगा। भले ही वह सामाजिक सदस्य किसी स्थिति में क्यों न हो, चाहे वह आर्थिक दृष्टि से कितना ही कमजोर क्यों न हो। दुनिया की दृष्टि से भले ही वह गरीब हो पर हमारे सम्मुख पैसे की अपेक्षा उसके जीवन की विशेष कीमत है इस प्रकार अर्थ दृष्टि को गौणकर जीवन का अंकन करके यदि समाज के छोटे से छोटे व्यक्ति से आप प्रेम करते हैं छोटे से छोटे व्यक्ति को भाई समझते हैं तो वही वास्तव में जीवन है। लेकिन आज होता क्या है? समाज के अन्दर भी प्रायः वही हिटलरशाही चल रही है। छोटे व्यक्तियों का तिरस्कार करते हैं पैसे के जोश में, पैसे के आवेश में दूसरे व्यक्ति को कुछ भी नहीं समझते। मैं सोचता हूँ कि आज सामाजिक स्थिति में भी मनुष्य की कीमत पैसे से आंकी जा रही है। आज जिसके पास अधिक पैसा है वह समझता है कि मैं ही सब कुछ हूँ वह फूला नहीं समाता है प्रसंग आने पर तारीफ भी उसकी ही होगी कि वाह साहब बड़े पैसे वाले हैं किन्तु वह पैसे वाला कम पैसे वाले की कदर करने लग जाय तो आप चिन्तन कीजिये उसकी प्रतिष्ठा बढ़ जाएगी? जन मानस बोल उठेगा इतना पैसे वाला होकर भी बिना पैसे वाले की कदर कर रहे है। आज

आचार्यश्री ने कहा कि मालूजी आप तो इस जीवन के अन्दर ही
जीवन को सार्थक कर रहे हैं। आप पैसे के पीछे नहीं बह रहे हैं
आप सम्पत्ति का सदुपयोग करके जीवन की कीमत कर रहे हैं।
इस प्रकार जब आचार्यश्री ने कहा तो मालूजी ने उत्तर दिया कि
अन्नदाता मैं क्या कर रहा हूं मैं क्या करने में समर्थ हूं मेरे पास
तो कचरा बढ रहा है उसको साफ कर रहा हूं। जितना कचरा कम
हो जाय उतना ही अच्छा है। वे सम्पत्ति को क्या समझते थे
कचरा। जो सम्पत्ति को कचरा समझ कर चलता है वह कभी
भी जीवन के साथ खिलवाड नहीं करेगा। इसलिए ज्ञानीजन कहते
हैं कि अरे भाई कुछ धर्म की स्थिति को भी ध्यान में रखो।
मालूजी जैसे व्यक्ति समाज के अन्दर आदर्श रूप में होते हैं जिन्होंने
जीवन को पैसे से ऊंचा समझा है जीवन को सत्ता सम्पत्ति और
अधिकारों से ऊपर समझा है। वे जीवन की वास्तविक परिभाषा को
अच्छी तरह समझ चुके हैं।

विवेक से काम लो

यहाँ एक प्रसंग याद आ गया। एक श्रावक जो भक्त था भक्त का
...य यह है कि वह अपने आप में निष्ठा रखता था जीवन की
...का समझता था और ब्लैक मार्केट आदि के कार्य न करके
...व्यवसाय करता था अतः अर्थ की दृष्टि से वह बहुत साधारण
...र के बाहर एक बगीचे में झोंपडी बनाकर रहता था। संयोग
...ी पत्नी का देहान्त हो गया वह अपने पीछे एक पुत्री छोड
...पुत्री जब बडी होने लगी तो उसे ही संस्कार दिये और
...कला सिखाई गई। उसने पुत्री से कहा कि हमारा जीवन
...ण जीवन है। यह जीवन संसार के विषय भोग के लिए
...क्षियों की तरह से बिताने के लिए नहीं है। हमें
...हुए चलते रहना है आदि। किन्तु समय की स्थिति से

उम्र बढती है तो शरीर का भी विकास होता है। जब कन्या बडी हुई तो भक्त सोचने लगा कि किसके यहा इसका विवाह किया जाय। किसी के सामने वह विवाह का प्रस्ताव लेकर जाता है तो पहले पैसे की बात होती है। पैसा कहाँ से लाय ? और कहा उसका विवाह करे ? आखिर म उसने यही तय किया कि मेरी पुत्री को मैंने इतने सारे संस्कार दिये है तो बिना विवाह के यह ब्रह्मचारिणी का जीवन क्यो न बिताये। अगर उसका यह निर्णय हो जाय तो मेरा जीवन धन्य होगा। मैं इस पुत्री के लिए कोई सौदेबाजी नही करूगा। जसी स्थिति है उस स्थिति म कोई ईमानदारी से मेरे जीवन का अकन करेगा। यदि किसी ने मेरे जीवन को नही समझा तो मुझे परवाह नही। पिता यह सोचकर निश्चिन्त हो गया। एक रोज एक करोड़पति सेठ घूमने की दृष्टि से बगीचे की ओर को निकला। उसका स्वभाव सुन्दर था उसके जीवन की स्थिति बडी पवित्र थी। वह यह जानता था यत्राकृतिस्तत्र गुणा वसन्ति। उसने उस कन्या को देखा वह उस कन्या के गुणो का अकन करता है और उसके जीवन की कीमत करता है। यह सोचकर कि इस झोपडी म कसी स्थिति है। वह घूमना छोडकर झोपडी के पास पहुचा। उसने सारी परिस्थिति जानी, और परिस्थिति समझने के पश्चात उसके मन मे आया कि इसके पिता के पास एक समय के भोजन का भी सग्रह नही है लेकिन इसका पिता जीवन के मूल्याकन को लेकर के चल रहा है और यह सत्ता और सम्पत्ति के पीछे दीवाना नही है। मैं सपदा का मालिक हू। मेरी दृष्टि म अगर जीवन नही रहा और केवल सपदा रही तो मेरा जीवन भी बेकार है। इसलिए मुझे तो जीवन की कीमत करना है इस प्रकार विचार किया और मन म दृढ विश्वास कर लिया कि इस गुणवान कन्या का सम्बन्ध मेरे पुत्र के साथ हो जाय तो सब प्रकार की सुनिधि प्राप्त हो जाय। इस प्रकार की भावना लेकर अपने स्थान पर पहुचा और मुनीम से कहा कि उस झोपडी म रहने वाले

के पास जाकर मेरे पुत्र के लिये उसकी कन्या की मागणी करो।
इधर सेठ साहब शाम को घर गये तो सेठानी से बात की कि आज
घूमने के लिए गया तो एक सुशिक्षित कन्या के दर्शन किये वह कन्या
कन्या-जीवन में शिखर रूप है और अपने पुत्र के लिए उपयुक्त है।
इसलिए उस कन्या को इस घर में लाया जाय ताकि इस घर की शोभा
बढ़ जाय। सेठानी ने कहा कि सेठ साहब आप किस कन्या को
लाना चाहते हैं वह कहा है? सेठजी ने कहा कि उसका पिता
शहर के बाहर बगीचे में झोंपडी लगाकर रहता है। वह गरीब
व्यक्ति है? सेठानी ने कहा—मेरे पुत्र का सम्बन्ध उसके साथ करना
चाहते हैं? क्या संसार में और करोडपति नहीं हैं और अन्य कन्याएँ
नहीं हैं? कुछ तो सोचना विचारना चाहिए। कन्या चाहे कैसी मिले
इसकी परवाह नहीं लेकिन साना चाहिए। यह भावना किसकी थी?
सेठानी की। लेकिन उसके मन में न तो जाति का अकन चल
रहा था और न पैसे का। उसकी दृष्टि सीधी जीवन की तरफ थी।
सेठ ने कहा कि मुझे पैसा नहीं चाहिए, मुझे जीवन चाहिए, उन्होंने
खूब जोर दिया और कहा कि तुम चाहे कुछ करो मैं अपने पुत्र की
शादी इसी कन्या से करूंगा। आखिर सेठानी की चली नहीं।
उन्होंने जब मुनीम को भेजा तो उस कन्या के पिता ने कहा कि
देखिये—आजकल धनवानो और गरीबो की जाति अलग-अलग बनती
जा रही है। गरीबों की जाति अलग और धनवानों की जाति अलग।
सेठ साहब मेरी कन्या की मँगनी कर रहे हैं लेकिन मेरे पास देने को
कुछ नहीं है मिजमानी करने के लिए न होटल हैं न दूसरी चीजें।
यहां जयपुर में बरात आये तो होटलों में ठहराई जाती है चाहे
कितना ही खर्च लगे और जीमने के साथ-साथ बारातियों की कई
तरह से और किस प्रकार सार-सम्भाल की जाती है। एक रोज थोडा
सा मैंने सुना था उस सुनने से मुझे पता चला है कि पैसे वालों के
हाल किस प्रकार से चलते हैं मगर गरीबों के यहाँ विवाह के समय

चरित्र को ऊँचा रखना और मनुष्य को मनुष्य समझकर आत्मकल्याण का रास्ता प्रस्तुत करना। जब इस शिक्षा को लेकर वह करोडपति के घर म पहुची ता धन का अभिमान उसके मस्तिष्क मे नही आया। वह धन की दृष्टि से इन्सान की कीमत नही करती—वह सारे जीवन की दृष्टि स उनका मूल्याकन करन लगी, और आनन्द क साथ सेवा करते करते ऐसा कुछ वर्ताव किया कि उस घर म जितने भी लोग थे उनको अपने वश म कर लिया। अडोस पडौस के अन्दर रहने वाले जितने प्राणी थे सब के सब आकर्षित हो गये। धीरे धीरे उसकी कीर्ति फलने लगी कि गरीब घराने की कन्या करोडपति के घर मे पहुचकर किस प्रकार से मनुष्य जीवन का अकन करती है। तारीफ क पुन इधर उधर से आने लगे। सास ससुर अत्यत प्रसन्न थे। गरीबी और अमीरी का भेद मिटाते हुए उसने अपने जीवन के सौरभ से आस पास के अधिकाश व्यक्तियो को आकर्षित कर लिया। इन सब बातो को लेकर एक राज उसकी सासू जो प्रसन्न होकर उसस कहन लगी कि पुत्री ये चाबिया अब तुम सम्हालो। उस वक्त उस पुत्र वधू ने कहा—सासूजीराज,चाबिया ता आपके पास ही रखें। मुझे तो इन चाबियो की आवश्यकता नही जीवन की चाबिया चाहिए। आजकल की पुत्रवधुए यह बात बोलेगीं कि सासूजी, अब आपका बुढापा हो गया है अब तिजारिया की चाबी न रखें। खोलकर उसको साप देंगी ता ठीक और नही सापेंगी ता लडाई झगडा होगा। आज अधिकाश घरो की यही स्थिति है। सास-बहू लड रहे हैं बाप-बेटे लड रहे हैं भाई भाई लड रहे हैं। यही सासू तिजोरिया की चाबिया सोपने लगी तो उसन नही लीं। सासू जी ने आग्रह किया कि मैं वृद्ध हो गई हू और आगे के जीवन के लिए कुछ करू मुझे तो तुम ऐसी शिक्षा दो कि मैं जीवन की कीमत करू और जीवन क्या है इसको समझने का प्रयास करू। यह सासू जी बोलने लगीं। उसन कहा कि तिजोरी की चाबिया तो आप मुझ सौंप रही हैं लेकिन मरी

चरित्र को ऊँचा रखना और मनुष्य को मनुष्य समझकर आत्मकल्याण का रास्ता प्रस्तुत करना। जब इस शिक्षा को लेकर वह करोड़पति के घर म पहुची तो पस का अभिमान उसके मस्तिष्क म नही आया। वह पसे की दृष्टि स इसान की कीमत नही करती—वह सारे जीवन की दृष्टि स उसका मूल्याकन करन लगी, और आनन्द के साथ सेवा करते करत ऐसा कुछ वर्ताव किया कि उस घर म जितने भी लोग थे उनको अपने वश म कर लिया। अडास पडौस के अन्दर रहने वाले जितने प्राणी थे सब के सब आकर्षित हो गये। धीरे धीरे उसकी कीर्ति फलने लगी कि गरीब घराने की कन्या करोड़पति के घर म पहुचकर किस प्रकार से मनुष्य जीवन का अकन करती है। तारीफ के पुल इधर उधर से आने लगे। सास ससुर अत्यत प्रसन्न थे। गरीबी और अमीरी का भेद मिटाते हुए उसने अपने जीवन के सौरभ से आस पास के अधिकाश व्यक्तियों को आकर्षित कर लिया। इन सब बातो को लेकर एक रोज उसकी सासू जी प्रसन्न होकर उसस कहने लगी कि पुत्री ये चाबिया अब तुम सम्हालो। उस वक्त उस पुत्र वधू ने कहा—सासूजी! ये चाबिया तो आपके पास ही रखें। मुझे तो इन चाबियों की आवश्यकता नहीं जीवन की चाबिया चाहिए। आजकल की पुत्रवधुए यह बात मानेगी कि सासूजी, अब आपका बुढापा हो गया है अब तिजोरियों की चाबी न रखें। खोलकर उसको साप देंगी तो ठीक और नही सापेंगी तो लडाई झगडा होगा। आज अधिकाश घरो की यही स्थिति है। सास-बहू लड रहे है बाप-बेटे लड रहे हैं भाई भाई लड रहे हैं। वही सासू तिजोरियों की चाबिया सौंपने लगी तो उसने नही ली। सासू जी ने आग्रह किया कि मैं वृद्ध हो गई हू और आगे के जीवन के लिए कुछ करू मुझे तो तुम ऐसी शिक्षा दो कि मैं जीवन की कीमत करू और जीवन क्या है इसको समझने का प्रयास करू। यह सासू जी बोलने लगी। उसने कहा कि तिजोरी की चाबिया तो आप मुझे सौंप रही हैं लेकिन मेरी

चरित्र को ऊँचा रखना और मनुष्य को मनुष्य समझकर आत्मकल्याण का रास्ता प्रस्तुत करना। जब इस शिक्षा को लेकर वह करोड़पति के घर में पहुँची तो धन का अभिमान उसके मस्तिष्क में नहीं आया। वह धन की दृष्टि से इन्सान की कीमत नहीं करती—वह सारे जीवन की दृष्टि से उनका मूल्यांकन करने लगी, और आनन्द के साथ सेवा करते करते ऐसा कुछ बर्ताव किया कि उस घर में जितने भी लोग थे उनको अपने वश में कर लिया। अड़ौस-पड़ौस के अन्दर रहने वाले जितने प्राणी थे सब के सब आकर्षित हो गये। धीरे धीरे उसकी कीर्ति फैलने लगी कि गरीब घराने की कन्या करोड़पति के घर में पहुँचकर किस प्रकार से मनुष्य जीवन का अंकन करती है। तारीफ के पुष्प इधर उधर से आने लगे। सास ससुर अत्यंत प्रसन्न थे। गरीबी और अमीरी का भेद मिटाते हुए उसने अपने जीवन के सौरभ से आस-पास के अधिवासी व्यक्तियों को आकर्षित कर लिया। इन सब बातों को लेकर एक रोज उसकी सासू जी प्रसन्न होकर उससे कहने लगी कि पुत्री ये चाबियाँ अब तुम सम्हालो। उस वक्त उस पुत्र वधू ने कहा—सासूजीराज चाबियाँ तो आपके पास ही रखें। मुझे तो इन चाबियों की आवश्यकता नहीं जीवन की चाबियाँ चाहिए। आजकल की पुत्रवधुएं यह बात जानेगी कि सासूजी, अब आपका बुढ़ापा हो गया है अब तिजोरियों की चाबी न रखें। छीनकर उसको साफ देंगी तो ठीक और नहीं मानेगी तो लड़ाई झगड़ा होगा। आज अधिकांश घरों की यही स्थिति है। सास-बहू लड़ रहे हैं बाप-बेटे लड़ रहे हैं भाई भाई लड़ रहे हैं। वहाँ सासू तिजोरियों की चाबियाँ सौंपने लगी तो उसने नहीं लीं। सासू जी ने आग्रह किया कि मैं बूढ़ी हो गई हूं और आगे के जीवन के लिए कुछ करूं मुझे तो तुम ऐसी शिक्षा दो कि मैं जीवन की कीमत करूं और जीवन क्या है इसको समझने का प्रयास करूं। यह सासू जी बोलने लगीं। उसने कहा कि तिजोरी की चाबियाँ तो आप सम्भाल रही हैं लेकिन मेरे

जो बचपन की आदत है उस आदत के साथ मैं बरताव करूगी वह शायद आपको पसन्द आयेगा या नही आयेगा। क्या बरताव है तुम्हारा ? सासू जी ने पूछा। बरताव क्या है, यही है कि मैं अपने पिता के यहां बचपन से बड़ी हुई हूँ तब तक मैंने अतिथि सत्कार को नहीं भुलाया है। कोई भी व्यक्ति आया है उसका स्वागत के साथ मे सत्कार किया है। दान देने की आदत भी है। जब आप मुझे तिजोरी की चाबिया सौंप रही हैं और घर का अधिकार सम्हला रही हैं तो कोई व्यक्ति आयेगा तो मेरा हाथ उदार रहेगा। उसम आपको नागवार तो नहीं गुजरेगा ? सासू जी को यह ख्याल आया और कहा कि दान देन लगी तो सारी सम्पदा चली जायेगी। उसने कहा कि सासूजीराज आपने जीवन को नही समझा है और अपनी भौतिक सम्पदा को ही सब कुछ समझा है। सम्पदा यदि लुटा भी दू गी तो मेरा जीवन तो रहेगा मुझे जीवन चाहिए सम्पदा नहीं चाहिए। सेठानी कहने लगी नही नही मैं इन बातो म आने वाली नही हू। इसके लिए थोड़े ही चाबिया सम्हला रही हू। किसी को देना मत, शर्माशर्मी उसने चाबिया सम्हाल लीं,लेकिन वह एक अच्छी चीज नही थी।

एक रोज कुछ ऐसा अवसर बना कि सासूजी कमरे में बैठी हुई अपने घर का काम कर रही थी। एक भिक्षुक साधू की पोशाक म भि रा म लिये उपस्थित हुआ। उस भिक्षुक की दृष्टि उस मकान पर गई। करोडपति का घर था। सासू का वचन भी उसके ध्यान में था लेकिन पिता के जीवन म उसने जो शिक्षा ली वह महत्वपूर्ण शिक्षा थी जो कि उसने अपने पिता के यहा प्राप्त की थी। उसके अनुसार उससे रहा नही गया आखिर अन्दर जो मिष्ठान्न आदि सामग्री थी वह पर्याप्त मात्रा म लेकर साधू को दे दी। वह यह जानती थी कि साधू को जीने के लिए थोड़ा भोजन चाहिए और मर्यादित वस्त्र चाहिए। साधू पसा लेता है तो वह साधु नही है

आचार्य प्रवर के चरणों मे
हम कोटि-कोटि वन्दन करले !

ताराचन्द गैलडा ट्रस्ट

नं० ४ नागदेवरगाव रोड

मद्रास-१७

क्योंकि पक्षी हराम सिखाती है। इसलिए वस्तु किसी को नहीं ...
अत साधु ने वह अन्न ग्रहण कर लिया। उसकी पाशाक तो साधुकी
थी किन्तु उसके मन और नेत्र चचल थे, तदनुसार वह उस हवेली
को देखने लगा। वह जब इधर-उधर देख रहा था तो उस पुत्रवधू
से रहा नहा गया और उस पुत्रवधू ने स्पष्ट रूप से साधू को सकेत
में कहा कि साधूजी तुम्हारा एक गया, तो साधु भी थोडा-सा बुद्धि
मान था उसने देखा कि मुझे सकेत से शिक्षा दी गई है तो उसने
भी वापिस उत्तर दिया कि तुम्हारे दो ही गए। तो उस पुत्रवधू न
पुन उत्तर दिया कि तुम्हारे तो तीनो ही चले गए। आपस म सकेतो
में ही उनकी बातें हुई। सासू जी कमरे म बैठी हुई थी। पुत्रवधू
को दान देते हुए देख लिया था आगबबूला हो रही थी कि मैंने
पहले ही बहू को कह दिया था कि दान नही देना और आज इसने
इस साधुडे का दान दे दिया और दान देने के साथ ही साथ सकेत
में गुप्त बातें भी कर रही है, हाय-हाय यह तो बहुत बडा अकाज
हो गया। मैंने पतिदेव को पहले ही कहा था कि ऐसी गरीब घराने की
छोकरी नहीं लाना चाहिए किन्तु पतिदेव नहीं माने और ऐसी छोकरी
को ले आए। सेठानी का मन और मस्तिष्क सारा का सारा दूसरे
रूप मे घूम गया। वह सोचने लगी कि अब क्या करना चाहिए
ऐसी पुत्रवधू के बिना तो मेरा पुत्र बिना ब्याहा ही रहता तो कोई
बात नही थी। ऐसी बहू को मैं कैसे रख सकती हूँ इस प्रकार की
अनेक तरह की कल्पनाए करती है किन्तु यह नहीं सोच पाती है कि
इसका निर्णय कर ले कि उसका सकेत क्या था। साधू जी ने सकेत
से क्या कहा और बहू ने क्या सकेत दिया इसम क्या भेद है, सकेत
का वस्तुत क्या अर्थ है बिना इसका निर्णय किए ही उसने मन म
निर्णय कर लिया और उसके मन म पुत्रवधू के बारे म भावना
दूसरे रूप म बन गई और मन म सोच लिया कि किसी प्रकार से
इसको समाप्त करना चाहिए। लेकिन समाप्त करने से पहले सेठ

साहब की अनुमति लेनी चाहिए। सेठ साहब को बुलवा लिये। सेठ साहब के आते ही उनको आड़े हाथों लिया, कहने लगी देखा मैंने पहले ही कहा था कि इस घर की छोकरी हमारे घर के योग्य नहीं है। इसने तो सारे घर का दिवाला निकाल दिया, एक साधु को कुछ दान दिया और साथ ही साथ गुप्त बातें की। तो सेठजी ने कहा कि अब क्या करना चाहिए? सठाणी कहने लगी कि इसको घर में नहीं रखना चाहिए। सेठजी ने कहा कि इसको पीहर भेज दें। तो बोली कि पीहर भेज देंगे तो वहाँ वह सारी बात खोल देगी और इससे इज्जत खतम हो जाएगी। तो क्या करना? क्यों नहीं इसको समाप्त ही कर दें। सेठ ने कहा कि समाप्त करना तो मेरे हाथ की बात नहीं है। जब तक पुत्र सहयोग नहीं दे तब तक इस विषय में अपन क्या कर सकते हैं। तो कहा पुत्र को भी बुला लिया जाए अपन तीनों एकमत हो जावें। पुत्र को बुलाने के लिए भेजा गया वह भी उपस्थित हो गया। सम्पूर्ण वृतान्त सुना तो वह भी आश्चर्य में पड़ गया। कुछ कह नहीं पाया मौन होकर खड़ा हो गया और मनन चिंतन करने लगा कि भगवन! मेरे पर कौन-सा धर्म संकट आ गया पतिव्रता के रूप में इसको मैंने देखा सीता सती की उपमा दी और आज भी दे रहा हूँ ऐसी कन्या के विषय में इस प्रकार की बात क्यों कर सम्भावित हो रही है। मैं प्रभु के चरणों में हाथ जोड़ कर इस विषय में मार्ग दर्शन चाहता हूँ। वह कुछ समय के लिए स्थिर हुआ। कुछ चिंतन करके अपनी मातेश्वरी और पिताजी से कहा कि आप भी कुछ चिंतन करिए और इस बात की ताकीद मत करिए। आप इस बात का चिंतन करिए कि क्या बात है किस तरह से यह बात बनी है और उसने जो कुछ कहा सो क्या कहा। सारी बात का निर्णय निकाले बिना सहसा कदम नहीं उठाना है। तो उन्होंने कहा कि हमने सब कुछ निर्णय कर लिया है तब पुत्र ने कहा कि मैं भी कह रहा हूँ मुझे भी थोड़ी देर

सोचन दीजिए। वह सोचन की स्थिति म खडा हो गया। माता पिता ने सोचा कि पुत्र गुणवान है उसकी सहमति के बिना हम कोई काय नही कर सकेंगे आखिर यह सहमत होगा तभी काम बनेगा यह समझ कर चुप हो गए।

उधर चिंतन चल रहा है और इधर आपका दस बजे का समय हो गया है। यहाँ भी अभी जीवन का प्रश्न चल रहा है आप चाहते हैं कि यह प्रश्न जल्दी हल हो जाय और मैं भी चाहता हू कि जल्दी हल हो जाय, लेकिन जीवन का समझने के लिए कुछ प्रयत्न करना चाहिए। इस प्रकार की स्थिति आपके धय क साथ बध गई है। देखिए उस बहिन की स्थिति क्या बनती है पति क्या सोचता है और सास और ससुर क्या सोचते हैं यह भविष्य के गभ मे रहने दीजिए। अभी जो वतमान मे प्रश्न यहाँ चल रहा है वह है आज के युग म जीवन की क्या आवश्यकता है। सत्ता सम्पत्ति और कतव्य जीवन के बिना बेकार है और जीवन की कीमत करने के लिए जीवन के स्वरूप को समझने के लिए जीवन की परिभाषा करने के लिए जब आप आगे बढेंगे तो ही ये सत्ता सम्पत्ति और कत य हितावह हो सकते हैं नही तो य उल्टा माग धारण कर सकते हैं उन्ही भावनो के साथ कहा—

> जय जय जगत शिरोमणि हू सेवक न तू धणी
> अब तोसू गाढी बणी प्रभू आशा पूरो हम तणी।
> मुझ मेहर करो चन्द्र प्रभ जगत जीवन अन्तर्यामी
> भव दुख हरो सुनिए अज हमारी श्री त्रिभवन स्वामी ।।

ऐसी भावना के साथ जब हम अपने जीवन को समझ जायेंगे जीवन के स्वरूप को समझ जायगे सुदर जीवन जी भावना के साथ इस प्रसंग को समाप्त करता हू।

पन्ना समिक्खए धम्मं —उत्तराध्ययन
अपनी निर्मल बुद्धि प्रज्ञा से धर्म की परीक्षा करनी चाहिए।

---

६ सम्यग् निर्णय कीजिए

श्री सुविधि जिनेश्वर वंदिये हो
प्रभुता त्यागी राजनी हो
लीधो संजम भार।
निज आतम अनुभव करी हो,
पाम्या पद अधिकार। श्री

प्रभुजी

यह हम श्री सुविधिनाथ भगवान् की प्रार्थना कर रहे हैं। भगवान् के नाम का सकलन भी किस ढंग से बना है कि जिसमें यथार्थ अर्थ का द्योतन हो रहा है।

भगवान् सुविधि अथवा सु विधि—इन शब्दों के साथ यदि सम्यग् जुड़ता है तो उसमें प्रभु के अनुरूप अर्थ का द्योतन होता है। सुविधि यानि सुष्ठु सुन्दरा विधिर्यस्य स सुविधि। इसका दूसरा अर्थ है सुन्दर विधि, अगर यह सुन्दर विधि हमारे जीवन में प्रवेश कर जाय तो इस जीवन की तमाम समस्याएँ हल हो जावें। आज का मानव चल

अवश्य रहा है गति उसकी रुकती नही है प्रयत्न जरूर, चालू है लेकिन वह विधि के साथ है या अविधि के साथ है यह सोचना है।

अगर विधिपूर्वक मनुष्य के सारे प्रयत्न चल रहे हैं, विधि के साथ वह पुरुषार्थ कर रहा है, विधि के साथ ही जीवन की तमाम क्रियाएँ कर रहा है तो उसके जीवन की समग्र शक्तियाँ विकसित हो सकती हैं।

जब विधि के अन्दर भी वह शक्ति है तो जिस व्यक्ति के जीवन मे सुविधि आ जाए उसका तो कहना ही क्या ? उसका जीवन परमात्मा शक्ति के रूप मे परिलक्षित हो इसमे कोई भी आश्चर्य नही।

अब हमे यह सोचना है कि इस साधनाकाल म अपने जीवन को परिमार्जित करने के लिये सुविधिनाथ भगवान की प्रार्थना के प्रसंग मे हम किस तरह मे तत्पर हो सकते हैं ? किस तरह से हम अपने जीवन को सुसस्कारित कर सकते हैं जिसका कि सकेत आपको कुछ समय स मिल रहा है। और यह सकेत अपुटठवागरणा उत्तराध्ययन सूत्र चतुर्थ अध्ययन की जो प्रथम गाथा है उसकी व्याख्या के रूप म कुछ दिनो से मैं आपके सम्मुख कर रहा हू। प्रभु की इन उदघोषणाओ को सुनने और समझने का प्रयास आप कर रहे हैं।

भगवान ने फरमाया कि "असखय जीविय मा पमायए" मानव, तुम्हारा जीवन असस्कृत है तुम प्रमाद मत करो। वीतराग देव न अपने केवलज्ञान के उस दिव्य सूर्य के प्रकाश म मनुष्य का जो जीवन देखा है उसके अनुरूप ही उन्होंने मानव को सम्बोधित करते हुए उक्त वचन फरमाये हैं।

अन्तर मे झांको

यह सम्बोधन समुच्चय है चार तीर्थ क लिए है इसमें साधु साध्वी भी आ जाते हैं और तो क्या

आध्यात्मिक दृष्टि के महान् ज्ञाता गणधरों को भी भगवान इस तरह से सम्बोधन करते हैं कि प्रमाद मत करो। क्योंकि तुम्हारा यह जीवन असंस्कृत है तो इससे सहज ही साधारण साधु साध्वियों का चिंतन तो मुखरित होना ही चाहिए। उन्हें अपने जीवन के लिये यह चिंतन करना चाहिये कि हम साधु साध्वी के रूप में चल रहे हैं। हमने घर बार का त्याग किया है, परिवार, स्त्री, पुत्र पति सम्पत्ति सब को विधि के साथ वोसराया है और इसके साथ ही साथ हम साधना के क्षेत्र में प्रवेश करके चल रहे हैं लेकिन जिस रोज हमने यह वेष ग्रहण किया उस दिन से कहीं हमारे मन में लापरवाही के संस्कार तो नहीं आ गये हैं? हमने यह तो नहीं समझ लिया है कि अब हम मुनि बन गये हैं, पोशाक पहन ली है अब तो हम भगवान् के तुल्य हो गये, कृत कृत्य हो गये अब हम कुछ करना धरना नहीं है। इस तरह के संस्कार या विचार अगर साधु साध्वी के मन में प्रवेश कर गये हों तो उन संस्कारों को भी असंस्कृत रूप में देखते हुए उनको भी निकालने का निरन्तर प्रयत्न करने का सम्बोधन वीतराग देव की वाणी से स्पष्ट झलक रहा है।

मैं उचित सम्बोधन की बात को जितना ही अधिक ध्यान में लाता हूं उतना ही अधिक अंतर में अनेक तरह की तरंगें उठती हैं। मस्तिष्क नाना रूपों से चिंतन करने को तत्पर हो जाता है। सोचता हूं कि वीतराग देव ने समुच्चय रूप से यह जो सम्बोधन किया है उसमें गणधरों को भी सावधान किया तो साधारण साधु साध्वी और श्रावक-श्राविकाओं को भी सावधान होने की आवश्यकता का प्रतिपादन किया है।

हम थोड़ा सा ज्ञान सम्पादन कर लें उस ज्ञान के माध्यम से थोड़ी सी हम बातें आ जावें और हम अपने आपको कुछ औरों से ऊपर समझने लग जायें कि बस अब हमारे से बढ़कर ज्ञानी कोई

का काम भी चालू हो सकता है किन्तु उस तप के पीछे यदि किसी प्रकार की कामना चल पड़े तो वह कामना विधि की नहीं होगी। प्रभु के वचन हैं—

नो इह लोगट्ठयाए तवमहिट्ठिज्जा
नो परलोगट्ठयाए तवमहिट्ठिज्जा
नो कित्ति वण्ण सद्द सिलोगट्ठयाए तवमहिट्ठिज्जा
नन्नत्थ निज्जरट्ठयाए तवमहिट्ठिज्जा

इह लोक के लिए तप न करें, परलोक के लिए भी तप न करें, यश कीर्ति की कामना से भी तप न करें किन्तु सिर्फ कर्म निर्जरा आत्म शुद्धि के लिए तप करें।

मैं कभी कभी सुनता हूँ इधर का मुझे पता नहीं, लेकिन मारवाड़ के अन्दर चालते हैं कि महाराज धमक तेला किया। मैंने एक दिन धमक तेले की व्याख्या पूछी कि धमक तेला क्या है? तो वे कहने लगे कि जो बहिन तेला करती है वह घर वालों को धमकाती है कि इतना रुपया दो तो पारणा करूँ, अमुक जेवर बनाओ तो पारणा करूँ। इस तरह से रुपया माँगने के लिए अगर धमक तेला करते हैं तो वह तेला भगवान की विधि के अन्दर नहीं है।

इसी प्रकार 'मैं यदि अधिक तप करूँ तो मुझे अधिक स्वर्गीय आनन्द मिलेगा" इस भावना से भी तप नहीं करे।

मेरी कीर्ति होगी लोग मुझे धन्यवाद देंगे चारों तरफ से तारीफ होगी— इस भावना से भी तप की स्थिति का प्रसंग उपस्थित नहीं करें अपने मन में भी ऐसी भावना न करें। यदि तपस्वी की तारीफ अन्य लोग कर रहे हैं तो वे अपने जीवन में सम्यग्दृष्टि जीवन के लक्षण का पालन कर रहे हैं यह तो उनका स्वभाव है तथा मौलिक दृष्टि से धन्यवाद देना उनके लिए आवश्यक है, लेकिन तप करने वाले को कोई कामना नहीं करना चाहिए कि लोग मुझे धन्यवाद

दें और मेरी यशोगाथा चारो तरफ फल। इस भावना से तप नही करे। तो किसके लिए करे ? प्रभु का शब्द है कि नन्नत्थ निज्जर टठयाए एकान्त निजरा के लिए तप किया जाये। इसका मतलब यह है कि जो अनादिकाल स आत्मा के साथ कम बन्धन हैं, उनको हटाने के लिए, तप करें। बद्ध कम-दलिका को देश स हटाना निजरा है। तो उस निजरा के लिए दूसरा शब्द मैं कहू —"आत्म शुद्धि क लिए अगर आपक व्यवहार के लिए समझें तो जीवन की शुद्धि के लिए जीवन को सस्कारित करने के लिए तप की स्थिति रहे। इस प्रकार जीवन के लक्ष्य क मोड को लेकर इस चातुर्मास के अन्दर अपने जीवन का हम अवलोकन करना है और इस जीवन का समझना है कि हम किस ओर जा रहे हैं। हमारे जीवन म पवित्र सस्कार आये या नही ? क्या हम अभी तक उस अनादिकाल के सस्कारो क साथ बह रहे हैं। क्या हमारे जीवन म असस्कार ही चल रहे हैं या कुछ सुदर सस्कार पनप रहे हैं— इसका निरन्तर ध्यान रखना चिन्तन करना यह चातुर्मास का सुन्दरतम उपयोग है।

चातुर्मास में कतव्य

चातुर्मास म क्या करना चाहिए और क्या नहीं इसका कुछ सकत आपको सन्त दे रहे थे और शायद उस सकेत में रात्रि भोजन नहीं करने का सकत भी मिला होगा। या नहीं मिला ? मिला। जो अपने जीवन को पवित्र बनाना चाहते हैं, सुन्दरतम और सस्कारित करना चाहते हैं वे तो रात्रि भोजन की वृत्ति को अपने जीवन में रख ही नहीं सकत। यदि रात्रि भोजन चलता है तो समझना चाहिए कि अभी हम प्रभु का सुविधि के अन्तर पेटे में नहीं आये। एक दृष्टि से देखा जाये तो जनिया के बच्चे बच्चे को रात्रि भोजन नहीं करना चाहिए। क्योंकि आप भी रात्रि भोजन करेंगे तो फिर जो असस्कारित

जीवन वाले व्यक्ति है उनमे और आपमे क्या अन्तर रह जायेगा ? रात मे कितने जन्तु, कितने प्राणी और फिर बिजली के प्रकाश के कारण कितने पतंगे इकट्ठे होते है किस तरह खाने मे आते हैं। मैं समझता हूँ कि रात्रि भोजन करने वाले भाई भोजन की तरफ शायद ही ख्याल रखते हैं। हा ! प्राय ध्यान तो इधर उधर देखने मे रहता है और भोजन के साथ न मालूम कितने चलते फिरते जीवों को पेट मे डाल देते है और उनका क्या परिणाम होता है, उससे असमस्कारित जीवन का कुछ प्रदर्शन तो होता ही है लेकिन साथ ही साथ उसका वर्तमान जीवन भी खतरे मे पड सकता है। आज जितनी बीमारियाँ हो रही है और डाक्टरो को तरह तरह के इलाज करने की दृष्टि से सोचना पड रहा है इसके अनेक कारण हो सकते हैं लेकिन एक कारण यह भी है कि रात्रि भोजन के समय जहरीले जन्तुओ का पेट मे प्रवेश होने की सभावना रहती है और उससे अनेक रोगो की उत्पत्ति की भी सभावना रहती है। यदि वर्तमान जीवन को सुन्दरतम रखना चाहते है तो रात्रि भोजन के लिए बहुत ज्यादा ध्यान रखने की आवश्यकता है। जहाँ तक पूरे समाज का प्रश्न है उसकी दृष्टि से दिगम्बर समाज के भाइयो के अन्दर यह संस्कार ज्यादा सुनने मे आते हैं। उनमे रात्रि भोजन का प्रसग प्राय नही पाया जाता है। वहा उन्हे इस विषय के प्रारम्भ से ही सस्कार दिए जाते हैं।

छोटे बच्चे भी इसका ख्याल रखते हैं। जब कि मैं छोटा था स्कूल मे पढ रहा था, उस समय एक पाटनी गोत्र का विद्यार्थी मेरे साथ पढता था। शुरु मे सूर्यास्त होने के भय से वह स्कूल से जल्दी छुट्टी लेकर भाग कर घर जाने लगा तब मैंने उससे पूछा कि इतनी जल्दी छुट्टी लेकर घर क्या जा रहे हो ? उसने उत्तर दिया कि भोजन करने के लिए जा रहा हू। फिर मैंने पूछा अभी क्यो जा रहे हो अभी तो स्कूल का समय है। उसने उत्तर दिया—दिन

थोड़ा है सूर्यास्त से पहले भोजन कर लेना है। मैं जैनी हू न।

दक्षिण—एक तो वह जैनी था और एक मैं जैनकुल मे जन्म लेने वाला था अजैनी जैसा था क्योंकि उन गांवो मे इस तरह के संस्कारो की प्राप्ति थी नही। क्या कर्तव्य है जैनियो का इसकी भी जानकारी नही थी। मैंने उस पूछा—रात म भोजन क्यो नही करते ? उसने उत्तर दिया 'मेरी मा ने कहा है कि रात्रि भोजन करूँगा तो मर सींगड़े उग जावेंगे।"

बच्चे को माँ ने इसी तरह से समझा रखा था। छोटे बच्चे भी इतना ध्यान रखते हैं इस समाज म, सूर्यास्त से पहले ही भोजन करने के लिए दौड कर जाते हैं और एक आप हैं इतने वृद्ध और ओजवान होकर भी इसका विचार इने गिने ही रखते होंगे !

आप मनुष्य की बात छोड़िये। जो अनजान हैं जिनको हम अपने से कही बहुत कम ज्ञानवाला मानते हैं, उन पक्षियो को ही लीजिये। चिड़िया हैं कबूतर हैं य रात म चुगा नहा चुगत।

तो मह रात्रि भोजन नही करने का प्रसग आप लोगो के सामने उपस्थित कर रहा हू जो और किसी छोटे मोटे ठिकाने म नही रहते गावो म नही रहते बल्कि राजस्थान की राजधानी म रहते हैं जयपुर जैसे नगर म रहते हैं। जहाँ मरा जन्म हुआ वहाँ के गावो के लोग भले ही न समझें पर राजधानी के नागरिक तो समझते हैं और उसमें भी जयपुर के जौहरी घरानो क जैनी, जवाहरात का परीक्षण करने वाले। फिर क्या आपने जीवन का परीक्षण नहीं किया ? यह कैसे सम्भव हो सकता है ?

तो मैं यह सोच रहा हू कि राजधानी के भाई और बहन बड़े समझदार और तेजस्वी हैं। धर्म ध्यान और चिन्तन मनन म काफी रुचि रखने वाले हैं। यहां का युवावर्ग भी बहुत जागृत और लगनशील है। इन सब बातो को देखते हुए इस प्रसग पर क्या मैं यह मान कर चलू कि कम से कम आप सब भाई बहन अभ्यास

सम्यग निर्णायक जीवन है

यदि आप अपने जीवन की अन्तरतम परिभाषा को समझने का प्रयास करें और परिभाषा के साथ जीवन का मांजन की कोशिश करें, तो कृतकृत्य हो सकते हैं। मैं जीवन की परिभाषा की दृष्टि से कथन कर रहा हू। इस जीवन का समझन के लिये एक और परिभाषा के द्वारा इसे स्पष्ट कर दू

सम्यग निर्णायक समतामय च यत तज जीवनम

जो सम्यग निर्णायक, अर्थात सम्यग प्रकार से निणय करने वाला है, और समतामय है, वह जीवन है। यह तो हुई शब्दार्थ की स्थिति। अब इसकी व्याख्या करें तो प्रश्न होता है, सम्यग निणायक का क्या तात्पय ? और सम्यग् निणय किसका किया जाव ? इस शब्दार्थ को भी सस्कारित जीवन क साथ समझना है। निणय किये विना उस वस्तु का स्वरूप सामने नही आता।

जव निणय का अभाव रहता है तो मनुष्य पथभ्रान्त बन जाता है और अज्ञानवश क्या क्या कर गुजरता है और करते करते उसकी स्थिति कहा तक पहुच जाती है उसका एक रूपक पहले मैं रख गया था और उसम वताया गया था कि जहा उस सेठानी ने अपनी पुत्र वधू को एक साधु को दान देते हुए देखा और दान देते हुए देखने के साथ ही साथ जव उस पुत्रवधू के मुँह से साधु को सकेत मिला और साधु को उसने यह कहा कि तुम्हारा एक चला गया तो उत्तर मे उस साधु ने कहा कि तुम्हारे दो गये। पुन बहन ने कहा तुम्हारे तीन गये।

इस बात को लेकर सेठानी के मन मे भ्रान्ति उत्पन्न हो गई। अपनी पुत्रवधू के प्रति अविश्वास करके वह उसको मृत्यु तक के मुँह में पहुँचाने का प्रयास कर रही है।

उसने विना निणय किये ही अपने पुत्र को बुलवा लिया और

उसके सामने भी यह घटना रक्खी। पुत्र भी असमंजस में पड़ गया। वह सोचने लगा 'क्या मेरी माता क्या कह रही है ? जिसको मैंने इतने दिनों से समझा है जिसके जीवन को मैंने परखा है। आज वह मेरी धर्मपत्नी क्या इस प्रकार बुरे आचरण वाली बन सकती है ? यह मेरी समझ में नहीं आता। लेकिन उधर मां जिस पर मैं श्रद्धा रखता हूं तो क्या वह झूठ बोल सकती है ? मैंने इस माता की कुक्षी से जन्म लिया है इसी माता की गोदी में पला, पोसा और बड़ा हुआ हूं। माता ने मुझे हर तरह की अच्छी शिक्षा दी और आज तक मैं माता का बड़ा आदर करता आया हूं। आज क्या यह माता मुझे धोखा दे सकती है ? या झूठी बात कह सकती है ? यह भी बात मेरी समझ में नहीं आती। वह कि कर्त्तव्य विमूढ़ सा हो गया। कुछ सोच नहीं पा रहा था। कुछ क्षण मौन खड़ा रहा।

तब माता ने अपने पतिदेव को सम्बोधित किया कि सेठजी ! अपने पुत्र का मुंह खुलवाइये। यह मौन क्यों खड़ा है ?

सेठ ने पुत्र को सम्बोधन किया गोविन्द, क्या बात है ?

किस उलझन में उलझ गया है ? तुम्हारी माता ने जो निर्णय लिया है वह निर्णय ठीक है अतः तू उसके अनुसार काम करने को तत्पर है कि नहीं ?

पुत्र कहने लगा—पिताश्री, मैंने आज दिन तक आपकी आज्ञा शिरोधार्य की है लेकिन आज मेरे मन में न मालूम किस प्रकार की उलझन पैदा हो गई है ? उसको सुलझा नहीं पा रहा हूं। किसी निर्णय और निश्चय पर नहीं पहुँच पा रहा हूँ, और बिना निर्णय के मैं कैसे क्या करूं ? आप आज्ञा दे रहे हैं और इसके अन्दर सहमति प्रकट करूँ यह भी मेरे गले नहीं उतर रही है मेरा दिल नहीं मान रहा है और मैं इन्कार करूँ कि आपकी पुत्रवधू ऐसा नहीं कर सकती तो भी मेरा दिल नहीं मानता ? अब कैसे करूँ ? और क्या करूँ ? आप ही बताइये।

तब फिर सेठ ने कहा—कि देखो भाई मैंने अपनी समझ के अनु : सोच समझ कर तुम्हारा विवाह किया। इस कन्या को मैंने क्षणा और देवी के रूप मे देखा, सुशील समझा, पवित्र आचार ा समझा तब तो तुम्हारी माता से विरोध मोल लेकर भी र पस का लालच भी छोडकर तुम्हारे साथ इसका विवाह ा। और मुझे आज दिन से पहले तक किसी भी प्रकार का ार नही था लेकिन जब कि तुम्हारी माता कह रही है कि मैंने त्य देखा और प्रत्यक्ष कान से सुना कि इसने साधु को पहले तो न वहराया और साथ ही साथ ऐसे सांकेतिक शब्दो मे वार्तालाप र रही थी इस वार्तालाप की स्थिति को जब सुना तो मेरा मन भी ही देने लगा। कि हो सकता है यह स्त्री कुछ इस तरह की अन्दर से कुछ और हो और ऊपर से कुछ और दिखती । इसलिये जो तुम्हारी माता कह रही है उसे करना तुम्हारा र्तव्य है।

बन्धुओ बहिना पर लाछन लगाना सहज है लेकिन बहनो के गो को लेकर जीवन को विकास करना दुश्वार है। इस बहन के पर जो कुछ लाछन की स्थिति बन रही है। यह सिर्फ भ्रान्ति के ारण बन रही है। इस बहन के जीवन म कुछ भी मलिनता के ाव नही है फिर भी सासूजी का मस्तिष्क दान देने से भड़क गया न्होंने इन्कारी कर रखी थी कि तू किसी को दान मत ना। पर बहू अपने जीवन के संस्कारो के कारण दानशील प और भावना के महत्व को समझती थी इसलिये उसने साधु को ात्विक दान दे दिया। इसके कारण उसकी सासूजी गरम हो गई ौर उस गरमी से तनतना कर बहू और साधुजी के बीच हुए ाकेतिक शब्दो को वह पकड लेती है। इसके मन म विचार गहराई ो घर कर लेते है कि इसने साधु के साथ गुप्त बात की इस गुप्त ात म क्या अर्थ छिपा है?

सभी का कर्तव्य तो यह था कि इसका निर्णय करते। सासूजी खुले रूप से तत्काल बहू से पूछती कि तुम बताओ साधु के साथ तुमने सांकेतिक शब्दों में क्या बात की? क्या एक गया और क्या दो गया और क्या तीन गया?। इसका खुलासा करो। अगर सासू यह खुलासा उसी समय माग लेती तो इस तरह का उपद्रव नहीं होता। पर उस सासूजी की बुद्धि गुस्से में और दूसरी स्थिति में परिणत हो जाने से निर्णय न कर पाई। उसका जीवन असंस्कारित था। जिनके मस्तिष्क में कुछ संस्कार आते हैं। किसी की कभी बात हो तो खुले दिल से पूछ लेते हैं निर्णय कर लेते हैं। कोई बात किसी भी रूप में हो, किसी भी व्यक्ति ने किसी भी रूप में कही हो, चाहे पक्ष में कही हो या विपक्ष में चाहे इस विषय में अमुक का मापक बात आई हो पर निर्णायक बुद्धि रखने वाले प्रामाणिक व्यक्ति का काम होता है कि वह उसका खुलासा सम्बन्धित व्यक्ति से सीधे पूछ कर ले। अमुक व्यक्ति जिसकी मापक बात आई हो वह कितना ही प्रामाणिक हो उसकी बात पर भी ध्यान न देकर सीधे उसी व्यक्ति से स्पष्टीकरण कर लेते हैं कि क्या आपने अमुक बात मेरे बारे में कही है?

जिससे पूछा जाय उसका भी कर्तव्य होता है कि वह भी बिल्कुल निःसंकोच भाव से स्पष्ट कहे अपने सत्य के रूप में कहे तो दोनों संस्कारित बन जा सकते हैं लेकिन ऐसा नहीं होता है और असंस्कार के वशीभूत होकर और विद्वेष करने वालों के साथ ऐसी भावना पैदा कर लेते हैं जिससे रात दिन कमबख्त होना रहे—यह मेरा विरोधी है यह मेरे प्रति ऐसी भावना रखता है चाहे रखे या नहीं रखे जिसके ऊपर शंका हो जाती है वह किसी से बात कर रहा हो तो भी यही शंका रहती है कि यह मेरे ही विषय में बात कर रहा है। इस प्रकार इन बातों में पड़कर अपने जीवन को असंस्कार से असंस्कार तम दशा में ले जाते हैं लेकिन जीवन का परिमार्जन नहीं कर पाते

है तो व घुओ इसको प्रत्येक व्यक्तिया को सावधानी रखनी चाहिए, यह प्रत्येक व्यक्ति का प्रसग है प्रत्यक समाज का प्रसग है राष्ट्र का प्रसग है। आजकल कई व्यक्तिया को इसी म मजा आता है कि किस को कितना भिडा सकत हैं कितना लडाई झगडा करा सकते हैं। जिनके जीवन म सस्कार होत हैं व निभयता के साथ उसकी जाच करते हैं और जाच करके उसका निणय निकालत हैं। नहा ता कभी भी लापसी का जहर बन जाता है। एक सठ जी ने वद्यराज की दवा ले रखी थी और उस नहर म प्राचीन प्रथा की दृष्टि स एक बडा जीमनवार का प्रोग्राम था। जीमनवार करने वाल व्यक्ति क परिवार ने पचों को बुलाया और उनका सलाह स सब कुछ तय किया। मन में सोलह सेर घी डलवाया। उस सेठ न भी खुली तरह से परिवार क सारे सदस्या को न्योता दिया जिसे सिगरा न्योता कहते हैं। तो व सेठ साहब जिन्हाने वद्यराज की दवा ल रखी थी उनका भी मन ठिकाने नही रहा और साचा कि एसी लापसी खान का कब मिलेगी ? इसलिए हम भी आज लापसी जीमन क लिए जाना है। जाना तो है लकिन वद्यराज की राय इस बारे म ल लनी चाहिए। इस भावना स कपडो से सजकर वद्यराज जा स पूछने क के लिए दरवाजे म खडे हो गय सयाग स उसी रास्त से वद्यराज जा शीघ्रगति स जा रह थे। सठ साहब ने वद्यराज का दखकर उनका कहा कि ठहरो ठहरा आज गाँव म जीमनवार है। और गुडकी लापसी है। मैं जाऊँ या नहीं। वद्यराज जा बड जरूरी काय स जा रह थे इसलिए उन्हाने जाते जाते कहा कि लापसा ता जहर है। सेठ साहब ने साचा कि लापसी जहर है और जहर का लापसी खाने से ता मनुष्य मर जाता है ता लापसा जब मर लिए जहर है तो मेरे परिवार वाल खायेंगे ता उनक लिए भी जहर हा होगी। सठ साहब पीछ लौट कर घर म आये और अपन परिवार क सदस्या म कहा कि लापसा ता जहर है अत जीमने मत जाओ। तब

सभी का कर्तव्य तो यह था कि इसका निर्णय करते। सासूजी खुले रूप से तत्काल बहू से पूछती कि तुम बताओ साधु के साथ तुमने सांकेतिक शब्दों में क्या बात की? क्या एक गया और क्या दो गया और क्या तीन गया? इसका खुलासा करो। अगर सासू यह खुलासा उसी समय मांग लेती तो इस तरह का उपद्रव नहीं होता। पर उस सासूजी की बुद्धि गुस्से में और दूसरी स्थिति में परिणत हो जाने से निर्णय न कर पाई। उसका जीवन असंस्कारित था। जिसके मस्तिष्क में कुछ संस्कार आते हैं। किसी की कभी बात हो तो खुले दिल से पूछ लेते हैं, निर्णय कर लेते हैं। कोई बात किसी भी रूप में हो, किसी भी व्यक्ति ने किसी भी रूप में कही हो चाहे पक्ष में कही हो या विपक्ष में चाहे इस विषय में अमुक के मार्फत बात आई हो, पर निर्णायक बुद्धि रखने वाले प्रामाणिक व्यक्ति का काम होता है कि वह उसका खुलासा सम्बन्धित व्यक्ति से सीधे पूछ कर ले। अमुक व्यक्ति जिसकी मार्फत बात आई हो वह कितना ही प्रामाणिक हो उसकी बात पर भी ध्यान न देकर सीधे उसी व्यक्ति से स्पष्टीकरण कर लेते हैं कि क्या आपने अमुक बात मेरे बारे में कही है?

जिससे पूछा जाय उसका भी कर्तव्य होता है कि वह भी बिल्कुल निःसंकोच भाव से स्पष्ट कहे नग्न सत्य के रूप में कहता दोनों संस्कारित बने जा सकते हैं लेकिन ऐसा नहीं होता है और असंस्कार के वशीभूत होकर और विद्वेष करने वालों के साथ ऐसी भावना पैदा कर लेते हैं जिससे रात दिन कमकपन होता रहे—यह मेरा विरोधी है यह मेरे प्रति ऐसी भावना रखता है चाहे रखे या नहीं रखे जिसके ऊपर शंका हो जाती है वह किसी से बात कर रहा हो तो भी उसको शंका रहती है कि वह मेरे ही विषय में बात कर रहा है। इस प्रकार इन बातों में पड़कर अपने जीवन को असंस्कार से असंस्कारतम दशा में ले जाता है किन्तु जीवन का परिमार्जन नहीं कर पाता।

है तो व धुओ इसकी प्रत्येक व्यक्तियो को सावधानी रखनी चाहिए, यह प्रत्येक व्यक्ति का प्रसग है प्रत्येक समाज का प्रसग है राष्ट्र का प्रसग है। आजकल कई व्यक्तिया को इसी म मजा आता है कि किस को कितना भिडा सक्त हैं कितना लडाई झगडा करा सकते हैं। जिनक जीवन म सस्कार हाते है व निभयता के साथ उसकी जाच करते हैं और जाच करके उसका निणय निकालत हैं। नहा ता कभी भी लापसी का जहर बन जाता है। एक सेठ जी ने वद्यराज की दवा ले रखी थी और उस नहर म प्राचीन प्रथा की दृष्टि स एक बडा जीमनवार का प्रोग्राम था। जीमनवार करने वाल व्यक्ति म परिवार ने पचों को बुलाया और उनकी सलाह स सब कुछ तय किया। मन म सोलह सेर घी डलवाया। उस सठ न भी खुली तरह से परिवार के सारे सदस्यो का न्योता दिया जिसे सिगरा योता कहते हैं। ता व सठ साहब जिन्हान वद्यराज की दवा ल रखी थी उनका भी मन ठिकाने नहीं रहा और साचा कि एसी लापसी खाने का कब मिलेगी ? इसलिए हम भी आज लापसी जीमन क लिए जाना है। जाना ता है लकिन वद्यराज की राय इस बार म ल लनी चाहिए। इस भावना स कपडा से सजकर वद्यराज जी स पूछने के के लिए दरवाजे मे खड हा गय सयाग स उसी रास्त स वद्यराज जी शीघ्रगति से जा रहे थे। सेठ साहब ने वद्यराज का दखकर उनका कहा कि ठहरो ठहरा आज गाँव म जीमनवार है। और गुडकी लापसी है। मैं जाऊँ या नहीं। वद्यराज जी बड जरूरी काय स जा रहे थे इसलिए उन्होने जाते जाते कहा कि लापसी तो जहर है। सठ साहब न साचा कि लापसी जहर है और जहर की लापसी खाने से तो मनुष्य मर जाता है, ता लापसी जब मरे लिए जहर है ता मेर परिवार वाले खायेंगे ता उनके लिए भी जहर ही होगी। सेठ साहब पीछे लौट कर घर म आये और अपन परिवार क सदस्यो से कहा कि लापसी तो जहर है अत जीमने मत जाओ। सब

सभी का कर्तव्य तो यह था कि इसका निर्णय करते। सासूजी खुले रूप से तत्काल बहू से पूछती कि तुम बताओ साधु के साथ तुमने सांकेतिक शब्दों में क्या बात की? क्या एक गया और क्या दो गया और क्या तीन गया? । इसका खुलासा करो। अगर सासू यह खुलासा उसी समय माग लेती तो इस तरह का उपद्रव नहीं होता। पर उस सासूजी की बुद्धि गुस्से म और दूसरी स्थिति म परिणत हो जाने से निर्णय न कर पाई । उसका जीवन असंस्कारित था। जिसके मस्तिष्क मे कुछ संस्कार आते हैं। किसी की कभी बात हो तो खुले दिल से पूछ लेते हैं निर्णय कर लेते हैं। कोई बात किसी भी रूप म हो, किसी भी व्यक्ति ने किसी भी रूप म कही हो चाहे पक्ष म कही हो या विपक्ष म चाहे इस विषय मे अमुक के माफत बात आई हो पर निर्णायक बुद्धि रखने वाले प्रामाणिक व्यक्ति का काम होता है कि वह उसका खुलासा सम्बन्धित व्यक्ति से सीधे पूछ कर ले। अमुक व्यक्ति जिसकी माफत बात आई हो वह कितना ही प्रामाणिक हो उसकी बात पर भी ध्यान न देकर सीधे उसी व्यक्ति से स्पष्टीकरण कर लेते हैं कि क्या आपने अमुक बात मेरे बारे म कही है?

जिससे पूछा जाय उसका भी कर्तव्य होता है कि वह भी बिल्कुल निःसंकोच भाव से स्पष्ट कह दे [illegible] रूप म कह दे तो दोनों [illegible] रह सकते हैं लेकिन ऐसा नहीं होता है और असंस्कार के वशीभूत होकर और विद्वेष करने वालों के साथ ऐसी भावना पैदा कर लेते हैं जिससे रात दिन कलह [illegible] रहे—[illegible] [illegible] [illegible] भावना रखता है चाहे रखे या नहीं रखे [illegible] है [illegible] [illegible] है। [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

है तो व धुओ इसकी प्रत्येक "यत्तियो को सावधानी रखनी चाहिए, यह प्रत्येक व्यक्ति का प्रसग है प्रत्येक समाज का प्रसग है राष्ट्र का प्रसग है। आजकल कई व्यत्तिया को इसी मे मजा आता है कि किस का कितना भिडा सकते हैं कितना लडाई झगडा करा सकते हैं। जिनके जीवन म सस्कार होते हैं व निभयता के साथ उसकी जाच करते हैं और जाच करके उसका निणय निकालत हैं। नही तो कभी भी लापसी का जहर बन जाता है। एक सेठ जी ने वद्यराज की दवा ले रखी थी और उस गहर म प्राचान प्रथा की दृष्टि स एक बडा जीमनवार का प्रोग्राम था। जीमनवार करने वाल व्यक्ति क परिवार ने पचों को बुलाया और उनका सलाह से सब कुछ तय किया। मन मे सोलह सेर घी डलवाया। उस सेठ न भी खुली तरह से परिवार के सारे सदस्या को "योता दिया जिसे सिगरा योता कहते हैं। तो व सठ साहब जिहोंने वद्यराज की दवा ल रखी थी उनका भी मन ठिकान नही रहा और सोचा कि एसी लापसी खान का कब मिलेगी ? इसलिए हम भी आज लापसी जीमन क लिए जाना है। जाना तो है लकिन वद्यराज की राय इस बार म ल लनी चाहिए। इस भावना स कपडो से सजकर वद्यराज जी स पूछन के के लिए दरवाजे मे खडे हो गय सयोग स उसी रास्त से वद्यराज जी शीघ्रगति से जा रहे थे। सठ साहब ने वद्यराज को दखकर उनको कहा कि ठहरो ठहरो आज गाँव म जीमनवार है। और गुडकी लापसी है। मैं जाऊँ या नही। वद्यराज जी बड जरूरी काय स जा रहे थे इसलिए उन्होंने जाते जाते कहा कि लापसी तो जहर है। सेठ साहब ने सोचा कि लापसी जहर है और जहर की लापसी खाने से तो मनुष्य मर जाता है, तो लापसी जब मरे लिए जहर है तो मेरे परिवार वाल खायेंगे तो उनके लिए भी जहर ही होगी। सठ साहब पीछे लौट कर घर म आये और अपन परिवार के सदस्यो स कहा कि लापसी तो जहर है अत जीमने मत जाओ। तब

हम ता नही जीमते। पचो ने कहा कि बात तो बिगडी लेकिन यह मालूम करना चाहिए कि यह बात कहा से उठी। तो फिर इसकी खोज करने के लिए सोचा और एक दूसरे से पूछताछ करने लगे तो सभी सम्बन्धियो से पता लगाते लगाते वहा तक पहुँचे कि सेठजी ने कहा था कि लापसी म जहर है। सेठ ने कहा कि देखिये म गलत नही कहता और मुझे ता वद्यराज जी ने कहा। मने उनसे पूछा कि म लापसी खा लूँ तो उन्होने कहा कि लापसी म तो जहर है। वहां पर वद्यराज जी को बुलाया गया और पचो ने सोचा कि यदि जहर की पुडिया जायेगी तो वैद्यराज जी के यहा से ही जायेगी उन्हें बुलाकर पूछें कि आपके यहा से कितने जहर की पुडिया गयी। वद्यराज जी ने कहा कि मेरे यहा से तो एक भी जहर की पुडियाँ नही गई। उनसे कहा गया कि फिर आपने कसे कहा कि लापसी म जहर है। वद्यराज ने कहा सेठजी को ता मने दवा दे रखी थी और उसके लिए पथ्य बता रखा था कि तल और गुड नही खाना। इसलिए यह लापसी सेठजी के लिए जहर है, लेकिन गाव वाला के लिए जहर थोडे ही है। पचो ने कहा कि जब आपके यहा से पुडिया नही गयी और आपने पथ्य की दृष्टि से बताया तो फिर आप ही इस लापसी का पहले जीम लो। वद्यराज जी निभय थे और निश्चित थे, वे आगे चले और जाकर अच्छी तरह से लापसी खा ली और बठ गये, दो तीन घन्टे कुछ नही हुआ ता सारे गाव वाले बिना बुलाये जीम गये।

बन्धुओ, देखिये किसी भी चीज का निणय किये बिना किसी बात म पड जायें तो लापसी मे जहर के समान हो जाता है और इस प्रकार अनेक बन्धु कमबन्ध करके अपने जीवन को न जाने कसे असस्कारित बना लते है। जीवन को सस्कारित करने के लिये चातुर्मास का काल अत्यन्त महत्वपूण है।

इन चार महीना म वस्तु स्थिति का निणय करें। निणय अनेको चीजो का होता है। सब चीजा का निणय सम्यग् दृष्टि से कर लते हैं ता वहाँ वास्तविक विकास का प्रसग ही आ जावेगा।

आप अपने मनो म यह दृढ प्रतिज्ञा करें कि हम किसी बात का निणय करने म पूरी तरह स तत्पर रहना है और निणय भी उसी व्यक्ति स मिलकर करेंगे जिससे सीधा सम्बन्ध है। वह निणय नग्न सत्य के रूप म हागा और उसी स जीवन सस्कारित हा जाएगा।

घडी सवा दस बजा रही है। चौदस की स्थिति अवश्य है। पर चौदस हान पर भी अधिक देर तक सुनाने पर थाडा ब्रेक लगा हुआ है। इस स्थिति स इस विषय को गौण कर रहा हू। इधर मेरे सामन और भी प्रश्न आ रहे हैं कि स्थायी कथा भाग भी याख्यान म रखा जाव, जिसस साधारण जन मानस भी कुछ शिक्षा ग्रहण कर सकें और यह ठीक भी है। भगवान महावीर ने जावन की पुष्टि के लिय चार तरह के अनुयोग फरमाये हैं। पहला है द्रव्यानुयाग जिसम द्रव्य सम्बन्धी पदार्थों का विषद् विवरण ह। दूसरा ह गणितानुयोग जिसम गणित सम्बन्धी विवरण ह तीसरा ह चरण करणानुयोग, जिसम आचार सम्बन्धी बाता का वणन ह और चौथा ह धम कथानुयोग।

तो धम कथानुयोग भी शास्त्रो का एक अग माना गया ह। इसका कथन करते हुए प्रभु ने फरमाया कि जो साधक गहन साहित्य का नही समझ सकते उनका कथाभाग के प्रसग से साधना के उन गहन सूत्रा का समझाया जा सकता ह। चरित्र चित्रण के रूप म उनको तत्व का बाध हो जाता ह। रग की डिबिया म क्या क्या चीजें रखी हुई हैं? बच्चा का यह तात्विक दृष्टि स बताने जावें कि हाथी, घोडा रथ आदि सभी इस रग की डिबिया मे हैं पर बच्चे समझ नही पाते। जब उसी रग का दीवार पर हाथा, घाडा के रूप में चित्रित करके बता दिया जाता ह तो जल्दी समझ जाते है।

इसलिय वीतराग दव ने चार अनुयाग बताये है। इन सबके साथ वीतराग वाणी का सम्बन्ध जुडा हुआ ह। जीवन के निर्माण करने में जितना योग अन्य अनुयोगा का ह कथानुयोग का भी

उतना ही योगदान है। इससे सरलता से समझकर हर भाई बहन अपने जीवन की तुलना उन चरितनायकों से कर सकता है। इसी प्रसग से सोच रहा हू कि महाभारत के बीच का प्रसग कथा रूप में कहता चलू। इसमे कमलसेन नामक एक तरुण का जीवन है। उसमे उस तरुण ने कैसा निष्ठा रखी है उसने अपना जीवन कैसा बनाया, और जीवन के प्रश्न को किस तरह से हल किया, इसका दिग्दर्शन होगा। इसमे कुछ माताओ का भी प्रसग आता है जो सती रूप म प्रख्यापित हुई हैं। समय का अवकाश नही है पर उसकी एक कडी उच्चारण के रूप म रख ही देता हू क्योकि वह आन्तरिक जीवन का परिमार्जन करने वाली है।

निज गुण सुखकामी ध्याता है आतम राम को।

कहा है निज गुण सुखकामी जो अपने सुख की कामना रखता है अर्थात् अपने जीवन को समझने की भावना रखता है। उसे विकसित रूप म देखना चाहता है और जीवन की कलुषताओ का उन्मूलन करके जीवन के वास्तविक रूप का निखारना चाहता है। वह आत्माराम म रमण करता है। आत्माराम के ध्यान के बिना जीवन निर्णायक समतामय नही बन सकता है। इसलिये इस मगला चरण की कडी के साथ भी थोडा सम्बन्ध जोडें।

तीन व्यक्ति माता पिता और पुत्र तीनो अपने विचारो म मस्त हो रहे हैं और बहन का सम्बन्ध करने का विचार कर रहे हैं। वह भी कन्या गरीब घराने म निकल कर करोडपति के घर पहुची है। पर उसकी यह तमन्ना नही है कि सत्ता और सम्पत्ति म डूबा रहे। वह तो यह समझती है कि यह सत्ता और सम्पत्ति और मोहिनी मेरे जीवन के लिए महत्त्वपूर्ण नही है मेरे जीवन के लिये महत्त्वपूर्ण है तो जीवन का स्वरूप है। मैं अपने उस सही स्वरूप को कैसे प्राप्त करू और कैसे समझ इस चिन्तन को लेकर वह अपने हृदय म मग्न है।

इन चार व्यक्तियो के बीच म क्या प्रसग बनता है और

परम श्रद्धेय प्रातः स्मरणीय

आचार्य प्रवर श्री नानालालजी म सा

के

ज्ञान-भक्ति एवं वैराग्य रस में ओत प्रोत

'पावस-प्रवचन'

हम सबके जीवन में नया प्रकाश ला देते हैं।

□

दीपचन्द उत्तमचन्द

(कपड़े के व्यापारी)

गंगानगर (बीकानेर)

पति क्या निणय लता है और उस बहन पर क्या बीतती है ! यह मल के लिये रख देता हू । इच्छा ता थी कि पूरा कर दू पर समय अधिक आ जाने स इस आग के लिये छाड दना हू । फिर प्रमग आवेगा ता सुनाउगा ।

आपको अन्त में इतना ही सम्बोधन करना चाहता हू कि आप इस राजधानी के नागरिक हैं बुद्धिमान् हैं। जीवन की स्थिति को समझने के लिए वाणी का शुद्ध करिए और कतव्यशील बनकर जीवन को सस्कारित करन की राह पर चल पडिए। स्वाध्याय सामायिक प्रतिक्रमण रात्रि भाजन त्याग व्रत पच्चक्खाण विधिपूवक करिए और इतना करत हुए ध्यान यह रहे कि जीवन के वास्तविक रूप को समझें। इसकी तयारी चातुर्मास म निरन्तर करत रहें और इस भावना क साथ चलत रहेंगे तो आप अपने कल्याण क माग को प्रशस्त बना सकगे ।

लाल भवन
२५ जुलाई १९७२

●●

शीतलनाथ क स्वरूप का समझने की कोशिश करें।
स्वरूप का वणन करत हुए उपमा दी है कि—

> शीतल चन्दन नी परे जपता निश दिन जाप।
> विषय कषाय थी ऊपनो मेटो भव दुख ताप॥

भगवन्! आप चन्दन क समान शीतल हैं शीतलता
अधिकाशत आज क मानव का हृदय विषय और
आग स जल रहा है। एक भी प्राणी ऐसा दृष्टिगत नही
सासारिक अवस्था म रहत हुए विषय और कषाय की ज्व
झुलस रहा हो। अधिकाश प्राणियो की स्थिति यह है कि
रूप म रहते हुए भी विषय और कषाय की आग से सतप्त
है। उस गर्मी को शात करने के लिए तदनुरूप किसी शीतल
की आवश्यकता है।

बाहर से भीतर की

जिस प्रकार शरीर म जब गर्मी लगने लगती है और
फु सिया भी निकल आती है उस समय चन्दन का लप किया जाता
नमिराज ऋषि क वणन को आपने सुना होगा। उनक शरीर म द
ज्वर की व्याधि हा गई। वे उस दाह ज्वर स जलने लगे। हाय
हाय!! करन लग। परिवार के सदस्या म अशाति का वातावरण
बन गया क्योकि सब सोच रहे थे ये हमारे स्वामी हैं जो हम सबका
सरक्षण करने वाले हैं भरण पोषण करने वाले हैं आज उनके शरीर
म दाह ज्वर लग रहा है हम कस शांति की सांस लें? जब उन्हे
ज्ञात हुआ कि वैद्य न बावना चन्दन का लेप बताया है तो फिर उस
चन्दन का लेप करने म कौन पीछे रहे अनक नौकर चाकर चन्दन
घिसने के लिए तत्पर थ—किन्तु अत पुर म रहने वाली महारानियो
ने विचार किया कि इस प्रकार के सवा के लाभ से हम वचित क्यों
रहें? स्वामी क शरीर म दाह ज्वर लग रहा है एक व्यक्ति दा

रहा। इस निमित्त से राजर्षि आत्मचिंतन की ओर उ मुख हुए और सोचने लगे कि आत्मा का स्वरूप परमात्मा के तुल्य है। परमात्मा इन विषय कषाय और परिवार के सयोग से सवथा परे हैं जसे वे परे हैं वस ही मेरी आत्मा भी प्रभु के तुल्य होने के नाते इन सबसे परे है तो मैं इस सयोग के साथ क्यो चिपट बठा हू और इस अमूल्य जिन्दगी को इन विषय और कषाय की आग म क्यो जला रहा हूं। जब उनमे इस प्रकार की आत्म-जागृति हुई तो वे भव्य अन्त पुर का परित्याग करके विषय और कषाय का सवथा नाश करने के लिए चल पडे और उन्होने तन मन की शीतलता के अनुभव के साथ आत्मिक शान्ति भी प्राप्त की। बन्धुओ ! आज मानव क्यों सतप्त हो रहा है। उसके मन म जो दाह ज्वर से भी भयकर एक सताप है वह सताप शारीरिक सताप की दृष्टि मे नही है, लेकिन विषय और कषाय का सताप है। उस विषय और कषाय के सताप को समाप्त करने के लिए हम भगवान के स्वरूप का चिन्तन करें और सोचें कि हमारी आत्मा निखालिस परमात्मा का स्वरूप है जितने बाहरी सयाग इसके साथ लगे हुए है वे कक्ण की तरह ही खटखट पदा कर रहे हैं। मनुष्य जितने जितने बाहरी पदाथ पकडने की कोशिश करता है वह उनके बंधन म बधता चला जाता है। जितनी अधिक विषयो की लालसा रखता है उतना ही वह अन्तर ताप का बढाता है बचना बढाता है—चाहे भव्य भवन हो सुन्दर शय्या हो लेकिन विषय और कषाय की आग उसके मन मे लग रही है तो उसको निद्रा नहीं आयेगी,वह हाय हाय करता हुआ शय्या पर करवटें बदलता रहेगा। रावण राजा के सोने के लिए कोमल फूलो की शय्या बिछी हुई है लेकिन उस निद्रा नही आ रही है वह करवटें ले रहा है उस शारीरिक दुख नही था। लेकिन विषय और कषाय की आग में वह जल रहा था। वह सोचता है कि म परिश्रम करके राम की रानी का बगीचे म ले आया हू लकिन वह मेरे नियन्त्रण मे नहीं

आ रही है। रावण इस प्रकार के भय भवन म रह कर रावण जसे व्यक्ति भी जब सतप्त हो सके हैं ता आप सोचिये कि ससार के मनुष्यो की क्या दशा होगी,आज दुनियां म अशाति है,गर्मी है ताप है— इसके कारण को सोचा जाय तो विषय कषाय की ज्वाला ही उसका कारण परिलक्षित होगा। यह भयकर ज्वाला है, इस ज्वाला से छुटकारा पाना सहज काम नही है। इसस छुटकारा तभी हो सकता है, जब इसान आत्मिक तत्व के विषय म स्थाइ रूप से सोचे, और समझे— मेरा आत्मा अखण्ड है मेरी आत्मा इन विषय कषायो स परे है— इस प्रकार के निणय की एक निर्णायक शक्ति जिस व्यक्ति म आती है वह विषय कषाय की ज्वाला स ऊपर उठ सकता है। यह शक्ति कब आयेगी ? जब जीवन का निणय करेगा जीवन का स्वरूप समझेगा।

समग्र परिभाषा

मन कल जीवन की परिभाषा की थी एक परिभाषा पहले भी रखी थी जहा प्रश्न उठा था—कि जीवनम ? जीवन क्या है ? इसको समझने का प्रयास करना है। जो जीवन का स्वरूप है जीवन की परिभाषा है वह परिभाषा इस प्रकार है।

सम्यग् निर्णायक समता मयञ्च यत तज्जीवनम

जो सम्यक निर्णायक है जो समतामय है—वही जीवन है। सम्यक निणय किस बात का ? इस विषय की कल बात अधूरी रह गई थी, लकिन निणय करना आवश्यक है। जब तक मन म सम्यग् निणय नही होगा तब तक आधि व्याधि, बाहरी ताप नही हटगा। जिन्होने आत्म निणय किया ससार का निणय किया—वे निणय करके गतव्य माग पर आग बढ़। आज के मानव को शीतल नाथ भगवान के चरणो म बठ कर जीवन का निणय करना है जीवन को समझना है। जीवन वह है जो स्व-पर का निर्णायक हो। निर्णायक

होने के नाते निणय की नक्ति को पहले समझना है। जहाँ आत्मा का स्वरूप आता है, आत्मा की नक्ति का विश्लेषण आता है—वहा कुछ मतभेद ह। कुछ दाशनिकों का कथन है कि आत्मा नाम का तत्व कहा है जो कि निणय करें ? आत्मा हमको दिखती नही है। जो पाच इन्द्रियो से नही दिखती है उसको कसे मानें ? इन्द्रिया से परे दुनिया की बहुत चीजें हैं लकिन हम मानने का तैयार नही हैं। आज विनान बढा चढा हुआ है। वज्ञानिक दृष्टि से लोग परीक्षण कर रहे हैं। लोग सोचते हैं बस विज्ञान की तुला पर जो चीज ठीक उतर जाय वही सही तत्व है। विनान की तुला पर सही नही उतरे तो वह सही नही है। इस प्रकार जब विज्ञान प्रत्यक्ष वस्तु का प्रमाण देता है प्रत्यक्ष का ही प्रमाण मान कर चलता है तो हम अप्रत्यक्ष को कसे मानें ? इस प्रकार की विचाराधारा चलती है। जब उनसे कहा जाता है कि भाई ! तुम सोचा जब आत्मा नाम का तत्व नही है तो जीवन क्या ह ? बिना जीवन के शुभ अशुभ का निणय कैसे हो ? जसा कि आप सोच रहे हो प्रत्यक्ष जो दिखता है वह सब सही है तो यह भी एक प्रकार का निणय ही है। तो बताइये यह निणय लेने वाला कौन है ? उनका उत्तर आता ह यह निणय लेने वाला यह नरीर ह ? नरीर के अतिरिक्त कोई तत्व नही ह। **शरीरमेव निर्णायकम।** ' शरीर ही निर्णायक ह। व ऐसा तक देते हैं। वह तक इस रूप म दते हैं--शरीर का निर्णायक मानते हैं क्योंकि यह पाच भूतो से बना ह पाच भूतो से नरीर बनने के बाद इसम निर्णायक शक्ति तयार हो गई। हम उस नक्ति मे निणय लेते हैं अत हम प्रत्यक्ष को ही प्रमाण मानते हैं। वे इस तक के साथ अपनी बात का पोषण करते हुए यह उदाहरण देते हैं कि जसे अलग-अलग महुवा आदि द्रव्यो म मादकता नही ह किंतु उनके सयोग मे मादकता उत्पन्न हो जाती ह। वसे ही इन पाच भूतो के सम्मेलन से निर्णायक शक्ति का सजन हो जाता ह।

क्या शरीर निर्णायक है ?

अपनी निर्णायक शक्ति का पता लगाना बडा ही कठिन काम है। अपना ज्ञान होने पर ही अपने निर्णायक का विश्वास जागता है। अपना ज्ञान और अपना निर्णायक शाब्दिक दृष्टि से पृथक २ दो शब्द अवश्य हैं । किन्तु जहा लक्ष्य का समाधान होता है दोनो एक ही भाव के प्रतीक हो जाते हैं। इस विषय म अनेक लोगो के अनेक विचार हैं अनेक धारणाएं हैं । कुछ यह कहते हैं कि–आपके सामने घडी है। वह टाइम बताती है। लेकिन जब इसके पुर्जे अलग-अलग थे तब तक वह घडी बोलती नही थी, आवाज नही देती थी जसे ही पुर्जे एकत्रित हो गये वैस ही इसम खटखट की आवाज आने लगी, वह बोलने लगी, अब घडी इतना टाइम बता रही है। जसे घडी मे टाइम देने की स्थिति आ गई वस ही शरीर मे पाच तत्वो के मिलने से आवाज आ गई। यह घडी इस कथन की पुष्टि करता है। इस प्रकार के चिन्तन वाले कुछ भारतीय भी है और कुछ पाश्चात्य विद्वान भी है। जो जडवादी हैं। उनमें थलिस और एनाक्सीमान्डर, तथा ऐनाक्सीमेनेश आदि मुख्य है। वे अपनी मान्यता की दृष्टि से यह चिंतन करत हं। इस विषय म आपको भी चिन्तन करना है क्या इन जडवादियो का जो कथन है वह वस्तुत सत्य है ? आपके सामने भी ऐसे कुछ विचारक व्यक्ति आ सकत हैं और कुछ ऐस सम्भावित प्रश्न खड कर सकत हैं। यदि आप अपने जीवन के निर्णायक स्वरूप को समझ हुए नही होगे तो आप उसका उत्तर नही दे पायगे और आप लडखडा जायेंग। इस तरह आप शान्ति के माग स भटककर मानसिक अशान्ति म उलझ जायगे। निर्णायक शक्ति शरीर ही नही है यह जो कथन है कि 'शरीर मेव निर्णायकम्' इस पर कोई विचारवान व्यक्ति पूछ सकता है यदि शरीर ही निर्णायक है तो मुर्दा शरीर भी निर्णय करेगा। यदि वह ऐसा नही करता ह तो उसकी निर्णय करने की शक्ति कहा चली

गई ? पाच भौतिक तत्व तो उसमें विद्यमान हैं ही । इससे यह स्पष्ट होता है कि पाच भौतिक तत्वो के अतिरिक्त स्वतन्त्र निर्णायक शक्ति है । यदि कोई कहे कि वह दिखती क्यो नही है तो उसका यह सोचना उस आदि युग की तरह का है । आज तो वैज्ञानिक युग भी चल रहा है जो वैज्ञानिक युग का प्रमाण देते हैं वे सिर्फ आँखो से दिखे उसी को तत्व मानते हैं ऐसा नही है । उनकी दृष्टि लम्बी चौडी हो रही है । वे प्रत्यक्ष के अतिरिक्त अनुभवो को भी मानते हैं । अत शरीर ही निर्णायक है और वही जीवन है यह युक्तिसगत नही है । पूर्व मे जो महुवा आदि का उदाहरण दिया गया था वह यहाँ पूर्णरूप से घटित नही होता है । क्योकि महुवा आदि जिन पदार्थों से मदिरा बनती है उनमे किसी न किसी रूप मे मादकता पहिले ही विद्यमान होती है वही सकलित रूप मे मदिरा कहलाती है । जैसे प्रत्येक तिल मे पृथक पृथक थोडा थोडा तेल रहता है । उन तिलो को एकत्रित करके पेर दिया जाय तो उसमे से अधिक तेल निकल आयेगा । यद्यपि पहले उसमे तेल नही दिखता था किन्तु अधिक तिलो को पेर दिया तब तेल सग्रहित हो गया । वह तेल कोई नई चीज पैदा हो गई ऐसा नही है । वह तो तिलो मे पहिले था ही लेकिन उस प्रकार का अश बालु मे नही है । रेत का कितना ही इकट्ठा किया जाय उसमे कुछ भी निकलने वाला नही है । पाँच भूतो में प्रत्येक में चैतन्य नही है अत उनके मिलने पर भी चैतन्य उत्पन्न नही हो सकता । यथा बालु रेत । अत मदिरा का रूपक यहा युक्ति सगत नहीं है । यदि यह कहा जाय कि कुछ तत्वो के मिलने से निर्णायक शक्ति उत्पन्न हो जाती है तो यह सामने घडी लगी हुई है इसमे अनेक पुर्जे लगे हुए हैं यह आवाज भी कर रही है क्या इतने मात्र से इसमे निर्णायक शक्ति मान ली जाय ? किन्तु ऐसा नही है घडी अपना स्वय निर्णय नही दे सकती उसका निर्णय करने वाला तो कोई और ही है और वह है घडी साज । यह घडी है इसमें घडी साज और घडी अलग २ तत्व है । घडी साज के बिना घडी मे

कोई कार्यवाही नही बनती है—घडी साज के बिना उसमें आवाज नही होती। घडी साज समझता है कि यह घडी है। घडी के पुर्जे और काटे को वह यथास्थान रखता है। यह निर्णायक शक्ति उस घडी से भिन्न उस घडीसाज मे है इसलिये निर्णायक अलग है। इसी प्रकार घडी के समान यह शरीर बना है लेकिन इसका बनाने वाला घडी साज की तरह वह निर्णायक आत्मा है। वह इस शरीर मे भिन्न है। और वर्तमान मे वह दूध पानी की तरह शरीर से ओत प्रोत होकर चल रहा है। अत शरीर मेव निर्णायकम् यह सिद्धान्त नितान्त हास्यास्पद है। साथ ही दूसरा जो यह कहा गया था कि 'प्रत्यक्ष ही प्रमाण है' उनसे मैं पूछना चाहूगा कि आपके १० पीढी के दादाजी थे कि नही? प्रत्यक्ष तो है नही तथा आपने उन्हे आखो से भी नही देखा है फिर आप कैसे मानते हैं कि हमारे दादाजी थे, किन्तु आपको बाध्य होकर अनुमान से ऐसा मानना ही पडता है। उस समय आप प्रत्यक्ष पर ही स्थिर नही रह सकेंगे। आप यह कहेंगे कि वर्तमान मे जो हम अपना शरीर लेकर रहे है इस शरीर का सम्बन्ध हमारे पिता के साथ है और वे हमारे सामने मौजूद है इससे स्पष्ट है कि पिताजी के पिताजी भी थे और उसके आगे उनके भी पिताजी थे। इस प्रकार दादाजी तक सम्बन्ध का तारतम्य जुड जाता है। यह अनुमान का विषय है। जब आप वैज्ञानिक स्थिति से चिन्तन करते हैं तो वैज्ञानिक भी जब अदृष्ट की खोज करते हैं तो वे भी अनुमान का सहारा लेते हैं। वैज्ञानिकों का यह विश्वास है कि इस विश्व मे कोई ऐसी शक्ति अवश्य है जो सृष्टि में निज रहस्य बनी हुई है जिस खोजना है इसके लिए उनकी दौड धूप चल रही है और अनेक वैज्ञानिक इस रहस्य को जानने के लिये अपनी जिन्दगी तक समाप्त कर चुके हैं। तब कही जाकर कोई नया आविष्कार होता है अत विज्ञान भी अनुमान के आधार पर ही नई नई खोजें करता है। इसलिये प्रत्यक्ष जो इन्द्रियो का विषय है वह इन्द्रियो तक ही सीमित है। इन्द्रियो के

सम्मुख जो पदार्थ हैं उनको भी हम पूरा नहीं देख पाते हैं। अभी आप यहां बैठे हुए हैं इस मकान में आप क्या-क्या देख रहे हैं ? आपसे अलग अलग प्रश्न किया जाय कि आपको क्या क्या दृष्टिगत हो रहा है ? आपकी आँखें क्या देख रही हैं ? तो उत्तर आयगा दीवार को देख रही हैं, खम्भे देख रही हैं, दीवार पर टंगा घड़ा देख रही हैं और जो भाई बहिन यहाँ बैठे हुए हैं उन्हें भी देख रही हैं, लेकिन इनके अतिरिक्त एक पोलार है क्या इसमें कुछ देख पा रहे हैं। क्या इस पोलार में कोई सत्त्व नहीं है। आप कहेंगे न सोच क्योंकि इसमें भी एक तत्त्व है। इसमें ठसाठस पुद्गल भरे हुए हैं और वे भी असंख्य हैं। शास्त्र की दृष्टि में और वीतराग की दृष्टि में इसका आप थोड़ा सा अनुमान कर सकते हैं। ऊपर देखें तो आपको इस छोटे से छेद में से आकाश दिखाई देता होगा। इसमें से सूर्य की किरणें आ रही हैं, इन किरणों में आपको असंख्य मूतड़े उड़ते हुए दिखेंगे वे मूतड़ इतने सूक्ष्म हैं कि दूसरा कि पदार्थों में पड़ता समय आपको उनका भान नहीं हो पाता है। ये मूतड़े सारे कमरे में विद्यमान हैं वे आपको केवल सूर्य की किरणों में ही दीख पड़ रहे हैं। छाया में उन्हें आप नहीं देख पाते। आगे की स्थिति सोचिये आप बादल देख रहे हैं आप दूसरी चीजें देख रहे हैं। कुछ आंख से नहीं दिखने वाली चीजें हैं उनके लिए शक्तिशाली दूर वीक्षण (माइक्रोस्कोप) यन्त्र का प्रयोग होता है उससे आकाश में विद्यमान तत्त्वों को देखा जाय तो बहुतेरे तत्त्व आपको दिखने लग जायेंगे।

पानी मे भी जीव हैं ?

वीतराग देव ने आध्यात्मिक जीवन दृष्टि से यह बतलाया है कि पानी की एक बूंद में असंख्य जीव हैं लेकिन एक बूंद पानी में असंख्य जीव हैं—इस बात का प्रमाण प्रत्यक्ष नहीं है। नास्तिक लोग इसे गप्प मान सकते हैं। क्योंकि पानी के जीव उन्हें प्रत्यक्ष नहीं

की कोशिश करें तो जीवन के शिखर तक पहुंच जाते हैं जीवन के प्रश्न को हल कर सकते हैं। जीवन क्या है ? इस स्थिति को जिसने समझा है वह व्यक्ति ठीक तरह से चल पड़ा है। जिसने नहीं समझा है वह भौतिकवाद पर चला, जीवन के झंझावात में फँसा और विषय और कषाय की आग ने उसे जलाने की कोशिश की। कल मैं एक इधर रख रहा था। उसमें प्रसंग चल रहा था कि इधर सासू, ससुर और पतिदेव इन तीनों की निर्णय शक्ति गायब है सबकी निर्णायक शक्ति योग्यता की दृष्टि से विद्यमान है, लेकिन मन असंस्कारित है। हीन दृष्टि से उन्होंने सोच लिया एक व्यक्ति ने अर्थात् सासु ने जो कह दिया वही ठीक है। वही गोविन्द करे। माता पिता जोर देकर कह रहे थे गोविन्द, तुम्हें हमारी बात माननी पड़ेगी। तुम इस प्रकार हमारे से अलग नहीं रह सकते। तुम सोचते हो, यह कन्या तुम्हें बहु[illegible] प्रेम करती है, तुम्हारे प्रति स्नेह दिखाती है लेकिन यह इसक[illegible] कपटयुक्त चलन है। इसके जीवन पर तुम्हें विश्वास नहीं कर[illegible] चाहिए। तुम बिना स्त्री के रह जाओ तो भी कोई बात नहीं। तु[illegible] और कन्या मिल जायेगी तुम फिक्र मत करो। हमारी बात को स[illegible] कर निर्णय शीघ्र करो। आखिर वह तरुण विनयशीलता के [illegible] दबा हुआ माता पिता के समक्ष बोल नहीं सकता, उसने दब स्[illegible] कहा पिता श्री, आप और मातु श्री जो बोल रहे हैं। मैं इसको [illegible] युक्त समझ लूं लेकिन तथ्ययुक्त समझने के पश्चात् मुझे क्य[illegible] है। आगे तो समझा दीजिये। तो माता बोल उठी, पुत्र क्या [illegible] है ? इसको समाप्त करना है। माता मनुष्य की हत्या और [illegible] पत्नी की हत्या, उसको समाप्त करने का यह संकल्प अ[illegible] लग रहा है। अगर वह अनिष्ट है और आपकी दृष्टि में [illegible] है तो उसको क्यों नहीं उसके पिता के यहां भेज दिया जा[illegible] उत्तर सुनकर माता कहने लगी, पुत्र तू नहीं समझता है[illegible] [illegible] है यह अभी अपने परिवार वालों को मालूम [illegible]

सम्बन्धियो का भी ज्ञात नही हुआ है लेकिन जब इसको वहा भेज देंगे और कुछ दिन तक नही लायेंगे तो बाद मे लोगो म चर्चा का विषय बनेगा। इससे हमारा मुँह काला हो जायगा इसलिए पिता के यहा छोडना ठीक नही है। इसका तत्काल इलाज करना है। आज सूय अस्त हो उसके पहल पहल। गोविन्द ने कहा, माता श्री ! मैं नही समझ पा रहा हू। कसे इलाज हो। इतने मे पिता चिन्तन करके कहता है पुत्र मेरे मस्तिष्क म एक उपाय आ गया है। जगल के बीच में एक अपनी बगीची है, उस बगीची अन्दर पडा क बीच मे एक भयकर कुआ है। इसको तुम बगीची की हवाखोरी करने की दृष्टि मे वहा ल जाओ और कुए क नजदीक ले जाकर कुए मे धक्का दे देना। जब कुए म गिर जाय तब कुछ देर तक तो मन बोलना। थोडी देर के बाद हल्ला करना। कुछ रोना, हाय यह क्या हो गया मेरी पत्नी कुए म गिर गई। जितने प्राणी वहा होंगे उन तक तुम्हारी पुकार पहुच जायगी। बगीची के जो रक्षक हैं वे हमारे पास पहुचेंगे। हमारे पास समाचार आयेगा तो हम भी पहुच जायेंगे। और सब काय ठीक हो जायगा। यह उपाय ठीक लगा। आप देखिये यह निर्णय हो रहा है। यह कसा निर्णय हो रहा है ? यह सस्कारित जीवन का निर्णय है ? यह जीवन का निर्णय है या अधकार का निर्णय है ? आप सोचेंगे ऐसा कृत्य नही हुआ होगा। आज के जमाने म ऐसे कृत्य नही होते हैं ? मैं क्या बताऊँ मेरे कानों मे ऐसे कुछ कुछ शब्द आ जाते हैं। वसे कृत्य नही होते हैं लेकिन चाँदी के टुकडो के लिये इससे भी भयकर कृत्य होते हैं। सुनने को मिला एक कन्या का विवाह हुआ। उसके बाद ससुराल वालो के मन म आया, इस कन्या के साथ पसा कम आया है। इसको खत्म करो। दूसरी कन्या के साथ विवाह करेंगे तो और पसा आयेगा। इस कारण उस कन्या को जला दिया है या दूसरे तरीके स खत्म कर दिया जाता है। ये एसे अन्याय और अत्याचार कभी कभी कर्णगोचर होते हैं। आप

कहेंगे, महाराज, कहानी बहुत होती हैं। कहानी का जिक्र मैं कर रहा हूं वह मैं इसलिए कर रहा हूं जीवन अंधकार में पड़ा हुआ है, आप कहेंगे अंधकार क्या है? अंधकार ऐसा वृत्तियाँ हैं, इस प्रकार की मानसिक भावना है जिनके कारण मानव जीवन को नहीं समझ पा रहा है, ठीक तरह से निर्णय नहीं कर पा रहा है। ऐसी अवस्था में मैं धर्म समझाऊँगा तो किसको समझाऊँ। जो अज्ञानी हैं जिनका अज्ञान का पर्दा नहीं हटा है वे जीवन को क्या समझेंगे।

और जो कुछ होगा धर्म पर आयेगा और धर्म पर आयेगा तो वास्तविक दृष्टि के रूप में होगा। फिर भी मैं धर्म की परिभाषा को स्पष्ट करने की कोशिश कर रहा हूं। वह निर्णायक शक्ति आपके मस्तिष्क में तभी आयेगी जब आप अज्ञान से रहित होंगे। जब आप समझ जायेंगे कि अब अनेक मकान की आवश्यकता नहीं है काला बाजारी करने की आवश्यकता नहीं है, आदि पर शान्ति के क्षणों में जब इस प्रकार की भावना बनेगी तब काम बन जायगा। इस भावना से ही संत भी कहते हैं पर उसका असर थोड़ी देर ही रहता है उसके बाद वही दौड़ धूप उसी ढंग से चल पड़ती है। और उसी वातावरण में रहते हैं। आप यह कहें कि ऐसी बातें तो कहूं तो फिर कौनसी बातें कहूं। ऊंची ऊंची बात कहूं तो आप सुनेंगे नहीं। क्योंकि वे बातें आपके दिमाग में बैठती नहीं हैं कारण स्पष्ट है कि दिमाग में अन्यान्य बातें भरी रहती हैं। आप यह जानते हैं जिस मकान में बैठना है उसमें पहले झाड़ू देते हैं। उस मकान को साफ करते हैं। फिर उसमें बैठते हैं उसी तरह आप अपने दिमाग को भी झाड़ू देकर बैठें। आपको इस बात पर कुछ चिन्तन करना है। आज का मानव अपने आप में दरिद्री बना हुआ है। कैसे दिमाग पर भी भावनायें उसके दिमाग में घर कर रही हैं जो किसी तरह कन्याओं को उपाकर दिमाग को मारकर पैसा कमाने के लिए नये नये विवाह करें—क्या भाग उनको मनुष्य कहेंगे। न जाने आप तो

सर्टिफिकेट देंगे या नहीं, लेकिन ज्ञानी जन तो देंगे । ज्ञानी जन कहेंगे यह जीवन का निर्णायक स्वरूप समझने वाला नहीं है ।

सत्य सिहर उठा

मैं अब आपके सामने उन तीन प्राणियों माता, पिता और पुत्र की बात रख रहा हू । पिता ने निर्णय लिया और पुत्र को कहा कि पुत्र वधू को दूर जगल मे ले जाना है और वहा जाकर इसकी हत्या करनी है। उन्होंने चरित्र की शका के कारण यह काम किया पता के लिये नहीं किया। पुत्र ने दबे मन से पिता की बात स्वीकार की और अपनी पत्नी के कमरे मे गया। ऊपर से कृत्रिम मुस्कराहट को लेता हुआ अपनी पत्नी से कहता है कि प्रिये बगीचे मे घूमने को गये बहुत दिन हो गए चलो आज बगीचे मे घूम आये। वह पवित्र हृदय वाली जिसके मन मे कपट नही है छल नही है और अपने पति देव को ही सर्वस्व समझने वाली है। कहती है प्राण नाथ जैसी आपकी आज्ञा। मैं सदैव आपकी आज्ञा के लिये हाजिर हू। पति देव ने कहा—चलो तैयार हो जावो। वह वस्त्र पहिन कर झट से साथ हो गई। घर से बाहर निकलकर तागा लिया और दोनो उसमे बैठ गये। पतिदेव कुछ कृत्रिम बातें करते हुए जा रहे थे और मन मे उथल-पुथल मची हुई थी लेकिन उनकी प्रिया के मन मे न तो किसी प्रकार की उथल-पुथल थी और न किसी प्रकार की घबराहट थी। वह गभीरता से बैठी हुई थी। चिन्तन कर रही थी मेरा सौभाग्य है जो मुझे ऐसे पतिदेव मिले हैं। बगीचे मे जाकर दोनो घूमने लगे लेकिन गोविन्द के मन मे तो उथल-पुथल मची हुई थी। वह अलग ढंग से चल रहा था। कभी कुछ चिन्तन करता है तो कभी कुछ सोचता है। यह अबोध बाला आज मेरे साथ किस प्रकार का बर्ताव कर रही है और मैं आज कैसा निष्ठुर बन रहा हू। मैं पत्थर का बन कर माता [illegible] की आज्ञा को [illegible] रके

इसके जीवन को समाप्त करने का तयार हो रहा है। वह अपने आप में सोचता है हाय नारिन क्या तू मानव है? या दानव है - वह अपने आपको मार रहा है, लेकिन उसके निमान का पर्दा नहीं हट रहा है। ऊपर से मुस्कराहट को धारण करता रहता है। वह अपनी प्रिया से कहता है कि प्रिय यहाँ पानी से भरा हुआ एक कुआ है, वहाँ चलें। वह अपने पैर लड़खड़ाता हुआ पत्नी को लेकर उस कुए की पाल पर पहुँचता है। पाल पर पहुँच कर वह अपनी पत्नी की ओर देखता है और मन में विचार करता है हाय आज तू हत्यारा बनकर अपनी पत्नी को कुए में धक्का देकर उसका प्राणघात करेगा। पत्नी कहती है यह कितना भयावह दृश्य है, कितना वियावान जंगल है किन्तु आप मेरे साथ हैं इसलिये मुझे किसी बात का भय नहीं है कोई एकाकी आ जायें तो हाट पस्त हो जाय लेकिन मुझे निश्चिंतता है क्योंकि मैं पतिदेव के चरणों में हूँ। भयानक से भयानक जंगल भी हो तो मेरा कल्याण है। इन बातों को सुनकर उसका दिल दहल गया और सोचता है कि जिस पत्नी के साथ मैं इतने दिन तक रहा कभी दुर्लक्षण नहीं देखा। कदाचित कुछ होता तो कुछ संकेत मिलते। कुछ समझ में नहीं आ रहा है। यह तो मेरे प्रति इतना विश्वास लेकर चल रही है, मुझे परमेश्वर के तुल्य समझ कर चल रही है फिर यह सारा प्रसंग कैसे बन रहा है, इस प्रकार के कुछ शब्द सहसा उसके मुँह से निकल पड़े तो वह कहने लगी प्राण नाथ यह विश्वास आज का नहीं है बहुत पहले का है जबकि मैं अपने घर पर पिता के पास रहती थी उस वक्त मुझे माता का संस्कार तो पूरा नहीं मिल पाया लेकिन पिता श्री मुझे सत्संग में ले जाते थे और कभी कभी सन्तों से प्रश्न किया करते थे। प्रश्नों के साथ साथ कभी यह प्रश्न भी रख देते थे कि महात्मन? यह बतायें पुरुष तो अनेक तरह की धर्म क्रियायें करके अपने जीवन

का उद्धार कर सकते हैं लेकिन यह अबला। जाति अपने जीवन का उद्धार किस प्रकार कर सकती है ?

अबला, नहीं सबला है।

साधारण भाषा में नारी को 'अबला' भी कहा जाता है। जहाँ तक विशुद्ध आत्मिक दृष्टि का प्रश्न है, यह शब्द उपयुक्त नहीं लगता। हाँ जब आत्मा अपनी शक्ति को भूल बैठती है ऐसी स्थिति में उसे निर्बल संज्ञा मिल जाती है। किन्तु यह संज्ञा उसकी वास्तविक संज्ञा नहीं है। *यही तथ्य अबला के विषय में जान* लेना उपयुक्त रहेगा। सत पुरुषों का कथन है कि—नारी जाति में भी वह शक्ति है जिसके द्वारा वह जीवन के सही रूप को पाकर अपना उद्धार कर सकती है। साध्वी बनकर तपश्चर्या करके अपने जीवन का उद्धार कर सकती है। पिता श्री यह कहने नारी जाति किस प्रकार अपने जीवन का रखे ? तब महात्मा जी ने कहा—नैतिकता की दृष्टि से हर बात को सोचे—विचार और गृहस्थ धर्म में रहते हुये भी पूर्ण पतिव्रत धर्म का पालन करना चाहिये और एक पतिदेव को ही अपने जीवन का सर्वस्व समझना चाहिये। जो स्त्री अपने धर्म का पालन करती हुई अपने जीवन को पतिनिष्ठ होकर रखती है वह आध्यात्मिक शक्ति को प्रवाहित करती है। वह धर्म पत्नी के रूप में रहे पाप पत्नी के रूप में नहीं हो और उस पत्नी का यह कर्तव्य होता है कि मेरे पतिदेव गलत रास्ते पर न चले जायें मेरे पति कोई बुरा काम न करें। ऐसा आध्यात्मिक जीवन का उत्तरदायित्व वह धर्मपत्नी लेकर चलती है। इसलिये शास्त्रों में उसे धर्मपत्नी कहा गया है धर्म सहायक कहा गया है। परिवार के सारे संस्कार एक अच्छी पत्नी पर आश्रित होते हैं इसलिये गृहस्थाश्रम में रहते हुए भी अपने जीवन की शान्ति को सम्पादित करना चाहिये, तभी वह जीवन के वास्तविक

स्वरूप को समझ सकती है। ये सब बातें मैंने सत्संग में सुनी जो आज कुछ मेरे जीवन में आ गई है। बचपन के अन्दर बच्चों में जो संस्कार बन जाते हैं वे दीर्घकाल तक रहते हैं। आज तक मेरे मन में भी वे संस्कार पड़े हुए हैं। इसलिए बार बार कहा जाता है कि बाल बच्चों को प्रारम्भ से ही धार्मिक शिक्षण देना चाहिए, जितना आध्यात्मिक जीवन का शिक्षण दिया जाए उतना ही उनका जीवन आगे जाकर सुन्दर बन सकता है। वह शिक्षण आज कितनी मात्रा में हो रहा है? मां बाप कितना अपने बच्चों को सम्भाल रहे हैं? आज कितना धार्मिक शिक्षण दिया जा रहा है। यह तो एक एक व्यक्ति से हिसाब लिया जाय तो पता लगे। इन्सान की निर्णायक शक्ति जिस रूप में और जिस रफ्तार से चल रही है वह बेढंगी है। मैं इस विषय पर ज्यादा नहीं कह रहा हूं सिर्फ यह कहना चाहता हूं कि धार्मिक संस्कारों से उस बहिन का जीवन कितना ऊपर आया। अब गोविन्द अपनी प्रिया से पूछता है जब तुम बचपन से ही ऐसे संस्कार को लेकर चल रही हो और पतिव्रत निष्ठा को लेकर चल रही हो तो मेरे सामने तुम सच-सच बातें कहोगी या कुछ छिपाकर रखोगी। पतिदेव आप क्या सोच रहे हैं मैंने जिन्दगी में कभी आपसे कोई रहस्य नहीं छिपाया। जब मैंने आपको अपना सर्वस्व ही अर्पण कर दिया तो फिर छिपाकर रखने की ऐसी कौनसी बात आ गई। आप जो कुछ पूछना चाहते हैं पूछिए। मैं खुले दिल से उत्तर देने को तैयार हूं। गोविन्द सोचता है कम से कम इसका [illegible] करके इस प्रश्न से निर्णय कर लूं कि वस्तुतः बात क्या है? उसने प्रश्न किया प्रिये आज प्रातःकाल अपनी हवेली में साधु आया था। पत्नी ने जवाब दिया हां प्राणनाथ आया था। तो तुमने क्या किया। पत्नी कहती है मैंने उनको भिक्षा बहराई। गोविन्द पुनः पूछता है और क्या-क्या [illegible] था? तो पत्नी ने कहा बासा क्या।

उसको मैंने सकेत किया वह भिक्षा लेने के बाद हवेली को देखने लगा तो मैंने सकेत म कहा तुम्हारा एक गया तो उसने इशारे मे कहा तुम्हारे दो गए तो फिर मैंने उत्तर दिया तुम्हारे तीन गए— यह बात हुई थी। गोविन्द ने कहा प्रिये यह तो तुमने सच सच कहा लेकिन यह क्या एक गया दो गया तीन गया इसको समझा दें— उसके दिल की खुलने लगी और उसने सोचा वस्तुत निणय करना चाहिए। मनुष्य के जीवन मे निर्णायक शक्ति नही आई तो वह मनुष्य वेकार है। इस भावना स गोविन्द कुए के पाल से हटकर एक पत्थर की चौकी पर आकर बठ गया और तीना बातो के रहस्य को समझने क लिए कहा। अब वहिन तीना बाता को बताना चाह रही हैं और गोविन्द भी सुनना चाहता है लेकिन आपकी घडी टाइम बता रही है। उस दष्टि से शहर का मामला है जौहरी लोगा का क्षत्र है, अत टाइम से काम किया जाय तो ठीक है। यह आज का प्र न नही है। टाइम आएगा तो फिर आपको बतायेंगे। इस जीवन के प्रश्न पर आपको भी विचार करना ह और मुझे भी विचार करना ह। जो जीवन को परिभाषा की ह उसमे आप चिन्तन करिये। वह निर्णायक शक्ति आप म आई ह या नही और अगर निर्णायक शक्ति आप मे आ गई तो आप शीतल चन्दन का लेप करके जीवन की तमाम शक्तियो का विकास करते हुए, शान्ति के माग का प्रचार करते हुए शान्ति के अग्रदूत बन सकगें।

लाल भवन
२६जुलाई ७२

●●

उसको मैंने सकेत किया वह भिक्षा लेने के बाद हवेली को देखने लगा तो मैंने सकेत म कहा तुम्हारा एक गया तो उसने इशारे म कहा तुम्हारे दो गए तो फिर मैंने उत्तर दिया तुम्हारे तीन गए—यह बात हुई थी। गोविन्द ने कहा प्रिये, यह तो तुमने सच सच कहा लेकिन यह क्या एक गया दो गया, तीन गया इसका समझा दें—उसके दिल को खुलने लगी और उसने सोचा वस्तुत निणय करना चाहिए। मनुष्य के जीवन म निर्णायक शक्ति नही आई ता वह मनुष्य बेकार है। इस भावना से गोविन्द कुए के पाल से हटकर एक पत्थर की चौकी पर आकर बठ गया और तीनो बाता के रहस्य को समझने क लिए कहा। अब बहिन तीनो बाता को बताना चाह रही है और गोविन्द भी सुनना चाहता है लेकिन आपकी घडी टाइम बता रही है। उस दृष्टि से शहर का मामला है, जौहरी लोगो का क्षेत्र है अत टाइम से काम किया जाय तो ठीक है। यह आज का प्र न नही है। टाइम आएगा ता फिर आपको बतायेंगे। इस जीवन के प्रश्न पर आपको भी विचार करना ह और मुझे भी विचार करना ह। जो जीवन को परिभाषा की ह उसम आप चिन्तन करिये। वह निर्णायक शक्ति आप म आई ह या नही और अगर निर्णायक शक्ति आप मे आ गई तो आप शीतल चन्दन का लेप करके जीवन की तमाम शक्तियो का विकास करते हुए, शान्ति के माग का प्रचार करते हुए शान्ति के अग्रदूत बन सकगें।

लाल भवन
२६जुलाई ७२

●●

मणो साहसिओ भीमो, दुट्ठस्सो परिधावई ।

—उत्तराध्ययन २३।५८

यह साहसिक भीम मन दुष्ट अश्व के समान सदा दौड़ता रहता है ।

---

८ | मन का मनका

चेतन ज्ञान कल्याण करन को आन मिल्यो अवसर रे ।
शास्त्र प्रमाण पिछाण प्रभू गुण मन चंचल थिर कर रे ।।
ध्यांस जिनंद सुमर रे ।।।
सास उसास विलास भजन को दृढ़ विश्वास पकर रे ।
अजपाभ्यास प्रकाश हिये बिच सो सुमरन जिनवर रे ।।
ध्यास जिनंद सुमर रे ।।।

यह प्रभु श्रेयास देव की प्राथना है । प्राथना की इन कडियो म
न को सम्बोधन किया है चेतना एक आत्मिक शक्ति है इस
न से मनुष्य का समग्र जीवन का और समग्र संसार का ज्ञान
है । चेतना शक्ति व मन से ही हित और अहित को पहिचाना
कता है । चेतना शक्ति व दृढ संकल्प से ही इन्सान अपने काय
न होता है । ऐसी चेतना शक्ति को संबोधित करते कवि ने
दिया है कि—

चतन आन कस्याण करन को आन मिल्यो अवसर रे।
शास्त्र प्रमाण पिछाण प्रभू गुण मन चंचल थिर कर रे।

हे चेतन यह कल्याण करने का सुन्दर अवसर मिला है। इस म जो मनुष्य जन्म मिला है तो यथा सम्भव शान्ति स शास्त्रो का श्रवण कर। शास्त्र श्रवण का प्रसग है ऐसे अवसर पर हे चेतन, तू प्रमाद म मत रहे। कदाचित कोई यह कल्पना करें कि मैं इस समय प्रभु के स्वरूप को कैसे पहिचानू ? क्योकि परमात्मा मेरी इन चमडी की आंखो म नही दीखता है। मैं अपनी इन्द्रियो स प्रभु का सही ज्ञान नही कर सकता हू। तो यह कल्पना असगत है क्योकि यह इन्द्रिय जन्य ज्ञान सीमित है। उनका दायरा छोटा है। इन्द्रिया अमुक सीमा तक ही वस्तु का ज्ञान कर सकती है। आगे उनकी गति नहीं है। मन की स्थिति का भी चिन्तन कर तो मन की गति भी ऐसे तो बहुत तीव्र है लेकिन तीव्र होने पर भी वह भी सीमित ही है। अत प्रभु के वास्तविक स्वरूप को समझने में वह मन भी समर्थ नहा हो सकता है। मन के माध्यम स कल्पना कर सकते हैं। तो मैं प्रभु को कैस स्मरण करू, और कैसे मैं आत्मा का कल्याण कर सकू ? इसके लिये बुद्धि के सामने एक प्रश्न वाचक चिन्ह बन जाता है। इस प्रश्न का उत्तर कवि ने साथ ही मे दिया है कि त अपने इन्द्रिय और मन से प्रभु को पहिचानने म समर्थ नही है। अत शास्त्र के प्रमाण की बात कही गई कि—

शास्त्र प्रमाण पिछाण प्रभ गुण मन चचल थिर कर रे।
ओ श्रेयांस जिनन्द सुमर रे॥

शास्त्र म प्रभु के स्वरूप का बडा ही सुन्दरतम वर्णन है। शास्त्र के प्रमाणो से तुम प्रभु के स्वरूप की पहिचान कर इस चचल मन को स्थिर कर लो। मन के स्थिर हुए बिना उस आत्मिक स्वरूप का दर्शन नहीं होगा। मन जितना चचल है उतनी ही आत्मा की शक्ति चचल होती है। मन के सहारे आत्मा की शक्ति प्रवाहित होती है।

चेतन जान कल्याण करन को आन मिल्यो अवसर रे।
शास्त्र प्रमाण पिछाण प्रभू गुण मन चचल थिर कर रे।

हे चेजन, यह कल्याण करने का सु दर अवसर मिला है। इस मे जो मनु य ज म मिला है तो यथा सम्भव शान्ति से शास्त्रा का श्रवण कर। नास्त्र श्रवण का प्रसग है ऐसे अवसर पर हे चेतन, तु प्रमाद म मत रहे। कदाचित कोई यह कल्पना कर कि मैं इस समय प्रभु के स्वरूप को कैस पहिचानू ? क्याकि परमात्मा मेरी इन चमडी की आखा मे नही दीखता है। मैं अपनी इन्द्रियो से प्रभु का सही नान नही कर सकता हू। तो यह कल्पना असगत है क्योकि यह इन्द्रिय ज य नान सीमित है। उनका दायरा छोटा है। इन्द्रिया अमुक सीमा तक ही वस्तु का नान कर सकती है। आगे उनकी गति नही है। मन की स्थिति का भी चिन्तन कर तो मन की गति भी ऐसे तो बहुत तीव्र है लेकिन तीव्र हाने पर भी वह भी सीमित ही है। अत प्रभु के वास्तविक स्वरुप को समझने में वह मन भी समथ नही हो सकता है। मन के माध्यम से कल्पना कर सकते हैं। तो मैं प्रभु को कस स्मरण करू, और कसे मैं आत्मा का कल्याण कर सकू ? इसके लिये बुद्धि के सामने एक प्रश्न वाचक चि ह बन जाता है। इस प्रश्न का उत्तर कवि ने साथ ही दे दिया है कि त अपने इन्द्रिय और मन से प्रभु को पहिचानने म समथ नही है। अत शास्त्र के प्रमाण की बात कही गई कि—

शास्त्र प्रमाण पिछाण प्रभ गुण मन चचल थिर कर रे।
श्री श्रेयांस जिनन्द सुमर रे॥

शास्त्र मे प्रभु के स्वरूप का बड़ा ही सु दरतम वणन है। नास्त्र के प्रमाणो से तुम प्रभु के स्वरुप को पहिचान कर इस चचल मन को स्थिर कर लो। मन के स्थिर हुए विना उस आत्मिक स्वरूप का दनान नही होगा। मन जितना चचल है उतनी ही आत्मा की शक्ति चचल होती है। मन के सहारे आत्मा की शक्ति प्रवाहित होती है।

ससार के पदार्थों का परीक्षण करते जायेंगे तो मैं समझाता हूँ कि जितने पदार्थ आपकी दृष्टि में आ रहे हैं,वे सारे के सारे उस कपूर की टिकिया के मानिन्द ही मालूम होंगे। क्या ऐसा कोई भौतिक तत्व है जो कि बिखरने वाला न हो। शास्त्रीय दृष्टिकोण से चाहे ऐसा भी चिन्तन करें यह खम्भ आप देख रहे हैं, यह मजबूत है आपको दिखाई दे रहा है। शास्त्रीय दृष्टि से खम्भ में परमाणु उड रहे हैं प्रतिक्षण इसमें परमाणु प्रवेश कर रहे हैं और निकल रहे हैं। हमारी चमड़े की आँखें इसको समझ नहीं पा रही है। शास्त्रकारों का कथन है कि जो सपदा बनी है यह सम्पदा ज्यादा से ज्यादा अगर रह तो असंख्य काल तक रह सकती है, उसके बाद तो सारी की सारी बिखर जाती है। अब आप सोचिये कि मन को केन्द्रित करने के लिये किस पर टिकाना है। कभी कभी हठ योग की प्रक्रिया से साधक को बताया जाता है कि मन को केन्द्रित करने के लिये त्राटिक कर। त्राटिक का मतलब यह है कि एक चिन्ह कहीं दिवाल पर या किसी स्थान पर लगा दिया जाता है वह व्यक्ति उस पर दृष्टि लगाकर मन को केन्द्रित करने की कोशिश करता है। मनुष्य मन से हैरान है। मन की गति से मनुष्य घबराया हुआ है और कहीं सहारा मिलता है तो उस तरफ भी व्यक्ति प्रयत्न करता है। धार्मिक क्षेत्र में विचरण करने वाले महात्माओं ने भी भगवान् के चरणों में आन्तरिक निवेदन कर लिया और उन्होंने भी कह दिया कि भगवन्? इस मन को मैं कैसे स्थिर करूँ।

> कथं जिन मनड़ किम् हिलियाय।
> जिम जिम जतन करीने राखू तिम तिम अलगु थाय हो ॥ कथं जिन ॥
> रजनि दिवासे वसति उजाड़ गगन पायाले जाय।
> कौर खादय में मुखड़ कार्य एम ओलखिए ज्यास ॥ कथं जिन ॥

कवि आनन्दघनजी अपनी साधना करते करते हैरान हो गये

और भगवान् कुन्थुनाथ से कहने लगे भगवन् ! बताओ यह मेरा मन क्या वश मे नहीं आता है ? मैं इसका कितना ध्यान रखता हूं कितना इसका लाड प्यार करता हू यह मन जिस वस्तु की भी चाहना करता है वही वस्तु म इसको देता हू मन अमुक रूप देखता है तो दिखाता हू और अमुक स्थान पर ले जाना चाहता है तो ले जाता हू जैसे जैसे यह कहता है बस वैसे म इसका लाड प्यार करता हू। लेकिन यह सब प्रयत्न करने पर भी यह मन मेरी कुछ भी बात नहीं मानता और दूर दूर भागता रहता है। रात और दिन इस हैरानी से हैरान हू। दिन को भी यह ज्यादा देर तक एक जगह नहीं टिकता जागृत अवस्था म भी दिन भर यह मन स्थिर नहीं रह कर इधर-उधर वायु भागने लगता है और सोता हू तो भी यह हैरान करता है, शान्ति से म विश्राम नहीं कर सकता यह मन चचल बना रहता है और ताने बाने बुनता रहता है कितने ही जाल रचाता है। हे प्रभु ! म इस चचल मन को किस प्रकार वश म करूँ ? जब आध्यात्मिक रस म रमने वाले महात्मा और कवि भी हैरान हो गये तो दूसरा का तो कहना ही क्या ?

आज मन को वश म करने के तरीके अजीब से हैं। त्राटक म दृष्टि उसकी ओर लगायी जाती है दृष्टि को उस पर गड़ा कर बैठ जाता है, पलक नहीं गिरने देता है। लेकिन मन तो फिर भी विचलित हो जाता है। परिणाम यह होता है कि दृष्टि की रोशनी मद पड जाती है लेकिन मन को स्थिर नहीं कर पाता है। हठयोग म ऐसे अनेक खतरे आ सकते हैं जिससे मनुष्य की जिन्दगी व्यर्थ सी हो जाती है। आपने सुना होगा कि अमुक मनुष्य चतुर था और योग साधना की बडी बडी बातें करता था। एक रोज देखा गया कि वही व्यक्ति पागल होकर घूम रहा है। और अड बड बोल रहा है। यह क्या हुआ ? इसका कारण यही है कि उसे योग साधना कराने वाला योग्य व्यक्ति नहीं मिला। योग्य गुरु के अभाव म साधना भी

विकट हो जाती है। इसी तरह से प्राणायाम है। प्राणायाम भी एक योगिक साधना है। प्रायः नासिका से श्वास को अन्दर ले जाना और नियमानुसार उसको वापिस बाहर लाकर छोड़ देना। रेचक और पूरक दो क्रियायें होती हैं। कुम्भक क्रिया की दो अवस्थायें होती हैं व इस प्रकार हैं – एक बाह्य कुम्भक, और दूसरी आभ्यन्तर कुम्भक। बाहरी कुम्भक प्रक्रिया वह है जिसमें श्वास को बाहर छोड़कर रोकना होता है और आभ्यन्तर कुम्भक वह है जिसमें श्वास को अन्दर रखकर रोकना होता है बाहरी प्रक्रिया तो इतनी खतरनाक नहीं होती है किन्तु अन्दर रखने की जो प्रक्रिया होती है उसकी साधना अच्छी तरह न बनपाये तो उसकी साधना तो वहीं रह जाती है किन्तु वातव्याहृत उसकी नाड़ियों में वायु का प्रसर इतना अधिक हो जाता है कि उसकी नाड़ियाँ फट सकती हैं मस्तिष्क की स्थिति डावाडोल हो जाती है। वह कभी कभी खतरे में पड़ जाता है। मन की साधना के अनेक उपाय बताये जा सकते हैं। मन एक साथ काबू में नहीं होता है। हो तो कैसे हो? उस पर चिन्तन किया जाय तो अनेक उपाय सामने आ सकते हैं। लेकिन यदि चाबी पकड़ ली जाय तो जल्दी हाथ में लाया जा सकता है।

मन का बटन दबाइए

आपको हवा के लिए पंखा चलाना है। उस पंखे की हवा लेते लेते अगर व्यक्ति घबरा जाय और वह स्वयम् पंखे को बन्द करने में असक्त हो और किसी दूसरे व्यक्ति से कहता है, या नौकर से बोलता है भाई इस पंखे की हवा मुझे नहीं चाहिए। यह पंखा गति में दौड़ रहा है इसको बन्द कर दो। जिसको कहा वह व्यक्ति कोई ग्रामीण है उसने कभी कहीं देहातियों में पंखा लगाते नहीं देखा और पंखा चलाते भी नहीं देखा अब उसको बन्द कैसे करना यह वह नहीं समझता है। ऐसे व्यक्ति को कहा जाय,

वह व्यक्ति उस पखे का बन्द करने के लिए अपना हाथ लम्बा करके उस पखे को पकडता है और यह सोचता है कि पखा पकड कर बन्द कर दू । क्या वह हाथ से चलते हुए पखे को पकड कर रोक सकता है ? नही, रोक सकता । वह यह सोचता है कि पखा हाथ से बन्द नही हो रहा है। रस्सी डाल कर पखे को खम्बे से बाध दू और इसको बन्द कर दू । यह सोच कर रस्सी डाल कर लेना मु ह रस्सी न लेकर पखे को खम्बे से बाधना चाहता है। पखे को बाध सकता है ? रस्सी मजबूत है तो पखा टूट जाएगा और रस्सी कमजोर है तो रस्सी टूट जायगी। वह इस तरह से भी पखा नही रोक सकता है। अगर जानकार व्यक्ति उस स्थल पर पहुच जाय और ग्रामीण व्यक्ति को हैरान होते देखे तो कहेगा भाई, क्यो हैरान हो रहा है, वह ग्रामीण व्यक्ति कहेगा कि भाई साहब सेठ साहब की आज्ञा है पखा बन्द कर दो, हवा उनको नही चाहिए। लेकिन पखा बन्द नही हो रहा है। हाथ लम्बा करके पखे को रोक कर बन्द करना चाहा लेकिन वह नही हुआ और रस्सी डाल कर पखे को बन्द करना चाहा लेकिन वह भी नही हुआ। उस आगन्तुक ने कहा रस्सी और हाथ से पखा बन्द थोडे ही होता है। देखो मैं जरा सी देर म बन्द कर देता हू। जरासी अगुली को आगे ले जाकर वह बटन को दबा देता है और पखा रुक जाता है, पखा बन्द हो जाता है। जिस तरह पखे को बन्द करने के लिए बटन है उसी प्रकार मन के पखे को जो मनुष्य को जीवन म चक्कर लगवा रहा है, इसको बन्द करने के लिये अलग अलग तरीके से उपाय कर रहे हैं वे उपाय प्राय ग्रामीण मनुष्य की तरह कर रहे हैं। जिस प्रकार ग्रामीण मनुष्य हाथ से पखे को बन्द करना चाहता है। आज का मनुष्य भी इसी प्रकार मन को बाध कर बन्द करना चाहे तो मन काबू म आने वाला नही है। ज्यादा जोर दिया तो पखे की पखुडिया टूटेंगी। इसका तात्पर्य यह

है कि मस्तिष्क की नाड़ियां टूटेंगी या इंद्रियां नष्ट हो जायेंगी या कोई आघात लग जायेगा। सफलता नहीं मिलेगी।

आज के मानव की यही दशा है। वह इस मन रूपी पंखे को ग्रामीण मनुष्य की तरह रोकने की कोशिश कर रहा है। वह इस मन रूपी पंखे पर कन्ट्रोल करना चाहता है लेकिन जीवन कला रूपी इसकी चाबी को नहीं पकड़ पा रहा है। वह अगर इसके बटन को दबाने की कला समझ ले तो मन रूपी पंखा स्थिर हो जाता। फिर उसके सामने कितने भी चपल पदार्थ आये, कितने भी दृश्य उसके सामने आयें उसके मन को चपल बनाने वाले ही स्वर्गीय दृश्य उपस्थित हो जाय फिर भी मन उसकी आज्ञा के बिना चपल नहीं होगा। इस कला को प्राप्त करना है और इस चपल मन को स्थिर करना है, तो इसके लिये दो प्रकार के मार्ग हैं। एक प्रारम्भिक मार्ग और दूसरा स्थायी मार्ग। प्रारम्भिक दृष्टि से जीवन के २४ घंटे हैं। उसमें से आधे घंटे निकालने चाहिए उसमें मन की गति विधि को देखने की कोशिश करें। २४ घंटे का सारा का सारा समय आज किस काम में जा रहा है? मन की गतिविधि को देखने में या मन को स्थिर करने के प्रयास में या लापरवाह बनकर जीवन को चपल बनाने में जा रहा है? अगर आप अपने जीवन की दिनचर्या को देखेंगे तो, विदित होगा कि जीवन के चौबीसों घंटे पदार्थों को बटोरने के लिये व्यतीत हो रहे हैं। मन को वश करने के लिये कुछ भी समय नहीं दिया जा रहा है। आत्मा के साथ न्याय करना चाहते हैं तो १२ घंटे आत्मा को दीजिये और १२ घंटे शरीर को दीजिये। यदि आप आत्मा के साथ न्याय की स्थिति में नहीं है। और शरीर के साथ ज्यादा न्याय करना चाहते हैं तो, चौथाई समय, ६ घंटे इस इस विषय में दीजिये। कदाचित् आपके मन की कमजोरियां अधिक हों तो छः घंटे नहीं तो तीन घंटे दीजिये, तीन भी नहीं दे सकें तो दो दीजिये और दो भी नहीं दे सकें तो एक तो

कम स कम दीजिय। एक भी नहीं ' एक घटा भर भी आपका इस ओर ध्यान दने का अवकाश नहीं। चौबीस घटे हाय-हाय करते करते चल जा रहे हैं चौबीस घटे मशीन की तरह दौड़ रहे हैं। और दौड़ कर भी प्राप्त क्या करने वाले हैं? क्या लेने वाले हैं? चौबीस घटे इन चन्द चांदी के टुकड़ों को प्राप्त करने म बिता देते हैं सौ वर्ष या ८० वर्ष की जिन्दगी सारी की सारी इसम लगा दी और कदाचित् कुछ सम्पत्ति प्राप्त भी कर ली कितनी? अरबो खरबो की प्राप्ति कर ली उसके बाद भी आपका मन स्थिर हुआ क्या? अब तो अरब प्राप्त हो गये अब तो सतुष्ट हैं क्या? नहीं। सतुष्ट नहीं।

सच्चे व्यापारी बनिए

मन दौड़ रहा है। हमने अपने जीवन म इतना पसा इकट्ठा किया है इस मन को पसे की तरफ लगाया है कि पसा मनुष्य के पास अरबो खरबो हो गया है। परन्तु क्या यह आपका सारा पैसा स्थायी रूप स रहने वाला है। क्या यह आपके पास म टिक कर रहने वाला है। अगर एसा नहीं है तो क्या अपनी शक्ति का अपव्यय नही कर रहे हैं? आप व्यापारी हैं। यहां पर बठने वाले भी अधिकतर व्यापरी हैं। व्यापार कसे होता है? उसम आय व्यय का ध्यान रखा जाता है और वह व्यापार आप करते हैं जिसमे व्यापारी को अधिक आय होती है और स्थायी वस्तु प्राप्त होती है। इस बात का ख्याल रक्खे और व्यय करे तो वह सच्चा व्यापारी है और जिसमे आय व्यय का हिसाब न रखा जाये अधाधुन्ध चलता रहे, उसमे व्यय अधिक हो और आमदनी कुछ न हो तो वह व्यापारी है? आप सब चुप क्यो हो। आप सावधान हैं। लेकिन सावधान इस

हैं जो नहीं है उनक

व्यापार में शरीर लगा रहे, मन, वचन, काया उसमें लगी रहे, हैं २४ घंटे उसी में लगी रहें, आगे के लिये आप नहीं देख रहे हैं और जब कभी मृत्यु का दौर दौरा आया, उस समय विवश होकर, यह सब छोड़कर आप चले जायेंगे। तब आपके साथ कौन जायेगा, क्या स्थिति बनेगी इसका भी कभी आपने चिन्तन किया है? आप अपने जीवन की समग्र शक्ति का अपव्यय कर रहे हैं उसके मुनाफे की तरफ आपका ध्यान नहीं है। आध्यात्मिक जीवन की तरफ आपका ध्यान नहीं है। आप चतुर व्यापारी हैं पर इस व्यापार में आय व्यय का हिसाब नहीं है तो इस स्थिति में आपको कुछ ऊपर उठाना है उसके लिए कम से कम एक घंटा मन की साधना में लगाना है। इससे आपका मन स्वाभाविक बन जायेगा और इन सारी प्रवृत्तियों से हटने लगेगा। एक इंसान यदि अपने मन को स्थिर करके चलता है तो वह अपने इच्छित कार्य कर सकता है। यह इंसान के हित में है। यह एक अपूर्व लब्धि है। इसको इंसान खो रहा है मैं इसके लिए टेम्प्ररी उपाय आपको बता रहा हूं। यह टेम्प्ररी उपाय यह है कि घंटे भर की साधना में आप बैठें। यह चिन्तन करें कि यह जो मैंने २४ घंटे बिताए हैं इन चौबीस घंटों के अन्दर मैंने क्या-क्या किया है। इस बीच में कितने कार्य तो नैतिकता के हुए हैं? और कितने अनैतिकता के हुए हैं? यह देख लीजिए कि मैंने कितनी गल्तियां की हैं? और ये गल्तियां हुई हैं? तो लापरवाही से हुई हैं या अज्ञान से हुई हैं। लापरवाही से हुई हैं तो उनका प्रायश्चित्त रख लीजिए जिससे मन पर उसका असर हो और मन यह अनुभव करे कि ऐसी गल्ती करूंगा तो मुझे यह दण्ड मिलेगा और इससे आपकी यह गल्ती छूट जायेगी और भविष्य में ऐसा ध्यान रख कर ही कार्य किया जायेगा। अन्दर का मन भी जागेगा। इस प्रकार की भावना रख कर कुछ क्षण बढ़ प्रसन्न पूर्व आसन से २४ घंटों का चिन्तन करें और फिर बाहर

सा भावी जीवन के २४ घण्टो का नक्शा खीचें, यह नक्शा सामने रखें कि भविष्य के इन २४ घण्टा मे वह इस प्रकार की गलती नहीं करेगा। तो यह मन की एक प्रारम्भिक साधना है। इसके पश्चात् कुछ मिनिट के लिये हाथ की अनुपूर्वी का अभ्यास किया जाए जब कुछ समय तक यही अनुपूर्वी चलेगी तो मन को आप एकाग्र कर सकेंगे। इससे आगे के अवशेष समय म आप स्वाध्याय करिये। स्वाध्याय कैसे हो? शास्त्रो को प्रमाण स्वरूप समझिये और उस पर मन को स्थिर करने का प्रयत्न कीजिये। परन्तु आज हो क्या रहा है? इसके लिए आपके पास समय नहीं है किन्तु यदि कोई लडाई झगडे की बात अखबार म आ गई या अड बड बात आ गई तो आप उस अखबार को पढेंगे और दूसरी बातो मे समय को गवा देंगे लेकिन शास्त्रा के स्वाध्याय के लिए उनको आधा घटा भी नहीं मिलता है और कदाचित मैं यहा पर इस आधे घण्टे के लिए मागनी कर दू। यहा बैठने वाले मेरे भाई एक घटा भर का स्वाध्याय का नियम ले और एक घटा नियमित स्वाध्याय करें ऐसी मागनी मैं कर दू? क्या मागनी नहीं करू। बस कहते जाइये। स्वाध्याय की फुरसत नहीं है। उपन्यास पढ लेंगे परन्तु शास्त्रो का स्वाध्याय नहीं होगा। इस प्रकार मन से हैरान होकर इस मन को कैसे पकड पायेंगे। जब मन मे कोई चीज बैठ जाती है तो मन उसके लिए हठीला हो जाता है। इसी प्रकार शास्त्रों के स्वाध्याय की बात, इसके व्यापार की बात एक घटे भर के लिये आधे घटे के लिए या कम से कम १५ मिनिट के लिये ही कर लीजिये। अगर इतना स्वाध्याय नियमित रूप से चलता है तो मन को एक जगह पर टिकाने का एक साधन मिल जायेगा। अब स्वाध्याय किसका करना है इसके करने का तरीका क्या है? शास्त्रो का स्वाध्याय कैसे हो? आदि बातो को समझाने के पूर्व म आपके मन को एकाग्र करने के लिये प्रारम्भिक भूमिका बता रहा हूँ। आप पुस्तक पढने के लिए पहले

क्या सोचते हैं ? वर्ण माला ? वर्णमाला को नही समझें और दसवी कक्षा का पाठ आपको पढने के लिये दे द, एम० ए० का पाठ दे दें जब ए० बी० सी० डी० का ज्ञान नही ह तो क्या आप उसका समझ लेंगे ? इसी दृष्टिकोण से स्वाध्याय का भी तरीका ह। यह तरीका है कि चाहे जसी पुस्तक हो, पर हो धम शास्त्र का, चाहे वह शास्त्रो का अनुभव हो उस धम पुस्तक के स्वाध्याय के लिये आप उसका एक पेज ले लीजिये और उस पेज का भी एक पराग्राफ लीजिये। प्रारम्भिक रूप से उस पराग्राफ का आप पढिये और उस पराग्राफ को पढने के बाद अपने मुह स अपने काना का ही वह सुना दें। दूसरा सुनने वाला हो तो ठीक है वरना अपन कान तो सुनने वाल हैं ही। कानो को सुनाकर आगे का बढें। इस प्रण के साथ आप इसको पढिये कि मुझे इसको पुन सुनाना है तो आपका मन एकाग्र हो जायेगा मन उसम दत्तचित्त होकर एकाग्रता से उसका पढ़ेगा। फिर दूसरे पराग्राफ को लीजिये। उसके बाद दूसरे पृष्ठ को लीजिये और धीरे धीरे दो पष्ठा तक बढिये। इसमे सबसे पहिला लाभ होगा कि जितने समय तक पढ़ेंगे आपका मन एकाग्र हो जायेगा। दूसरा लाभ यह होगा कि आपकी स्मरण शक्ति तीव्र हो जायेगी, कई व्यक्तियो को यह शिकायत होती है कि थोडी सी बात देखते ही वे भूल जाते है। हमारी स्मृति नही है क्या करें ? मैं पूछता हू आज व्याख्यान म क्या सुना। कहते हैं सुना तो था, याद नही है। उनकी स्मृति कहा गायब हो गई। मन डोलायमान हो रहा था। एकाग्रता मे स्मृति तीव्र हो जाती है और स्मृति स विषय का ज्ञान कर पायेंगे। तीसरा लाभ यह हागा कि आपको वक्तृत्व शक्ति आयगी। आपको बोलने की कला आयेगी। चौथा लाभ यह होगा कि पुस्तक म क्या रहस्य है ? उसका क्या विषय है उस विषय की बारीकी को आप पढ़ पायेंगे और वह आपके जीवन म हित साधक है या नही ? इसका मनन कर पायेंगे। इस तरीके स लाभ की स्थिति चली तो आपकी

सामायिक का जो समय है वह सहज ही निकल जायेगा। सामायिक करते थे परन्तु एक क्षण भर तक मन नहीं लगता है। यह प्रश्न हमारे सामने आता है। परन्तु इसमें इस तरह से मन को एकाग्र करके, इस तरह का एक प्रयोग करके मन को साधने की दृष्टि से चलें तो मन को एकाग्र करने का यह एक प्रारम्भिक साधन हो सकता है। मन को साध लिया तो शरीर की स्थिति ठीक बन जायेगी। उसके बाद स्थायी रूप से मन को केन्द्रित करना है अभी मानव। बिजली के बटन की बात कही थी। जो बिजली के बटन का ध्यान रखता है उसको यह भी मालूम रहता है कि कहां से शक्ति आ रही है और कहां पर शक्ति बन्द है। वह उससे सम्बन्धित सब चीजों का ज्ञान रखता है। वैसे ही शरीर के अन्दर रहने वाले जो तत्व हैं, यह शरीर ही जीवन नहीं है मैं यहां पर मूल स्थिति को समझा रहा हूं। इसके साथ-साथ आप मन को और उसके साथ-साथ शरीर को समझेंगे तो शरीर से सम्बन्धित इन्द्रियों का ज्ञान भी कर सकेंगे। इन्द्रिय और मन से शरीर का ज्ञान होगा, उससे आत्मा का ज्ञान करेंगे और आत्मा के ज्ञान से निर्णायक शक्ति को पहचान पायेंगे। इसी दृष्टि से मैं जीवन की परिभाषा की व्याख्या करना चाहता हूं—वह है सम्यक् निर्णायकम् समता मय च यत् तत् जीवनम्। क्या प्रश्न चल रहा है? जीवन क्या है? सम्यक् निर्णायकम्—निर्णायक शक्ति जिसमें होती है उसको पहिचान सकेंगे। कल मैंने इसका थोड़ा स्पष्ट रखा था। इन्सान निर्णायक शक्ति का विवेचन नहीं कर पा रहा है। निर्णायक शक्ति के रूप में स्थायी तत्व आत्मा को माना जाता है। क्योंकि आत्मा ज्ञानवान है निर्णायक है यदि आत्मा को ज्ञान शून्य माना जाय तो उसका अस्तित्व ही मिट जायेगा, जिसमें ज्ञान नहीं है वह आत्मा नहीं है भले ही उसको आत्मा की संज्ञा दे दी गई हो। ज्ञान के बिना

बटेगी और श्मशान म लेजाकर उसको जलाना होगा। यदि मन को केन्द्रित करें और चाबी पकडना चाहें जीवन की, तो निर्णायक स्थिति की, शक्ति को निखालस रूप से समझने का प्रयास करें और यह समझने का प्रयास थोडे रूप में होता है तो भी हो जाता है और एक दिन मन की केन्द्रित अवस्था आ जाती है। यह स्थिति नहीं आती है तो मन डावाडोल हो जाता है।

सच्चा साधक

निणय के अभाव म व्यक्ति कभी कभी समस्या म उलझ जाता है। इसके विषय म कल आपके सामन मैं एक रूपक रख रहा था। आपको ध्यान होगा। एक तरुण की बात आरही थी। गोविन्द नाम का तरुण भयावह स्थिति के बीच मे बठा हुआ है। किसके साथ? अपनी धम पत्नी के साथ धम सहायिका के साथ। वह पत्नी धम के अन्दर मददगार थी वह पति को विषयो मे डुबोने वाली पत्नी नही थी। उस गाविन्द के मन मे पत्नी की बात सुन सुन कर उल्लास पदा हा रहा है और एक तरफ मन म ग्लानि का अनुभव भी हो रहा है। उसने जब पूछा कि तुमने उस साधु के सामने क्या सकेत दिया तुम्हारा एक गया आदि। तो उसकी पत्नी ने कहा नाथ, उस व्यक्ति ने अपने शरीर के अन्दर भस्मी रमा रखी थी चम उसके पास था, कमण्डलू था और वह साधु अवस्था की दृष्टि से चल रहा था। मैंने जिस साधु जीवन के स्वरूप को समझा वह उसम थोडा कमजोर था क्योकि ससार के नाशवान पदार्थों से ऊपर उठता है, उसकी भावना आध्यात्मिक जीवन की ओर होती है उसके सामने कसा भी प्रदशन क्या न हो लेकिन वह अपने मन का उस तरफ चचल नही करता है। जिस प्रकार ऊपर का वेश है वसा ही अन्दर का जीवन रख कर चलता है। दोनों ही स्थितिया एक सी हाती हैं। दोनो पहलू उसके सुरक्षित रहते हैं तो उसका साधु जीवन सुरक्षित

ठीक तरह से चलता है। गोविन्द ने कहा फिर उसने क्या कहा? फिर लेकर चला गया तो उसने अन्दर की चीजें देखी नहीं, बाहरी दृष्टि से हवेली देखने लग गया तो उसको क्या सार्टीफिकेट दे दिया कि एक गया। उसने कहा नाथ! बाहरी हवेली की भी रौनक है और साधु बन जाने के बाद स्वाभाविक दृष्टि पड़ गयी तो ठीक है लेकिन पूर पूर कर अनिमेष दृष्टि से खड़ा रह कर देखना यह उसके मन की चंचलता प्रकट करता है और आन्तरिक जीवन का इससे साधुपन चला जाता है। मैंने कहा अन्तर और बाहर का साधुपन। बाहर का साधुपन अभी वेष में लगता है वैसा है पर एक अन्दर का गया। मैंने तो उसको सावधानी दिलायी। मेरी कोई बुरी भावना नहीं थी। गोविन्द सुनकर चकित हो गया। आश्चर्य करने लगा। यह अलौकिक बात प्रथम बार सुन रहा हूं। मैं क्या कहूं। मेरी धर्म पत्नी बहू या नारी की दृष्टि से उस उच्च स्थान पर बैठाऊँ। यह अत्यन्त जिज्ञासा रख कर आगे का प्रश्न करता है।" उसका कह दिया तुम्हारा एक गया वह तो समझ में आ गया। उसने संकेत किया, तुम्हारे दोनों गये। तू क्या समझी? प्राणनाथ? वह थोड़ा चंचल जरूर था। पर उसकी बुद्धि ने मेरे अभिप्राय को समझ लिया। उसने संकेत दिया। मनुष्य जीवन मिला है उसके साथ-साथ पूर्व जन्म की पुण्याई से सारे साधन उपलब्ध हैं। करोड़ पति का घर है खाने पीने पहिनने की वस्तुओं की कमी नहीं है यह सब होने के बावजूद भी यदि तू अपने सासुजी के अभिप्राय के अनुसार कंजूस बनी रही और दान पुण्य नहीं किया तो जीवन खोखला रह जावेगा। आन्तरिक और बाह्य दोनों जीवन चले जावेंगे। न तो ऊपर से स्वच्छ वृत्ति की स्थिति और न अन्दर की स्थिति से वैराग्य भावना। पहला अर्थ तो यह लिया। दूसरा अर्थ यह समझा कि मुझे उस साधु ने यह संकेत दिया कि जीवन में तीन

गुण होते हैं। सत्वोगुण, रजोगुण और तमोगुण।' सत्त और रजोगुण उसमे से चला गया। जो गृहस्थ अवस्था ,म रहत हुए भी इतना ख्याल रहता है कि साधु ऊट पटाग वाता म न लगे और वराग्य भावना लेकर चले और अन्तर और वाह्य म ठीक रहे। साधु की भी मगलमय कामना नही करता वह रजोगुण और तमोगुण म रहता है। उसने सकेत किया रजोगुण और तमोगुण दोना चले गये इसलिये दो चले गये। मैंने उत्तर दिया कि तुम्हारे तीना जाय। गोविन्द कहने लगा कि इसका मतलब क्या है कि तुम्हारे तीनो जाय। सतोगुण रजोगुण और तमोगुण य तीना मनुष्य मे रहते हैं। रजोगुण रहता ह, राजसी प्रवृत्ति रहती है और राजनतिक दृष्टि से भाग लेता ह और मन को उस आर दौडाता ह और रजोगुण म प्रवृत्त रहता ह तो दु‍र्यसन उसमे लगे रहत हैं। सतोगुण रहता है तो धार्मिक जीवन बिताता है और समता के साथ रहता ह। इसान को तीनो गुणो स भी परे होना चाहिये। जसा कि गीता म कहा ह

त्रिगुणातीतो भवार्जुन ?

तीना गुणा को नष्ट करके सनातन भाव म चले जाओ।

असत्य को झुकना पडा

तीनो साकेतिक शब्दो का अथ जब गोविन्द ने सुना तो उसका दिल दहल गया। वह सोचन लगा कि बडे बडे महात्माओ के पास भी इस प्रकार की गूढ बातें नही मिलती। अपनी धम पत्नी को क्या उपमा दूँ, किस प्रकार इसका सत्कार करूँ। बिना निणय के कोई काय होता है तो गलत होता है। माता पिता की आज्ञा से मैं यहा इसको लेकर आया और अगर इसको कुए म धक्का दे देता तो मैं इस बहुमूल्य रत्न को खो देता। मेरी क्या स्थिति होती ? इस प्रकार उसके मन म ग्लानि होने लगी और उसका चेहरा मलीन होने लगा। पत्नी कहती है प्राणनाथ ! "मने आपको सही बात सुनायी और

सत्य सत्य बात कही उससे आपको प्रसन्न होना चाहिये, फिर चहरे पर मलीनता किस प्रकार की ? उसने कहा प्रिये 'तुम्हारी बाता स म बहुत प्रभावित हू, तुम जसी सत्य निष्ठावान पत्नी मिली और धम मे भी आगे बढ रही है। इससे मुझ बडी प्रसन्नता है। यदि मुझ विषय लोलुप और ससार म फँसाने वाली पत्नी मिल जाती तो मेरे जीवन को वासनाओ मे डाल कर नष्ट कर देती। किन्तु मुझे तुम्हारी जसी पत्नी मिली है जो जीवन को उच्च शिखर पर पहुचाने की कोशिश करती है। ऐसी पत्नी को खत्म करने के लिये पिता की आज्ञा लेकर चला उसका पश्चाताप और ग्लानि हो रही है।' पत्नी कहने लगी वस्तु स्थिति को आपने सुन लिया लेकिन 'मातेश्वरी और पिताजी ने जो आदेश दिया है अब आप उनकी आज्ञा का पालन करिये।'

मेरे मोह मे मत फसिये। यदि उन्होंने आपको कुए म धकेलने की आज्ञा दी है तो आप कृपा पूवक मुझ कुए म धकेलिए और परमात्मा के साथ एकाकार होने म मुझे सहयोग दीजिये। मैं उस समय भी परमात्मा मे ध्यान रखूँगी और सोचूँगी कि मेरे जीवन म यह निर्णायक क्षणअपने सत्यस्वरूप को समझाने के लिये ही आया है। यह सुनकर गोविन्द अत्यन्त ही दु खित हो गया। हा ! हा ! अरे अरे मैं कसी पत्नी को कुए मे धकेलने को जा रहा हू। देवी क्या तू आज मुझे अकेले को छोडकर स्वर्गीय आनन्द को लूटने जाना चाह रही है। कुए मे तुझे नही गिरना है, मुझे गिरना है। क्योंकि माता पिता के पास चला गया तो वे दूसरी स्त्री के साथ मेरी शादी कर देंगे और फिर मेरा जीवन अन्धकार के कुए म गिर जायेगा। तुम्हारी जसी धम प्रिया के बिना जीवन अन्धकारमय हो जायेगा। अत हम दोनो मिलकर प्रेम से धार्मिक महोत्सव करें और घर घर धम का फलाव दोना इस प्रकार का विचार कर अपने घर की

के साथ साथ जीवन क्या है ? उसकी परिभाषा चल रही है। उसको आप अपने मन मे स्थायी रूप से बिठाइये तो आपकी हैरानी समाप्त हो जायेगी और हैरानी समाप्त होने के साथ साथ धम ध्या की जागृति करते रहेगे तो आपका जीवन भी ऐसे मगलमय प्रसग के साथ भगवान श्रयास की प्राथना के अनुरूप बन सकेगा।

लाल भवन
२७ जुलाई ७२

●●

●●

सोच समझ कर काम करने स मनुष्य अनेक सकटो से बच जाता है। अयत्न पूवक किया गया काम चाहे वह धम का ही क्यों न हो उसमें अनिष्ट की सम्भावना रहती ही है । इसीलिए बुद्धिमानों ने कहा है कि — पहिले सोचो समझो फिर करो।

—जनाचाय श्री जवाहरलाल जी म०

× × × ×

पूरे निणय के साथ किया गया काम ही हितावह होता है।

—महात्मा गाधी

●●

हाँ पर चोर डकतो का भय ह आदि वातो का लकर भयानक
अवस्थाओ का वणन किया गया है और सव अवस्थाआ म यह
अभियाचित किया गया ह कि यदि आपकी कृपा रहे ता सव स्थानो
पर मैं कुशलतापूर्वक गमन कर सकता हू, अपनी स्थितिया को
सुरक्षित रख सकता हू। प्राथना करना प्राथना की दष्टि से उपयुक्त
ह, लकिन प्राथना के अन्दर आय भावो का तात्त्विक दृष्टि स
जीवन के साथ सम्बधित करना सिद्धान्त की सुरक्षा भी रहे और
जीवन के क्षत्र म भी प्रगति हो यह विशेप महत्व की वात ह। इस
ाथना स सहसा यह समझाया गया ह कि कितना भी भयावह स्थान
ो और कसी भी विकट स्थिति हो, लेकिन वहा पर भगवान को
हायक मान लने स सव दुविधायें टल जाती हैं, और यह जीवन
र्वाध होकर आग वढ़ जाता ह।

बात तो एक दष्टि स उपयुक्त लगती है लकिन दाशनिक दृष्टि
कप्रधान व्यक्ति की निगाह म इस प्राथना म भी कई प्रश्न खडे
ते हैं। विचारक व्यक्ति इधर शास्त्र का श्रवण करता है उस
के श्रवण से यह उसका अवगत होता है शास्त्र के मम का
का वोध होता है तो वह यह सोचता ह कि सिद्धान्त की दृष्टि
न तटस्थ हैं दृष्टा हैं। वे सासारिक कार्यों म या एसे
ऊपर कभी उपस्थित नही होते। वे अपने स्वरूप म
। जब भगवान अपने स्वरूप रमण म अपनी अवस्था को
तो प्राथना के प्रसग म यह प्राथना करें कि भगवान
यता से हमारी ये सव बातें हट जायगीं यह कस सभावित
? इसम अपेक्षा दृष्टि से सोचने की आवश्यकता है।
न अपने स्वरूप मे सदा ...

अलमप्पणो होंति अल परेसिं

—सूत्रकृतांग १२।१६

ज्ञानी आत्मा ही स्व और पर के कल्याण में समर्थ होता है।

---

९ | परम–आश्रय

प्रणमुं वासुपूज्य जिननायक सदा सहायक तू मेरो
विषम वाट घाट भयथानक परमाश्रय शरणो तेरो ॥

यह प्रभु वासुपूज्य भगवान की प्रार्थना है। नामो की स्थितियों के साथ कविता की स्थिति भी परिवर्तित हो रही है और भावो का सकलन भी विभिन्न प्रकारो म आ रहा है। वासुपूज्य भगवान के चरणो म जो कुछ भी साधना का प्रसग आया है इस प्रार्थना मे कल की प्रार्थना स आज कुछ अन्तर है। कल की प्रार्थना म चेतन को सम्बोधन करके सावधानी दिखाई थी कि तु [अपने वतमान जीवन को कल्याण के माग पर लगा द जब कि आज की प्रार्थना म वासुपूज्य भगवान को सहायक के रूप म पुकारा जा रहा है और वह भी सहायता कसी ? तो उसका सकेत दिया ह 'विषम वाट-घाट' विषम भयकर रास्ता ह पहाड़ आदि भयकर जगली स्थान है।

जहाँ पर चोर डकैतो का भय है आदि खतरों का लेकर भयानक अवस्थाओं का वर्णन किया गया है और सब अवस्थाओं में यह अभिव्यक्त किया गया है कि यदि आपकी कृपा रहे तो सब स्थानों पर मैं कुशलतापूर्वक गमन कर सकता हूँ, अपनी स्थितियों को सुरक्षित रख सकता हूँ। प्रार्थना करना प्रार्थना की दृष्टि से उपयुक्त है लेकिन प्रार्थना के अन्दर आये भावों का तात्त्विक दृष्टि से जीवन के साथ सम्बन्धित करना, सिद्धान्त की सुरक्षा भी रहे और जीवन के क्षेत्र में भी प्रगति हो यह विशेष महत्व की बात है। इस प्रार्थना में सहसा यह समझाया गया है कि कितना भी भयावह स्थान हो और कैसी भी विकट स्थिति हो, लेकिन वहाँ पर भगवान को सहायक मान लेने से सब दुविधायें टल जाती हैं और यह जीवन निर्बाध होकर आगे बढ़ जाता है।

बात तो एक दृष्टि से उपयुक्त लगती है लेकिन दार्शनिक दृष्टि से तकप्रधान व्यक्ति की निगाह में इस प्रार्थना में भी कई प्रश्न खड़े हो जाते हैं। विचारक व्यक्ति इधर शास्त्र का श्रवण करता है उस शास्त्र के श्रवण से यह उसको अवगत होता है शास्त्र के मर्म की स्थिति का बोध होता है तो वह यह सोचता है कि सिद्धान्त की दृष्टि से भगवान तटस्थ हैं द्रष्टा हैं। वे सांसारिक कार्यों में या ऐसे प्रसंगों के ऊपर कभी उपस्थित नहीं होते। वे अपने स्वरूप में तल्लीन हैं। जब भगवान अपने स्वरूप रमण में अपनी अवस्था को रख रहे हैं तो प्रार्थना के प्रसंग में यह प्रार्थना करें कि भगवान आपकी सहायता से हमारी ये सब बातें हट जायगी यह कैसे संभावित हो सकता है? इसमें अपेक्षा दृष्टि से सोचने की आवश्यकता है। यद्यपि भगवान अपने स्वरूप में सदा के लिए विद्यमान हैं और वहाँ से जरा भी विचलित नहीं होते और न कभी इस भू मण्डल के ऊपर आकर किसी के सहायक के रूप में उपस्थित होते हैं जैसा कि आज

सिद्धा सिद्धि मम दिसंतु"

लोगस्स के इस पद म सिद्धो से प्रार्थना की है कि हे सिद्धदेव ? हमको सिद्धि दो या दिखाओ। लोगस्स का पाठ कौन उच्चारण नही करता है। इसको प्राय सभी ने अपने प्रतिक्रमण की दृष्टि से सबसे पहले याद किया है। तो वहा पर सिद्धो से मागणी (याचना) की गई है कि सिद्ध भगवान मुझे भी सिद्धि दें। वास्तव म भगवान सिद्धि देते नहीं हैं लेकिन सिद्धि की भावना जब यह अपने अन्दर जागृत करता है और उसका दृष्टिकोण मागनी का होता है तो इसका तात्पय यह लेना चाहिए कि तुम्हारे अन्दर म जो सिद्धि की योग्यता है अर्थात तुम्हारी आत्मा योग्यता की दृष्टि से सिद्ध तुल्य है। उस सिद्ध तुल्य आत्मा से ही प्रार्थना की गई कि मुझे सिद्धि दे अर्थात मेरे अन्दर म रहने वाले भाव जो सिद्ध पर्याय हैं उस सिद्ध पर्याय आत्मा से प्रार्थना की गई कि तुम मुझ यह जीवन दो। आप कभी कहेंगे कि क्या यह बात कहा सम्भावित हो सकती है। अपने आपको सिद्ध मान कर उसम सिद्धि की याचना की जाय क्या यह सम्भव है ? इसके लिए कहा गया है कि किसी नय की दृष्टि से सिद्ध तो पूर्ण सिद्ध पर्याय है लेकिन योग्यता की दृष्टि से भव्य आत्मा भी सिद्ध रूप म रही हुई है। इसीलिए कहा है कि सिद्धो जैसा जीव है जीव सोही सिद्ध होय। कर्म मैल को आंतरो, बूझ विरला कोय। आप यह उच्चारण करते हैं। इसम किस बात का सकेत है ? सकेत यह है कि आप भी सिद्ध जैसे हैं लेकिन आप कर्म बन्धनो से बध हैं इसलिए आपअ य को पुकार कर रहे हैं। लेकिन यह नय दृष्टि ही सब कुछ नही है क्योकि यदि एकान्त दृष्टिकोण आगया तो भगवान के मार्ग से हम भटक जाएंगे। और यदि सापेक्षता को मद्देनजर रख कर इसको समझने का प्रयास करें तो यह सिद्धि जो अपने म रही है उस सिद्धि के रूप म प्रगट कर सकते हैं। शास्त्रीय दृष्टिकोण की इस उच्चतम स्थिति को समझने से पूर्व हम वर्तमान

जीवन की उन समस्याओं या प्रश्नों को हल करने का प्रयास
जिनके कि बिना हम उस स्वरूप को नहीं पहिचान सकते हैं। य
इस प्रकार क्रमिक प्रयास करते रहे तो हम प्रार्थना के माध्यम से उ
सिद्ध स्वरूप को प्राप्त कर सकेंगे या अपने आप में प्रकट कर सकें
जिसकी याचना हम सिद्ध प्रभु से कर रहे हैं।

सोचिए समझिए और फिर करिए

मैं कुछ जीवन के स्वरूप को समझाने का प्रयास कर रहा हूँ।
यह जीवन क्या है और जीवन की वह वास्तविक परिभाषा हमारे
मन मस्तिष्क में कैसे आए, हम कहीं जीवन के नाम पर अजीवन को
तो जीवन नहीं समझ रहे हैं हम कहीं आत्मा के नाम पर अनात्मा
को तो आत्मा नहीं समझ बैठे हैं भगवान के नाम पर अभगवान को
तो भगवान नहीं समझ लिया गया है। इन बातों का ज्ञान आपको
और हमको स्पष्ट रूप से तब होगा जब कि हम इसका चिन्तन ठीक
तरह से करेंगे। जीवन की परिभाषा के साथ अपने वर्तमान जीवन
को जानने की कोशिश करें क्योंकि शास्त्रकारों ने मानव का उद्बोधन
दिया है —'असंखयं जीविय मापमायए' यह जीवन असंस्कारित
है अतः प्रमाद मत कर और इस प्रमाद की स्थिति से ऊपर उठकर
उसे इस जीवन का संस्कार करके जीवन के स्वरूप को समझने
का प्रयास करना है।

उस जीवन की परिभाषा में अनेक व्यक्तियों के मन्तव्य आपके
सम्मुख आ सकते हैं। इन अनेकों में से वास्तविक मन्तव्य पहचानने
का उत्तरदायित्व बुद्धिमान व्यक्ति पर आता है और बुद्धिमान व्यक्ति
ही इन अनेकों में से एक का निर्णय करता है। इसी दृष्टि से जीवन
की एक परिभाषा आपके सामने रखी जा रही है, उसमें भी आप
थोड़ा ध्यान दें और परिभाषा को समझने का प्रयास करें।
इसमें कहा गया है कि सम्यक् निर्ग्रन्थम् ... [illegible]

जीवनम् । इसम मम्यक निर्णायकम श०ने पर थोडा गहरा सो
क्योकि निणायक स्थिति यनि हमारे सामने स्पष्ट होती है त
जीवन का वास्तविक प्रकाश उपलब्ध हो सकता है जिसकी हम प्रा
के माध्यम से याचना कर रहे थे । आज मम्यक निर्णायक स्थिति
अभाव म मनुष्य इधर उधर भटक रहा है । और खास कर आत
के स्वरूप के विषय म तो वह दिग्भ्रा त सा हो रहा है क्योकि
अलग अलग दाशनिक भिन्न भिन्न रूप म आत्मस्वरूप को प्रस्तुत
करत हैं । कोई-कोई सास्यादि दाशनिको का कहना है कि आत्मा
कर्त्ता धर्त्ता कुछ नही है । आत्मा परिणामी नही है आत्मा कूटस्थ
नित्य है । एक शरीर की स्थिति म रहने वाली है । ऐसी आत्मा
सम्यक निर्णायक है ऐसे विचार जब सामने आत हैं तो उन पर कुछ
चि तन आगे बढता है कि यदि आत्मा कर्ता धर्ता कुछ नही है और
कूटस्थ नित्य है तो फिर निर्णायक कस ? जो परिणामी नही होता
वह निर्णायक नही हो सकता है आपके लिए य शब्द कुछ अपरिचित
से आ रहे है । आप कहेगे यह परिणामी क्या है ? परिणामी का
अर्थ होता है परिणमनशील । परिणमन स्वभाव है । परिण
मन से तात्पय है एक अवस्था की स्थिति स दूसरी अवस्था म मुडना,
लकिन दूसरी अवस्था क अ दर मुडने पर भी अपने स्वरूप को नही
छोडना । जसे स्वर्ण सोने क रूप म है । सोना परिणामी है । क्योकि
स्वयं स्वणत्व के रूप म होत हुए भी ढल सकता है टूट सकता है
मुड सकता है पिघल सकता है यानि आग के अन्दर द्रवित हो
सकता है और दूसरे रूप म ढल सकता है लेकिन ऐसी स्थिति म
भी स्वणत्व रूप को नही छोडता । सोने की डली का आकार टूटा
और डली का वह आकार बना । उस डली को अग्नि का ताप लगा
बहुत ज्यादा ताप लगा और वह द्रवित हो गयी, यह डली म
परिणमन हुआ इसको कहते हैं परिणाम । द्रवित होने के

उसको दूसरे साँचे में डाल कर, तोड़ मरोड़ कर लड़ी लेकिन उस लड़ी में भी स्वर्ण ज्यों का त्यों मिलता है। तो आप समझे होंगे कि उस डली में परिणाम होने का स्वभाव था पर अवस्था अन्तर होने पर भी, अर्थात् दूसरी-दूसरी अवस्था में उसका परिवर्तन होने पर भी सोने का महत्व और सोने का स्वरूप कायम रहा। वहाँ तो डली और यहाँ लड़ी का आकार। आकार बिल्कुल नहीं मिल रहा है लेकिन स्वर्णपन में कोई कमी नहीं आ रही है। यह परिणाम की स्थिति जैसे सोने में है उसी तरह से आत्मा में समझी जायेगी तो आत्मा का सही स्वरूप समझ पायेंगे और यदि ऐसे परिणाम के स्वरूप को नहीं समझ पाये तो आप उस निर्णायक तत्व को नहीं समझ सकेंगे, क्योंकि निर्णय करने का भी एक परिणाम है। आत्मा परिणमनशील है, वह परिणामी है, चतन्यमय है।

दूसरा इसका विशेषण है कूटस्थ नित्यता जैसे—वज्र का खम्भा कभी मुड़ता नहीं है उसमें लचक के रूप में परिणाम नहीं होता है उसे कहते हैं कूटस्थ नित्य। आत्मा ऐसी नहीं है कि जिसमें किसी तरह का परिणाम न हो। अगर ऐसा हो तो वह आत्मा नहीं रहेगी आप भले ही उस आत्मा के नाम से पुकारें। लेकिन वह अनात्मा है।

बन्धुओ इसको मैं थोड़ा गहराई के साथ कहने की सोच रहा हूं मैं वैसे बहुत गहराई में इस समय नहीं जाना चाहता लेकिन अपनी आदत के अनुसार मैं इस बारे में कुछ कहना चाहूंगा कि आप उस आत्म तत्त्व की गहराई को समझें।

केवल शरीर बदलता है।

आप सोचिये कि आत्मा एकान्त कूटस्थ नहीं परिणामी भी है क्योंकि एक शरीर को छोड़कर दूसरे शरीर में जा सकती है लेकिन

दूसरे शरीर म जाने पर भी वह अपने स्वरूप को नही छोड़
है। एक मनुष्य की आत्मा प्रसग आने पर हाथी के शरीर
जा सकती है। मनुष्य शरीर के आकार मे जो आत्म प्रदेश व्य
थे, वे आत्मप्रदेश हाथी के लम्बे चौडे शरीर मे पहुच गये, लेकि
हाथी के शरीर म पहुचने पर भी जो आत्मा का लक्षण है जो आ
प्रदेश मनुष्य की आत्मा के अन्दर थे, मनुष्य के पर्याय म थे वे वही
उनम कोई अन्तर नही आया तो परिणामी होते हुए भी आत्म
अपने स्वरूप के अन्दर दृढ है, अटल है। इसी को सत् तत्व की सज्ञा
दी गई है। इसलिए शास्त्रकारो ने 'उत्पाद् व्यय ध्रौव्ययुक्त सत्',
यानी जिसके अन्दर उत्पाद् अर्थात् उत्पन्न होना व्यय होना और
ध्रुव या अटल रहना ये तीनो अवस्थायें हो वह सत् है और जिसम
ये तीनो अवस्थायें एक साथ नही पाई जाती हैं वह तत्व सत् नही
असत् है। उस दृष्टिकोण से आत्मा को भी तत्व माना गया है और
आत्मा को निर्णायक माना गया है। जब आत्मा तत्व है और
निर्णायक है और सत् है तो उसम ये तीन अवस्थायें अवश्य माननी
होगी। इन तीन अवस्थाओ को माने बिना आप तत्व के निर्णय को
पूरी तरह नही समझ पायेंगे। इन तीन अवस्थाओ को मानेगें तो
आत्मा को परिणामी स्वीकार करेंगे और परिणामी स्वीकार करने पर
ही आप सोच पायेंगे कि उसका निर्णय करने का भी एक परिणाम है।
कभी ऐसा भी विचार सामने आता है कि आत्मा तो कूटस्थ नित्य
है यह परिणामी स्वभाव आत्मा का नही प्रकृति का है और प्रकृति
सत्व रजस् और तमो तीन स्वभावात्मक है। जब तक इन तीनो
की साम्यता रहती है तब तक सृष्टि का कोई कार्य नही होता है,
लेकिन तीनो अवस्थाओ मे जब विकृति विषमता आती है तो उसम
महद् तत्व पैदा होता है। उससे अहकार फिर तन्मात्रा आदि कुछ
तत्वो की सृष्टि होकर प्रकृति सारे ससार की रचना कर लेती है
और पुरुष के सामने अपना नृत्य उपस्थित करती है

के अन्दर बुद्धि भी मानी गई है वह प्रकृति का ही गुण है। उस बुद्धि म सफेदी है और उसम आत्मा का प्रतिबिम्ब पडता है। प्रतिबिम्ब पडने से आत्मा इस प्रकृति की सारी रचना को अपने आप समझ लेती है। और जब उसका यह खयाल हो जाता है कि यह सारा ससार एक प्रकृति का नाटक है और मैं इस काय स अलग हू ऐसा जब विवक होता है तो वह प्रकृति स मुक्त हो जाता है। इस प्रकार के विचारो की स्थिति क साथ युक्तियुक्त विचारो का चिन्तन किया जाय तो यह प्रश्न होता है कि प्रकृति के ऊपर पुरुष का प्रतिबिम्ब कसे पडा ? समान प्रकृति का समान प्रकृति पर प्रतिबिम्ब पड सकता है। काच म जो मनुष्य का प्रतिबिम्ब पडता है तो काच पुदगलो से बना है। और मनुष्य का शरीर भी पौदगलिक है अत उसमे प्रतिबिम्ब पडता है। उस दपण म वण गध रस और स्पर्श होता है और जिसका प्रतिबिम्ब पडता है वह भी वण गध रस और स्पश वाला होता है। दोनो समान धम वाले हैं इसलिए प्रतिबिम्ब पडता है, लेकिन प्रकृति वण, गध और स्पश वाली मा ी जाती है और आत्मा वण गध और स्पश रहित मानी जाती है तो आत्मा का प्रतिबिम्ब बुद्धि पर कसे पड सकता ह ? रूपी का प्रतिबिम्ब अरूपी पर नही पडता है। प्रतिबिम्ब रूप का रूप पर ही पडता है लकिन इसलिए यह कथन कि बुद्धि मे अन्दर आत्मा का प्रतिबिम्ब पडता है और आत्मा म भ्रान्ति पदा होती है यह युक्तिसगत नही है।

दूसरी बात यह है कि आत्मा यह सोचती है कि मेरा प्रतिबिम्ब इस पर पड रहा है और यह प्रकृति है, यह सोचने की स्थिति अगर उसम आगई तो आत्मा परिणामी हो गई। फिर उसको कूटस्थ नित्य कैसे कहा जाय ? यदि यह कहा जाता है कि आत्मा विवेक ख्याती से सोचती है तो विवेक ख्याती परिणामी के बिना नही होती है। पहले आत्मा भ्रान्ति के साथ थी फिर विवेक ख्याती मिली तो विवेक के कारण भ्रान्तिरहित हुआ इसे हो तो परिणामी स्वभाव

बहुत है यदि इस परिणामी नित्य आत्मा को निर्णायक शक्ति के रूप म लिया जाता है तो वह इस जीवन के साथ, आगे का मोड़ ले सकती है।

आप जिस शरीर के अन्दर बैठे हुए हैं जिस परिणामी भाव को धारण करके यह आत्मा मनुष्य पर्याय मे बंटी हुई है इस पर्याय के वास्तविक सत्कारित स्वरूप को समझाने के लिए चरित्रपक्ष का सहारा लिया जाता है ताकि चरित नायकों के चरित्र के माध्यम से तत्वो को समझ सकें। मनुष्य जीवन का पर्याय तो हर आत्मा को मिला हुआ है पर जीवन का निर्णायक शक्ति को समझे बिना वह पर्याय अधूरा रह जाता है। एक तरुण के जीवन की स्थिति का एक चिन्तन मैं आपके सामने रखता हूं। एक तरुण जिसकी आत्मा आत्मिक गुणों से परिपूर्ण है और सही निर्णय कर पाने में सक्षम है। वह कविता के रूप में इस प्रकार है—

निज गुण सुखकारी ध्याता है आतमराम को

इस भरत क्षेत्र की दक्षिण दिशा म विख्यात मनिपिगल नाम का एक देश है। उसम विविध नगर हैं वे नगर शोभा से युक्त हैं। उसमे धनी मानी और विद्वान सभी तरह की जनता का आवास है। बस्तियां सभी तरह की वस्तुओं के व्यापार से आदान प्रदान से और सामाजिक व्यवस्था से वह देश सम्पन्न है। उस देश का नाम करण पोतनपुर के रूप म है उस देश के राजा जयशत्रु के रूप म विख्यात थे।

यह राजकीय जमाने का प्रसंग है लेकिन राजाओं मे भी सभी ऐशोआराम मे लगे हुए थ ऐसी कल्पना नहीं करनी चाहिए। अधिकांश भाग विकृत हो सकता है, लेकिन उसम कुछ शासक निर्लिप्त भी रह सकते हैं।

जो पोतनपुर के राज्य सिंहासन पर आरूढ़ जयशत्रु महाराज थे वे प्रजा का पालन भी पुत्रवत् करते थे। वहां उनकी दृष्टि मे

राज्य सत्ता और सम्पत्ति ही सब कुछ नही थे लेकिन जनता का जीवन महत्वपूर्ण कसे रह सके इसको ध्यान म रख करके जनता के जीवन के लिए व सब तरह के उपाय काम मे लेते और जनता के साथ स्नेह का व्यवहार करते जनता के जीवन का विकास कस हो सकता है इस स्थिति को ध्यान म रखते हुए काय किया करते। यहा महाराजा का सद्धान्तिक दृष्टि से सकेत दिया है कि वे चरित्र बल से भी कसे थे क्योकि शासक जितना चरित्र सम्पन्न होता है वसे ही शास्य जनता भी अपने जीवन का वसा ही चरित्र निष्ठ बनाने का प्रयास करती है।

यथा राजा तथा प्रजा

राजा का तात्पय आप शासक से लीजिए। चाहे वह मुकुट बन्द राजा हो या अन्य। वे राजा तो अब चले गए हैं लकिन आज भी जो शासक हैं उन शासकों को आप राज्य को चलाने की स्थिति म शासक के रूप म राजा मान सकते हैं। उनके चरित्र का प्रभाव जनता पर पडता है उनका चरित्र यदि उन्नत है वे यदि अपने चरित्र को देश भक्ति की दृष्टि स ठीक समझते हैं उनको राष्ट्रीय चरित्र का ख्याल है तो उनका जनता पर भी असर होगा। और यदि शासक की स्थिति बिगडी हुई है शासक व्यक्तिगत चरित्र स गिर गया है अथवा राष्ट्रीय चरित्र उनमे नही है अथवा शासकीय दृष्टि से तटस्थता नही है तो वे शासक भले ही कुछ समय के लिए शासक बने रहे, उनके सस्कारो का असर जनता पर आए बिना नहीं रह सकता है। कभी-कभी एसे प्रसग पर पूव स्थितियो का भी स्मरण हो आता है।

पूर्वकाल का एक शासक था उस शासक का वणन जब कभी कणगोचर होता ह तो दिल के अन्दर अनुसधान जुड जाता ह। वह शासक शिकार खेलने की दृष्टि से जगल म निकला और बहुत दूर

भटक गया। साथी पीछे छूट गए शिकार भी नहीं मिला हैरान
हो गया। लौट करके पुन राजधानी म पहुचना चाहता था लकिन
जोर स प्यास लगी हुई थी। बीच म एक किसान का खेत आ गया,
वहा पर एक कुआ था। वह शिकारी क वेष म राजा उस किसान
क कुए पर पहुचा वहा एक बुढ़िया को देखता है। राजा को प्यास
इतनी जोर स लग रही थी कि वह बोल नहीं पाया और हाथ से इशारा
किया कि मुझ प्यास लग रही ह पानी पिलाओ। बुढ़िया समझ गई।
उसने सोचा यह कोई बचारा जगली दिखता है। यह कही शिकार
लन के लिए गया ह और हरान होकर आया है लकिन मेरे कुए पर
ा गया कुआ भी मरा एक तरह का घर ही है और घर पर यदि
ई अतिथि आता है तो उसका सत्कार करना मरा कर्त्तव्य बन
ता है। उसका सत्कार करने के लिए उस बुढ़िया ने एक गन्ना
ा। साठ का खीच कर बाहर लाई वह वृद्धावस्था म भी इतनी
तवर थी कि उसने उस गन्ने को निचोड़ करके रस का लोटा
दया और उस राजा को रस पिलाया फिर पूछने लगी—
भाई अब भी क्या तुम्हारी प्यास अवशेष रही। तो राजा ने
जी मैंने मागा तो पानी था लकिन तुमने रस पिला दिया तो
प्यास दोनो गायब हो गइ। बुढ़िया ने निस्वार्थ भावना से
या और मानवीय दृष्टि स वात्सल्य भावना से कहा कि
री- (वह बुढ़िया नही जानती थी कि यह राजा है)—
क्या सत्कार कर सकती हू तुम्हारा ही घर है
ते हो तो जाओ लेकिन फिर कभी आना। राजा वहा
गया। रास्ते म जाते जाते वह चितन करता है कि
टेक्स बहुत कम लगा रखा है ये किसान परिवार
हे है एक गन्ने के अन्दर ही इतना रस कि इतन सारा
। कितना गुड और शक्कर तयार कर रह हैं। इन
लगाना चाहिए। राज्य म जाकर उसने बहुत

टक्स लगा दिया। जनता उस टैक्स को सुन कर सत्रस्त हुई और कुछ काल बीत गया। उसके बाद कुछ समय पश्चात सयोगवश वह राजा पुन उसी कुए पर जा निकला, फिर वही बुढिया उसको मिली उस बुढिया के सामने उसने पानी की फिर पुकार को उसने उसे पानी के बदले पुन रस पिलाने का प्रयास किया लेकिन अबकी बार एक स काम नहीं चला तीन तीन गन्ने उखाडे और उनका रस निचाडा लेकिन तीन तीन गन्नो से भी लोटा पूरा नही भरा और उस रस को पीया तो भी उतना जायका नहा रहा जितना कि पहले था। तब इस राजा के मन म प्रश्न उठ खडा हुआ। वह पूछने लगा माजी, पहले म आया था तब आपने एक ही साठ से लोटा भर दिया और वह रस कितना मिठासपूण था लेकिन अब की बार तीन तीन साठो म भी लोटा नही भरा और उसम भी रस मे वह जायका नही है *क्या बात है ?* उस बुढिया ने कहा *अरे भाई क्या बताऊँ—यथा राजा* तथा प्रथा। राजा की नीयत खराब हो गई। जा हमारे ऊपर साधारण टक्स था राजा मे जनता के हित की भावना थी वह निकल गई और स्वार्थवश होकर इतना टक्स लगा कर अपना भण्डार भर रहा है और अपने ऐशोआराम में लग रहा है लकिन जनता का हित छोड दिया गया है, राजा की नीयत खराब हो गई है इसका प्रभाव जनता पर पडा और जनता का प्रभाव इन पदार्थों पर पडा है जिससे गन्ने की स्थिति वह नही रही जो कि पहल थी। यह बात ऐसे सरल मालुम होती है लेकिन इसका मनोवैज्ञानिक तथ्य बहुत गहरा है। इन्सान की भावना का प्रभाव इन पदार्थों पर कसे पडता है और कसे इनके अन्दर इन रसा की कमी होती है। यह सारा विज्ञान यदि बारीकी म समझ मे आ जाय तो अतिशयोक्ति मालुम नही होगी। फिर वह राजा सारी बात समझ गया, और उसने टक्स कम कर दिया और इस भावना से किया कि जनता का कल्याण हो।

यह रूपक किसी भी तरह से हुआ होगा, म तो

इसलिए रख गया हू राजा का असर प्रजा पर पडे बिना नही रहता। जिस राज्य म कोई उत्तम पुरुष पदा होता है उस राज्य मे शासन की स्थित उत्तम होती है। तो जिस तरुण का और जिस राजा का वत्तान्त आने वाला है उस राजा का जीवन कसा था, इसका थोडा सा सकेत मात्र किया गया है कि वे कसे थे उन्होने परस्त्री को माता समझी। पर स्त्री उनकी दृष्टि मे कभी नहीं आई अपनी जगत् साक्षी से बनी हुई उनकी स्त्री के अलावा कोई भी वहिन उपस्थित हुई तो उसको माता की निगाह से देखने की कोशिश करत। जहा शासक के स्वय के जीवन म इस प्रकार की चरित्र निष्ठा हो, उसके राष्ट्रीय चरित्र की प्रगति होती है। वे राज्य के शासक थे और उन पर सब तरह का उत्तरदायित्व था। वे आक्राता नही बनना चाहते लकिन यदि कोई आक्राता बन कर आक्रमण करने की स्थिति मे आता है तो वे पहले साम, दाम और भेद की नीति स समझाने का प्रयास करते यदि इनस भी नही मानता तो दण्ड नीति का प्रयोग करना पडे तो शत्रु का नाश करने की दृष्टि से नहा अपितु आत्मरक्षा व राज्य की रक्षा के लिए और स्वय के आश्रित रहने वाल प्राणियो की सुरक्षा के लिए काय करते थे। तो वसा प्रसग आने पर कभी शत्रु के सामने पीठ नहीं दिखात स्वय आग बढ कर जात। वे पास म रहने वालो को या अपने पास क सिपाहियों और फौज को आगे बढाकर स्वय पीछे नहीं रहत बल्कि स्वय सबके आग रह कर लडाई के मदान म उतरते थे। यह सारा विश्लेषण उनके व्यक्तित्व का उनके चरित्रबल का इसम किया गया है। उनका चरित्र बल कितना उन्नत था इसकी कल्पना सहज म मनुष्य कर सकता है। लकिन उस राज्य में राजा कितना भी चरित्र वाला हो और वह राष्ट्रीय चरित्र का स्वामी हो लकिन यदि उसकी धर्मपत्नी उसके अनुरूप नहीं हो तो वहा की स्थिति डावाडोल हो सकती है। तो महाराजा क साथ म रहने वाली महारानी का जिक्र भी आता है।

उनकी महारानी वसन्तसेना चौंसठ कलाओं म निपुण थी। नारी जाति के जो श्रेष्ठ गुण हैं उन गुणों स वह अलकृत थी। उसके सौंदय की जो कवि की कल्पना थी उसके अनुसार इद्र की इद्राणी अप्सरा स्त्री की तरह थी और उसके साथ ही साथ आध्यात्मिक जीवन के साथ धमवर्त्ति का भी सकेत है कि वह अपने धम की दृष्टि से जिस रूप म चलती थी उस धम की स्थिति का उनके जीवन पर बहुत बडा प्रभाव था, उसस वह जनता की प्रिय बनी हुई थी उनका जीवन स्व-पर हित दृष्टि स चल रहा था, महाराजा और महारानी का जो दाम्पत्य जीवन का प्रसग आता है वह दाम्पत्य जीवन भी केवल भौतिक दृष्टि का ही नहीं अपितु आध्यात्मिक दृष्टि का भी प्रतीक था और उसी जीवन के अन्दर उन्होंने जीवन क मम का समझने का प्रयास किया। महारानी के सम्पक से महाराजा अपने जीवन की स्थिति को आग बढाने म कैसे सफल रहे हैं। निर्णायक रूप म एक इन्सान का जीवन आने वाला है वह आत्मा किस रूप म आता है यह तो समय पर ही ज्ञात हो सकेगा। अभी तो मैंने इस चरित्र का प्रारम्भ करने स पहले थोडा सा सकेत दे दिया है कि शासक कस थे महारानी और नागरिकों की स्थिति क्या थी इसका सक्षेप म जिक्र कर दिया है इसको आप ध्यान मे रखकर वतमान जीवन के साथ तुलना करें और उसके सम्बध में अपने जीवन का समन्वय का प्रयास करें तो आपका जीवन भी मगलमय होगा और निर्णायक शक्ति का समझने में कामयाब हो सकेंगे। इसी भावना स अभी तो इस विषय को यहीं रख कर समाप्त किए देता हू।

लाल भवन
२८ जुलाई ७२

अज्झत्थहेउ नियथस्स बधो

अन्दर के विकार ही वस्तुत बधन के हेतु हैं। निर्विकार जीवन ह
निमल होता है।

—उत्तराध्ययन

१० | निर्मल जीवन

विमल जिनेश्वर सेविये थारी बुद्धि निमल हो जाय रे जीवा।
विषय विकार विसार मे रे जीवा तू मोहनीय कम खपाय रे जीवा॥

व घुओ,

यह विमलनाथ परमात्मा की प्रार्थना है। प्रभु के नाम भी कैसे कैसे आ रहे हैं। विमल शब्द यह शब्द हर व्यक्ति के मन मे एक विमलता की भावना उत्पन्न करने वाला है।

विगत यस्य मल स विमल ।
अथवा विगतोमलो यस्मात स विमल ॥

जिसम स मल चला गया है वह विमल बन गया। गटर के पानी म मल मिला रहता है इसलिये वह पानी गन्दा रहता है। प्रत्येक व्यक्ति कहता है कि यह पानी गन्दा है विमल नही है निमल नही है। लेकिन जहा हौज का स्वच्छ और निमल पानी है उसको निमल कह

सक्ते हैं। जड पदाय मे भी विमलता की स्थिति, जड रूप मे रहती है, पर यहां विमल का प्रसग चतन्य तत्व से है। हमारी यह आत्मा अनादि काल से मलयुक्त बनी हुई है। एक जन्म से नही, अनन्तानन्त जन्मा से।

कब से यह मलयुक्त बनी इसका कोई छोर नही है। पहले कभी भी यह आत्मा निमल नहा थी क्योकि एक वक्त निमल बन जाने के बाद म किंवा एक वक्त कर्मों के आवरण के सवथा हट जाने पर वह आत्मा पुन मलयुक्त नही बनती।

यह कल्पना करना कि पूव मे यह आत्मा मलरहित थी और बाद मे मलयुक्त बनी असगत है। क्योकि अगर मल रहित होकर भी मलयुक्त बन सकती है तो फिर इस विश्व मे कोई भी आत्मा एसी नही रहेगी जो सदा सवदा के लिये मल रहित हो। फिर तो सिद्ध परमात्मा भी कममल से युक्त बनने लगेगा। इसलिये शास्त्रकारो का कथन है कि यह आत्मा अनादि काल स कर्मों के मल से युक्त है माह और माया का जाल इसके साथ लगा हुआ है छल और कपट के पटो से आवारित है स्वार्थों के घटाटोप म यह आत्मा छिपी हुई है। इसने अनेक योनिया म भ्रमण करते हुए आज तक पूण रूप स निमलता प्राप्त नही की।

जिन आत्माओ ने इस बीच म अनादि काल के लगे हुए मल को धो दिया मोह माया और ममत्व को सवथा नष्ट कर दिया और जिन्होने परम छोर की निमलता प्राप्त कर ली वे विमलनाथ के रूप म बन गए हैं।

जो आत्मा अनादिकाल से मलयुक्त है वह भी किसी न किसी समय मल रहित हो सक्ती है। मोटे तौर पर एकदेशीय उदाहरण के द्वारा आप इस विषय का समझ लीजिय। साना है।

कहा रहता है यह ?
जमीन म मिट्टी म।

सोना मिट्टी म दबा पडा है। वह सोना कब से मिट्टी मे है इसका कोई अन्दाज लगा सकता है ? अनादि काल से मिट्टी के साथ वह घुला मिला हुआ है। पर उस अनादि काल से मिट्टी के घुलने वाले को भी एक दिन मिट्टी से रहित किया जा सकता है। उसको भी निखालिस बनाया जा सकता है। वह कुन्दन बन सकता है।

इस एक देशीय उदाहरण से अनादि काल से मिट्टी के समान कर्मों के साथ आत्मा लिप्त हो रही है। पर प्रयत्न विशेष से इसको भी इस कर्म रूप मिट्टी से अलग करके निखालिस निर्मल बनाया जा सकता है। जीवन के ऐसे निर्मल प्रसग को जिन्होंने उपस्थित किया वे विमलनाथ भगवान् कहे जाते हैं उन्ही के चरणो मे आज प्रार्थना का प्रसग है।

विमल जिनेश्वर सेविये
तू मोहनीय करम खपाय रे जीवा।

प्रार्थना की ये पक्तिया सीधी सादी हैं और सम्बोधन भी बडा सुन्दर है। तू विषय विकारो को छोडकर, विमलनाथ भगवान् की सेवा म यदि लग जाता है तो तेरे ये तमाम बन्धन टूट सकते हैं। लेकिन यह सोचने का विषय है कि विमलनाथ भगवान् के चरणों मे लगेगा कौन ?

लगने वाले अपने आपको समझेंगे तब ही तो लगेंगे जिसने अपने आपको नहीं समझा वह कैसे विमलनाथ के चरणों में जाएगा ?

आप सब यहा व्याख्यान के स्थल पर उपस्थित हैं। आपको मै कभी पूछ लू कि आप कौन है ? बतलाओ।

आत्मा है।

आत्मा है ? तो आत्मा का स्वरूप क्या है ? आज उस आत्मा के स्वरूप को ही हम ठीक समझना है। एक आध या कुछ व्यक्ति कह सकते है कि आत्मा है, पर मेरा प्रश्न कुछ व्यक्तियों से नहीं है,

कुछ व्यक्ति थोडे जानकार रहते हैं। कुछ और अधिक जानकारी रखते हैं। पर आम जनता का विषय अभी तक उस जानकारी से परे है और व जब अपने आपकी स्थिति को पहचान नही पाते तो उनको निमलता का स्वरूप, विमलनाथ का स्वरूप कसे समझ म आ सकता है ? उस विमलता को प्राप्त करने के लिये हम प्रयास करना है और इस प्रश्न को हल करना है कि जीवन क्या है ? उस जीवन की परिभाषा म आये हुए शब्दो को और उसके भाव को समझना है। उन शब्दों का और उनके अथ को ठीक तरह स समझ लगे तो हम अपने आपका भी पहचान लेंगे और जीवन की परिभाषा को भी व्यवस्थित रीति से समझ लेंगे।

उसके लिये जो आपके सामने परिभाषा आ रही है कि—

'सम्यग निर्णायक समतामय च यत तज्जीवनम।

जो सम्यग निर्णायक ह समतामय ह वह जीवन ह। उस सम्यग निर्णायक और समतामय की शक्ति को कभी आत्म रूप से पुकारा जाता है और कभी उसको निर्णायक रूप म कहा जाता है।

लेकिन वह निर्णायक कस ?

मैं समझता हू—आत्म तत्व की मा यता स शायद ही कोई इन्कार करे, लेकिन आत्मा का सही स्वरूप समझने म अधिकाश भ्रातियुक्त हैं।

आत्मा मानी जा रही है पर कल मैंने बताया था कि आत्मा मानने वाले आत्मा को परिणामी नही मानते हैं तो व वस्तुत आत्मा के स्वरूप को नही समझ रहे हैं, और एक दृष्टि से देखा जाव तो व अधकार म भटक रहे हैं, भ्रातियुक्त हैं। अधकार युक्त है प्रकाश की किरणो से दूर हैं। जब उस आत्मा को परिणामी माना जावेगा तभी उसके साथ कत्त त्व और भोक्तृत्व का सम्बध जुडेगा।

एक स्वतन्त्र तत्व "आत्मा"

आत्मा चतयमय है। आत्मा परिणामी है। चतन्यमय का

आत्मा ज्ञानवान है और वह ज्ञान युक्त गुण भी ऊपर से चिपकाया हुआ नहीं है। वह आत्मा के साथ अभिन्न रूप से तदाकार रूप में रहता है। अगर ज्ञान अलग चीज है और आत्मा अलग चीज है और किसी पदार्थ से उस ज्ञान को आत्मा के साथ चिपका कर यदि कोई उसकी स्थिति को समझाता हो तो यह दृष्टिकोण भी असंस्कारित मानस का है।

ज्ञान आत्मा के साथ अलग से लाकर चिपकाया नहीं जाता। ज्ञान तो आत्मा की शक्ति के रूप में है। आप सूर्य को देख रहे हैं। इस सूर्य की किरणें सूर्य के साथ किस सम्बन्ध से रही हुई है? किरणें अलग हैं और सूर्य अलग है क्या आप यह अनुभव कर रहे हैं? नहीं। तो क्या किसी दूसरे ठिकाने से किरणों को लाकर किसी चिपकाने वाले पदार्थ के द्वारा वे सूर्य के साथ चिपका दी गई हैं। अथवा वे किरणें सूर्य का रूप ही हैं? आप इस को समझ लेंगे तो आगे की स्थिति भी स्पष्ट हो जावेगी।

सूर्य की किरणें सूर्य से अलग नहीं हैं। अगर अलग हो जावें तो कोई उसको सूर्य नहीं कहेगा। वह पिण्ड सूर्य नहीं कहलावेगा। सूर्य वह है जिसके अन्दर किरणें ओत प्रोत हैं। जैसे सूर्य की किरण सूर्य से भिन्न नहीं और बाहर से लाकर चिपकाई भी नहीं जाती वैसे ही ज्ञान शक्ति चैतन्य शक्ति आत्मा से भिन्न नहीं, आत्मा के साथ ही सूर्य की किरणों की तरह वह ओत प्रोत है। उनको कथंचित भिन्न भी कह सकते हैं और कथंचित् अभिन्न भी। यह तो स्याद्वाद दृष्टिकोण है। पर आत्म स्वरूप को समझने वाली सम्यग्दृष्टि आत्मा सबसे पहले आत्मा को चैतन्यमय माने और उसके साथ ही साथ दूसरा विशेषण इसका परिणामी माने। जो परिणामी है वह कर्त्ता भोक्ता की स्थिति में आता है। जिसके अन्दर परिणाम नहीं है वह कर्त्ता भी नहीं हो सकता और न वह किसी चीज का भोक्ता हो सकता है। कर्त्तृत्व शक्ति और भोक्तृत्व शक्ति दोनों एक दृष्टि से आत्मा के स्वभाव गुण के अन्तर पेटे

म हैं। क्योकि आत्मा के अन्दर एक क्रियावती शक्ति मानी गई ह, आत्मा क्रियावान ह। पर वह शक्ति आत्मा से ज्ञान की तरह अभिन्न ह और उसके अन्दर जब क्रिया होती ह तब इन्सान यह समय पाता ह कि यह काम मैंने किया ह, और यह काम मैं करने वाला हू। यह प्रश्न तब समझ मे आता ह जब कर्तृत्व शक्ति को आत्मा का गुण माना जाय और यह मानना नितान्त आवश्यक ह। क्योकि इस विज्ञान को जाने बिना किसी प्रश्न का समाधान नही होगा।

आप यहा बठे हैं कहाँ से चल कर आये हैं ? और वह आने वाला कौन ह ?

मेरे कुछ ऐसे ही प्रश्न होते हैं। क्योकि मैं एक दृष्टि से आप से धम चर्चा करने के लिये बठा हू। मैं उन वक्ताओ की दृष्टि से भाषाणबाजी करने नही बठा हू। मैं तो एक साधक के रूप मे हू और आपको भी साधक के रूप मे समझ कर चरचा करने के रूप म कुछ बातें बतला रहा हू तो यह भी प्रश्न हो जाता ह कि कौन चल कर आया ह ?

जड सहित आत्मा आई ह।

अब देखिये कि जड सहित आत्मा क्या ह। यह कर्तृत्व शक्ति आत्मा के साथ है और जड़ उसका विशेषण लग गया है। लेकिन यह ध्यान रखिये कि जिसमें निणय करने की शक्ति है और जिसमें रास्ते के मोड पर ठीक तरह से मुड़ जाने की विधानशक्ति ह, वह शक्ति जड की नहीं, वह शक्ति चतन्य की है। जड अपने अन्दर क्रिया की योग्यता रखता है लेकिन वह क्रिया करने की स्थिति मे नही रहता। कर्तृत्व शक्ति उसमे नही रहती।

आत्मा रूपी भी है !

जो क्रिया होती है उसम और जो क्रिया की जाती है उसमे अन्तर है। एक रेती का कण उड़कर इधर से उधर पड़ रहा है वह

क्रिया हो रही है। लेकिन एक व्यक्ति इधर से उठकर उधर बैठ रहा है वह क्रिया हो नही रही है बल्कि यह क्रिया की जा रही है। अपने घर से व्यक्ति चला वह अपनी कत त्व शक्ति के साथ शरीर को साथ म लेकर चला लेकिन शरीर वतमान की स्थिति में अ त्मा मे ओत प्रोत हो रहा है। लोह पिण्ड के अन्दर जसे आग का प्रवेश है और उस लोह पिण्ड को आग के गोले के रूप म पुकारा जाता है वसे ही यह आत्मा इस समय इस शरीर पिण्ड के साथ मे आग की तरह शरीर मे ओतप्रोत हो रही है। तो जसे उस लोह पिण्ड को आग युक्त होने से लोह पिण्ड न कह कर आग का गोला कहा जाता है वसे ही वतमान मे आत्मा का इस शरीर युक्त होने के कारण इस शरीर सहित आत्मा को आत्मा कहा जाता है। इस समय शरीर को हम सवथा जड नही कह सकते। हम उस सू । पर चिंतन करें जो भगवती सूत्र म प्रश्न के रूप म आया है —

आया भन्ते काया अन्ने काया ?

भगवन ? आत्मा काया है या काया अन्य है ? तो भगवान ने उत्तर दिया ' आयावि काया अनेवि काया । आत्मा काया रूप भी है और अन्य रूप भी। इसी प्रकार आत्मा को रूपी आत्मा भी कह सकते हैं उसका भी प्रश्न वहा भगवती सूत्र म आया है —

रूवी ए भते आया अरूवी आया ?

हे भगवन आत्मा रूपी है या अरूपी ? तो उत्तर मिलता है —

गोयमा ! रूवीवि आया अरूवी वि आया।

हे गौतम ? आत्मा रूपी भी है, और अरूपी भी है। रूपी आत्मा किस रूप म जब तक कर्मों के साथ लिप्त है और शरीर का पिण्ड धारण करके चल रही है तब तक इसको रूपी आत्मा कहा जाता है और वह रूपी आत्मा चलती है चल कर अन्य स्थान पर पहुचती है। आप जो आये हैं रूपी आत्मा के

रूप मे आये हैं। आपकी आत्मा वतमान मे रूप को लेकर चल रही है लेकिन उसम चलकर आने का जो विनान है और चलकर आने का जो कतृत्व है वह आत्मा का स्वभाव है वह आत्मा का कतृत्व है न कि शरीर का। शरीर अगर आत्मा रहित हो जाता है तो उसमे कतृत्व शक्ति नही होती। एक मुर्दा कलेवर किसी घर मे पडा हुआ है और उस आवाज देकर कहा जाये कि अरे भाई उठो महाराज के व्याख्यान का टाइम हो गया है हम व्याख्यान मे चलें। क्या वह मुर्दा कलेवर आपके वाक्य को सुनेगा क्या वह उठकर चलने की तयारी करेगा? वह कभी तयारी करने वाला नहीं है क्योंकि उसक अन्दर जो कत्तव्य शक्तिमान् आत्मा था जो क्रिया करने का निर्णायक तत्व था वह तत्व उस शरीर को छोडकर अन्यत्र चला गया है। इसलिए मुर्दा शरीर इरादतन चलन की क्रिया नही कर सकता। लेकिन आप जो कि शरीर के साथ निर्णायक तत्व को लेकर बठे हैं और किसी काय म व्यस्त हैं यदि कोई दलाल पुकारता है, दलाल भी कई तरह के होते हैं और धम के दलाल भी होते हैं तो धमदलाली करने वाले का भी स्वभाव होता है कि वह जाते-जाते पुकारता जाता है वह सोचता है कि मैं धम के लिए जा रहा हू तो चार व्यक्तियो को बुलाता हुआ क्यो न जाऊँ जिससे—मेरे कर्मों की भी निजरा हो और शुभ भावो के साथ म दलाली भी कर लूँ और मुझे लाभ मिले और मेरे कहने से वह पहुच जाये तो उसका भी लाभ मिल जाये। इसलिये ऐसी भावना रखने वाला वह व्यक्तियो को पुकारता है कि बठे क्या हो, यह ससार का काम तो रात और दिन चौबीसो घण्ट हो रहा है लेकिन चलो ज्ञान प्राप्त करने के लिए कुछ आध्यात्मिक चर्चा ही सुनें, जीवन निर्माण की बातें सुनें। इस प्रकार वह प्रेरणा करता है और उसकी प्ररणा ... वह कितना ही अपने काय मे व्यस्त ... वह ... पर पहुचता है कि वह व्यक्ति ठीक ... मुझे

निकाल लेना चाहिए। इस तरह वह निणय लेकर चल पडता है और जब चलता है तो रास्ते म वहुत ट्रैफिक है उस ट्रैफिक के बीच म स होकर आता है लेकिन अपने आपको अखण्ड लेकर आता है कहीं ऐक्सीडेन्ट नही होता कही टकराव नही और लाल भवन म प्रवेश करता हुआ सीधा नही आता नीचे टेडी मेडी नाल है लेकिन कही दीवार स टकराता है ? नही। चाहे अंधेरा क्या न हो लेकिन एकाएक टकराता नही। तो बन्धुओ विचार यह करना है कि इस प्रकार काय करने की निर्णायक ,शक्ति किस म है ? वह जिसम है वह आत्मा है और वह निर्णायक तत्व है। उस कर्तृत्व को हर हालत म मानना पडगा। और कोई इन्सान कहे कि आत्मा कर्ता धर्ता कुछ नही है और यह जो कुछ होता है वह शरीर स होता है यह बोल रही है ता यह जिह्वा बोल रही है और आत्मा तो कुछ नही बोलती। मैं कभी कभी विचार करता हू कि कितन बचपने की सी वात है और कितनी असस्कारित वात है। आत्मा जब तक वनानिक शक्ति स बोलने का प्रयत्न नही करेगी ता बेचारी आत्मा हित जिह्वा क्या समझती है कि मुझ क्या शब्द बोलने हैं। वह ह्वा और मुह क्या समझता है कि वह कुछ सुल सके। वह ी समझता। उसम बोलने वाली चेतन्य कर्तृत्व शक्ति वाली मा है इ,लिए आत्मा के अन्दर कर्तृत्व गुण है। शरीर के माध्यम ी खाना खाते हैं यद्यपि खाना शरीर के अन्दर आ रहा है न खाने का जो व्यवस्थित क्रिया है वह आत्मा की है और खाने तृत्व भी आत्मा के साथ है। कोई बिना आत्मा के कर्तृत्व के तो जहर सामन रख दो उसको वह जहर का ज्ञान कौन है। यह खट्टा है मीठा है। मुझे मीठा खाना है खट्टा नहा, का विज्ञान कराने वाला कौन है ? क्या जिह्वा म ताकत य रहित जिह्वा कुछ भी ज्ञान की शक्ति …

जिह्वा के माध्यम से खट्टे और मीठे का आस्वा लने वाली और कतृ त्व भाग रखन वाली आत्मा है। आत्मा ही पहचानती है कि खट्टा है यह मीठा है, यह मेरे स्वयं क लिए हितप्रद है और यह अहितप्र है। इस प्रकार आपन यदि चैतन्य निर्णायक को नही समझा और प्रवाह म बहकर कह दिया कि नही साहब आत्मा तो शरीर के अन्दर रहती हुई कर्ता धर्ता कुछ नहा है जो कुछ करता है शरार करता है—तो य० बहुत अन्धकार की बात होगी। यह अनादिकाल से चले आए अज्ञान की बात होगी। उस वीतराग दव का वाणी नहीं कहा जाएगा इस प्रकार का प्रतिपादन निर्णायक स्वरूप को नहीं समझने का प्रतिफल है। इस जीवन के प्रश्न को हल नही करने का ही परिणाम है वह इस प्रकार सोचता है।

तो बन्धुओ मैं आपके सामने कतृ त्व और भोक्तृत्व शक्ति की बात कह रहा था - जो करता है वही भोक्ता है करने वाला और भोगने वाला एक है और वही अपने कर्मों का निर्माण करता है इसलिए भगवान ने उत्तराध्ययन सूत्र म स्पष्ट उद्घोषणा की है कि

अप्पा कत्ता विकत्ताय दुहाणाय सुहाणय।

आत्मा ही अपने सुखदुख का कर्ता है। जो पाप कम का बन्धन करता ह वह उसका प्रतिफल भोगता है और जो अच्छी प्रवृत्ति करता है वह धम के माग पर चलकर निजरा करक आत्मशुद्धि करता ह। इस दृष्टिकोण से आपको और हमको ठीक तरह से चिन्तन करना है। यह मनुष्य जन्म बारबार मिलने वाला नही है। वतमान का जीवन केवल मशीन की तरह बरबाद करने का नहीं है। वतमान जीवन म रहता हुआ आदमी अपने वर्तमान जीवन के स्वरूप को समझे। इसके साथ ही आगे का विशेषण आपके सामने आने वाला है वह मैं समय आने पर ही कहूगा।

उपादान और निमित्त

मैं यह कह रहा हू कि इस सिद्धान्त को मनुष्य समझ लेता है तो

अधकार स परे हो जाता है। जो यह समझत है कि हमारा कि
क्या हो सकता है जो कुछ होता है वह तो उसके अधीन है, दूस
ही करने वाला है कोई दूसरा ही नचाने वाला है और हम त
कठपुतली की तरह नाचने वाले हैं हमारा किया कुछ नही होता।
कभी कभी तो हम यहा तक पहुच जाते हैं कि यह सब कुछ कराने
वाला भगवान है। कितनी बडी बात कह दी। भगवान कराने वाला
है तो भगवान विमल है कि मल सहित है? जो रागद्वषरहित है
वह यह सब कराता है तो ईश्वर इस आत्मा को रागद्वेप म क्या
गिराता है। मलिन करने के लिए क्यो पाप कम करवाता है क्यो
नास्तिक कम करवाता ह—ऐस अनक प्रश्न आकर सामने खडे हो
जायेंग जिनका कि समाधान नही हो पायेगा। और वस्तुत जहा
विचित्र ढग से सोचा जाता ह वहा समाधान नही हो पाता है इसलिए
वह ईश्वर तो सदा तटस्थ अपने स्वरुप के अन्दर तल्लीन हैं और
वह विमल ह। हमने उस विमलता का आदश सामने रखा कतृत्व
शक्ति को अपनी समझ कर अच्छा करते हैं तो उसका अच्छा फल
भोगेंगे और पाप कम करेंगे तो बुरा फल भोगेंगे क्याकि आत्मा म
कर्तृत्व शक्ति है। यह सब ग्यक्तिया के साथ रही हुई ह इस भावना
का लेकर इसान को अपने जीवन का चितन करना चाहिए और
इसके साथ ही साथ यह भी चितन करना चाहिए कि हम अपनी
शक्ति के अनुसार अपना तो निर्माण करते ही हैं लेकिन साथ ही
पडोसियो का निर्माण भी कर सकते हैं, कुछ सामाजिक सस्थाओ
का भी निर्माण करन म निमित्त बन सकते हैं। उसम निमित्त के
रूप म भी कर्तृत्व हमारे सामने आ सकता है। जसा कुम्भकार
घडा बनाता है। घडा बनाने के दो मुख्य कारण हैं एक तो उपादान
और एक निमित्त। उपादान का तात्पय यह है कि जो काय रूप म
परिणत हो जाय। मिट्टी का ढला मिट्टी के ढले क स्वरूप को

ोडकर घडे का रूप धारण कर लेता है इसलिए घडे का उपादान
ाय मिटटी का ढेला है। लेकिन वह मिट्टी का ढेला स्वत घडे
ः रूप म परिणत नही होता उसन योग्यता रहने पर भी योग्य
तत्व के बिना व्यवस्थित कर्ता के बिना, विधानवान कर्ता के
बिना वह मिटटी का ढला घड का सुदर रूप धारण नही कर सकता
अत वह कुम्भकार उसका निमित्त है, कर्ता है। निमित्त कर्ता काय
का सम्पादन करके अपने आपको अलग रखता है वह काय रूप
मे परिणत नहा होता उसम व्यवस्थित विधान की क्रिया होती है।
कुम्भकार घडे का निर्माण करता है लेकिन घडे को बनाकर उसको
सुदर आकार देकर अपने आपको वह सुरक्षित रखता है इसलिए
कुम्भकार को निमित्तकर्ता माना गया। कर्ता दोना आ रह हैं।

किन्तु निमित्त कता के बिना भी घडा नही बनता और उपादान
शक्ति के बिना भी नही बनता। दोना का समन्वय होता है तभी
घडा बनता है। पर फिर भी निमित्त और उपादान दोनों ही सब
कुछ नही हैं। इसम सहकारी कारण सामग्री भी रही हुई है। कुम्भ
कार कितना ही कलाकार और चतुर हो पर उसके पास अगर
चाक न हो उस चाक को घुमाने वाली डडी न हो और वहा उस
घडे को घडने की प्रक्रिया के अन्य साधन न हो तो कुम्भकार भी
घडे का निर्माण नही कर सकता और इसलिए उपादान और निमित्त
के साथ सम्पूण सहकारी कारण सामग्री का होना भी आवश्यक है।
उपादान शक्ति प्रत्येक आत्मा मे है और निमित्त शक्ति सन्तजन,
माता पिता आदि के रूप मे आती है। सन्ता के चरणा म बठकर
मानव अपनी उपादान शक्ति का उपयोग करके अपनी आत्मा को
उनके निमित्त मे ऊपर उठा सकता है और उसमे कुछ प्रगति कर
सकता है पर साथ ही सम्पूण कार्य कारण सामग्री का होना भी
आवश्यक है, तभी वह अपनी प्रगति के सभी साधन जुटा सकता है।

ध्यान से तक की भी कमी रह जाने तो लक्ष्य प्राप्ति में अपूर्णता रह सकती है। बाधा आ सकती है।

मैं अभी इस विषय की अधिक गहराई में नहीं ले जा रहा हूं। कभी प्रसंग आ गया तो खुलकर चर्चा करने का विचार है। यहां तो कुछ थोड़ी सी मर्यादा का निर्देश करके आगे बढ़ना चाहता हूं।

जैसे जन-समुदाय के लिये निमित्त कर्ता बनकर जीवन निर्माण की स्थिति का कार्य करते हैं, चरित्र निर्माण की भावना उत्पन्न करते हैं, उपादान शक्ति को भी विकसित करने का शक्ति भर प्रयास करते हैं और उसे निमित्त रूप में उपस्थित होकर कार्य कर जाते हैं। वैसे ही संघ के अभाव में जो परिवार के मुखिया हैं उन पर परिवार के निर्माण का दायित्व है। सन्तान की स्थिति को सुसंस्कार के रूप में परिणत करने में निमित्त कारण उसके परिवार के अन्दर रहने वाले सदस्य अथवा परिवार का मुखिया बनता है। आप दृष्टान्त रूप में समझिये कि घर के अन्दर रहने वाली माता अपनी सन्तान को सुसंस्कारित बनाने में कुम्भकार की तरह निमित्त कर्ता बन सकती है। लेकिन किसकी ?

सन्तान की।

पर सन्तान कैसी हो। उस घर में जन्म लेने वाला पुत्र सुशील हो, चारित्र सम्पन्न हो और वह अपने जीवन को सुन्दर तरीके से निर्माण करने वाला साबित हो इस भावना से यदि माता या पिता अपनी स्थिति से कुछ कार्य करें तो सन्तान का बहुत कुछ उपकार कर सकते हैं और यदि माता पिता लापरवाह रहें तो यह काम किसी सीमा तक नहीं हो पावेगा। सन्तान को जन्म दे देना एक बात है पर उसको पढ़ा लिखाकर सुन्दर तरीके से उसका जीवन निर्माण कर देना दूसरी बात है।

मैं आपके सामने जो एक विशिष्ट पुरुष का चरित्र रखना चाह रहा हूं उस विशिष्ट पुरुष के जीवन का निर्माण करने वाला कौन

था ? यद्यपि उपादान शक्ति जो आत्मा म थी, पर निमित्त मे रूप मे माता पिता भी वसे मिले इसका रूपक थोडा दिया जा रहा है—

मन के विचार और स्वप्न

कल महाराज और महारानी का वणन कर गया था वहा वसन्तसेना नाम की महारानी, राजा की महारानी ही नही जीवन की भी महारानी थी। जो जीवन की महारानी हो उसकी अलौकिकता कुछ और ही होती है। जो अपने जीवन मे उतम सस्कारो का सग्रह करती है जो अपन जीवन को सुन्दर तरीके से आध्यात्मिक जीवन के साथ जोडती है, जिन्होंने सुन्दर तरीके से निणय लिया है और जो यह सोचते हैं कि मर जीवन स जितनों का भला हो सकता हो मुझे करना चाहिये। मरा जावन इस दुनिया के सामने आदश रूप म रहे। मैं नारी जाति म रहती हुई भी नारी जाति की शिरा मणि भूषण के रूप मे स्थापित होऊ इस प्रकार की भावना जिस महाराणी म जागत हुई वह वस्तुत इस ससार के लिए बहुत बडी सौभाग्यशाली है। ससार की शोभा बढाने वाली है। महारानी वसन्तसेना जीवन म वसे ही सस्कारा को लेकर चलती थी वह धम करणी म तल्लीन रहती थी। २४ घटो म कुछ घट धम कार्यों म लगाया करती थी। पास पडोस वाली बहिनों को बुलाकर धार्मिक सस्कार देने म पीछे नही रहती थी। नतिक जीवन के निर्माण करन मे कितना योगदान करती थी इसका वणन कथा के प्रसग स लम्बा चौडा है। पर सक्षेप मे सोचिये कि वह महलों म रहने वाली और वभव मे पलने वाली रानी भी अपने पास-पडौस को और गावा म रहने वाला महिलाओ अन्य व्यक्तियों को भी प्रभावित कर गयी थी। उसकी इस उदार वृत्ति के कारण यह महारानी बडी दयालु है इसका धार्मिक जीवन जन जन के सम्पक मे किस प्रकार आ रहा है। वह सारी जनता की भाग्य विधाता के रूप मैं पाट अदा

कर रही है। जन जन के मुँह से शब्द निकल रहे थे।

वह पवित्र जीवन लेकर चलने वाली महारानी। उसे स्वप्नों का अधिक प्रसग नही आता। शाति के साथ जीवन यापन करती है। अधिक काय म भी व्यवस्थित रूप से चल रही है। एक दिन की बात है वह शय्या पर सोई हुई थी। उसने एक दिव्य स्वप्न देखा। उस स्वप्न म देखा कि एक दिव्य सरोवर जिसम निमल पानी भरा हुआ है उसम और भी बहुत से कमल खिलकर महक रहे हैं। कमलो के अन्दर से सुन्दर पराग बिखर रहा है और चारों ओर सुगन्धि फल रही है। तो उसने रात्रि को इस प्रकार का स्वप्न देखा। महारानी स्वप्न को देखते ही जगी और सोचने लगी कि मुझे महसा कोई स्वप्न नही आता, लेकिन आज जो अचानक स्वप्न बना है यह किसी न किसी बात की सूचना देने वाला है और मुझे इस स्वप्न का सुन्दर तरीके से चिन्तन करना है। जिन भाई और बहिनो को बहुत स्वप्न आते हैं जिनकी कि गिनती नही रहती उनके स्वप्न साथक नही होते। प्राय वे सब मानसिक कल्पनाओ के रूप मे होते हैं। उनके स्वप्नो की स्थिति सामान्य पदार्थों की बनती है।

वसे स्वप्न की धारा मानसिक विचारो के साथ है। मन के अन्दर जो कुछ देखकर सस्कार डाले गये हैं और जिन पदार्थों को ग्रहण करना चाहते हैं उनकी पूर्ति नही हुई, और उनकी चिन्ता लेकर सो गये तो रात्रि म उसी का स्वप्न देखने म आ जावेगा। अथवा वह कही स कुछ सुन लेता है कुछ देख लेता है या सूघ लेता है कुछ चख लेता है या कुछ स्पश कर लेता है या अनुभव करता है तो उसका भी मिला जुला स्वप्न बन जाता है और उसी म रातभर भ्रमण करता रहेगा और जिनका दिन इतने तुच्छ स्वार्थों में तल्लीन होता है उनको तो दिन म बठे बठे ही स्वप्न आ जाया करते हैं।

सन्त लोग कभी कभी कुछ बोल दिया करते हैं और मैंने भी एक बात इसी तरह की सुनी है। एक श्रावक जो सामायिक म बठ

थे और व्याख्यान श्रवण कर रहे थे। व्याख्यान श्रवण करते-करते उनको नीद आ गई। वमस्था मे यह होना स्वाभाविक भी है क्योकि दिन भर दिमाग थका हुआ रहता है उस यहा विश्रान्ति मिलती है।

या तो कोई मन को आह्लादित करने वाला विषय होता है या मनोरजन का विषय होता है तो थोडा सावधान हो जाते हैं नही तो फिर सुस्ती आ जाती है या नीद आती है। कुछ देर तक तो सुनते हैं लेकिन फिर मस्तिष्क थक जाता है तो विश्राति लेने की स्थिति बनती है। तो वह भाई साहब रात दिन स्वार्थ के अन्दर तल्लीन रहकर दुकान से उठकर आये ही थे और सामायिक के अन्दर बठे थे और बठे बठे उन्होंने स्वप्न देख लिया उसी तद्रा म। स्वप्न देखते देखते वह झट से अपनी मुख वस्त्रिका को लेकर फाडते हैं और कहते हैं कि लो लो ले जाओ ४ आने म ले जाओ। यह क्या था? स्वप्न म उन्होंने देखा कि ग्राहक आया है इन्होने अधिक पसा, ८ आना मागा और ग्राहक ने कहा कि मैं तो ४ आने ही दूँगा और उसी स्वप्न मे निणय लिया कि ले जा ४ आने मे ही ले जा। इस तरह वह मुँह पत्ती को उठाकर फाडकर उसके हाथ मे दे देता है। जब वह जागता है तो चौंकता है। निद्रा भग हुई तो देखा कि मैं तो व्याख्यान म बठा हू और स्वप्न मे व्यापार कर रहा हू। तो इसप्रकार के स्वप्न जिसको आते हैं उसका मन विमल नही होता, मलयुक्त होता है आत्मा के अन्दर ऐसी स्थिति बनती है लेकिन जिन व्यक्तियो की मलरहित स्थिति बनती है वे या तो ऐसे स्वप्न नहीं देखते और देखते भी हैं तो उनका कुछ न कुछ फल अवश्य होता है।

महारानी को रात्रि के अन्दर जो स्वप्न आया उसका देखकर वह विचार करने लगी

उस सुन्दर स्वप्न में कमलो से भरा हुआ सरोवर देखकर महारानी हर्ष विभोर हो गयी और बठकर चिन्तन करने लगी। ऐसा

जो मध्य स्वप्न आया है यह मुझे आज क्या संकेत दे रहा है, कौन सी बात का पता देने वाला है ? वह चिन्ता करने लगी कि जो उत्तम स्वप्न आते हैं वे कुछ न कुछ लाभदायक होते हैं। इस भावना में महारानी विविध कल्पना करने लगी और अनुमान लगाया कि सम्भव है कि मुझे ऐसा स्वप्न आया तो मेरी कोख में कोई उत्तम पुरुष आ सकता है क्योंकि जब कभी उत्तम पुरुष के आने का प्रसंग आता है तो ऐसा स्वप्न आता है। इस प्रकार महारानी भी स्वप्न का चिन्तन करके कुछ अनुमान लगा पाई। लेकिन यह सोचा कि जो मुझे स्वप्न आया है इसका मैं स्वयं ही निर्णय न करके अपने प्राणनाथ जो मेरे पतिदेव हैं उनके सामने भी इसका वर्णन करूँ और उनके मुखारविन्दु से भी इस स्वप्न का अर्थ समझूँ। इसी भावना को लेकर उसने सोचा मेरे पतिदेव की शय्या पास के कमरे में है। मैं पतिदेव के चरणों में पहुँचकर इस स्वप्न का सारा वृतान्त उनसे कहूँ। प्राचीन काल के अन्दर रहने वाले मनुष्यों की एक आचार संहिता होती थी। गृहस्थ अवस्था में रहने वाले जो पुरुष अपने जीवन को चरित्रनिष्ठा के साथ रखना चाहते हैं वे विषय वासना के कीड़े नहीं होते। उनका शयन कक्ष भी अलग अलग होता था। पति के सोने का कमरा अलग और पत्नि के सोने का कमरा अलग। वे उस दृष्टि से दोनों विभक्त थे। जब वह वहाँ से उठी और पतिदेव के कमरे में योग्य समय पर पहुँची जिस समय कि पति की निद्रा प्रायः समाप्त हो चुकी थी कुछ थोड़ा सा आलस्य अवश्य था। जैसे ही इसके पैरों की आहट हुई तो महाराजा जाग गये। आँख खोलकर देखते हैं तो महारानी जी नजदीक खड़ी हैं, कहा, महारानी अभी इस समय आपका यहाँ आगमन कैसे ? नाथ ! आज मैं आपके सामने कुछ प्रश्न लेकर उपस्थित हुई हूँ। कहा, कौन सा प्रश्न है ? झट से उनको समीप में सिंहासन दिया। महारानी बैठी और

बठने क बाद महाराजा पूछने लगे ऐसा कौन सा प्रश्न है आप रखिये आपके प्रश्न का समाधान म यथाशक्ति करूँगा। दखिये दाम्पत्य जीवन का पारस्परिक सहयोग। जीवन म कोई समस्या उत्पन्न होजाये तो एक दूसरे के सामने रखने से उनका समाधान हो सकता है। महारानी ने अपना सारा वतान्त कह सुनाया कि रात्रि क समय इस प्रकार का मुझे स्वप्न आया व महाराजा उस स्वप्न के वृतान्त को सुनकर —

> हर्षित होकर वे भी बोले सुनकर प्रिये इस बार,
> कुल भूषण कुल दीपक हों पुत्र रत्न हितकार।
> निज

महाराजा भी स्वप्नशास्त्र के कुछ ज्ञाता थे और उन्होंने महारानी के सारे वतान्त को सुनकर महारानी की दिनचर्या के अनुपात स उन्होंने कल्पना की कि महारानी जसा तुम्हारा चरित्र सम्पन्न जीवन है और तुम्हारा जितनी कोमल भावना है और जिस प्रकार तुम परोपकार के अन्दर तल्लीन हो रहा हो उसस ऐसा आभास होता है कि तुम्हारी कुक्षि म कोई न कोई पुत्र रत्न की प्राप्ति होने वाली है। यह सरोवर का स्वप्न और उसके साथ ऐसे कमल खिल हुए और उनम सुगन्धि आ रही थी मानो यह तुम्हार पुत्र प्राप्ति की पहल स सूचना है। सरोवर कसा गम्भीर होता है उस सरोवर के अन्दर कोई पत्थर फेंकता है तो उसके बदले पानी उछलता ह पत्थर के बदले म पत्थर नहीं आता ह इसी तरह से तुम्हारी कुक्षि के अन्दर से एसा पुरुष आने वाला ह जो दुनिया में सरोवर की तरह गम्भीर बन कर पत्थर फेंकने वाले पर भी बदले म पानी का छांटा ने वाला होगा पत्थर के बदले पत्थर फेंकने

सकता है। जसे सरोवर के अन्दर कमल खिले हुए थे उसी तरह से तुम्हारे पुत्र के जीवन मे आन्तरिक कमल खिलेगे, उससे गुणो की सुगन्धि फलेगी। उन्होने कहा कि मैंने जितना श्रवण कर रखा है जितनी शिक्षा पाई है उतनी आपके सामने रख रहा हूँ। आपने स्वप्न देखने के बाद निद्रा ली या नही ?

नाथ ? मैंने तो कुछ भी निद्रा नही ली। उसी समय मैं धर्म चिन्तन म बठ गई।

बहुत अच्छा। उत्तम स्वप्न के बाद निद्रा नही लेनी चाहिए। नही तो, उसका फल मारा जाता है। तुमने उत्तम स्वप्न आने के बाद मन म बुरा सकल्प तो नहीं किया ?

नही नाथ इतना तो मैं जानती हूँ फिर खोटा सकल्प क्या करती। मैं भी कुछ अनुमान लगा रही थी। पर अब आपके चरणो को पाकर धन्य हो गई। आपने इसका अर्थ विस्तार से बतलाया है। आपकी सभी बातो को मैं हृदयगम करती हूँ और विश्वास करके अपने जीवन की स्थिति का शान्त रखने का विचार करती हूँ।

'महारानी तुम्हारी कुक्षी से जन्म लने वाला कुल भूषण होगा, कुल की शोभा बढाने वाला होगा। यद्यपि पुत्र मे उपादान शक्ति तो अपनी है पर निमित्त कर्ता के रूप म तुम बनोगी अत तुम्हारा जीवन जितना निर्मल होगा उतनी ही गर्भस्थित तुम्हारी सन्तान निर्मलता की तरफ बढती जावेगी इसलिए तुम यह प्रयास करो कि तुम्हारा जीवन निर्मल से निर्मलतर बनता जावे और उस प्रयास के द्वारा तुम अपनी सन्तान के जीवन को भी सुसस्कारित बना सको।

इस चारित्र भाग से हमें भी कुछ सीखना है। इसीविषय की पूर्ति के लिए विमलनाथ की प्रार्थना चल रही है—

विमल जिनेश्वर सेविए

आप इनके आधार पर अपने जीवन के कर्तव्यों को समझकर अपना क्रियात्मक उपादान और निमित्त शक्ति को समझने का प्रयास करेंगे तो हमारा जीवन धीरे धीरे निर्मलता की तरफ बढ़ता जावेगा। इस निर्मलता की तरफ बढ़ते हुए आप भी विमलनाथ की तरह बन सकते हैं।

लाल भवन
२१ जुलाई ७२

●●